

कहानी-कला

की

आधार शिलाएँ

दुर्गाशंकर मि

४५०

★
प्रधाराष्ट्र—

नवयुग ग्रन्थागार

सी-७४७ महानगर
लखनऊ

★

प्रथमावृत्ति

अक्टूबर १९४८

★

© मयाधिकार
क्षेत्र द्वारा सुरक्षित

★

मृग्य

चार रूप्य

★

गमा प्रेम

प्रतीतिवार अगस्त १९४८ ।

बहुमुखी प्रतिभा-सम्पन्न सुपरिचित साहित्यकार

भाई

डॉ० प्रभाकर माचवे

को

समर्पण

नागपुर निवास की उक्त मधुर स्मृतियों के उद्गायन में जबकि प्रायः काम पीठे-सीते
हो विभिन्न साहित्यिक समस्याओं पर चर्चासिद्धि प्राप्त जाया था

और

१९६१ ई. में प्रकाश की आनंदीय व मध्य लेखक की प्रस्तुत पुस्तक के निबन्ध
की प्रस्ताव है

क्यों, क्या और कैसे ?

यद्यपि एक स्वप्न पर हम पंक्तिओं के संग्रह न यह स्वीकार किया है कि अनृष्टि ही ज्ञान की उत्पत्ति में सहायक भिन्न होता है और गुप्त हृदय कभी भी पूर्ण उत्थान का आनन्द प्राप्त नहीं कर पाता कारण कि नृष्टि के पंचमन्दका विकास-व्यपार अज्ञान होन वाले पक्षों में निविभटा भा जाने का पुनः मनापना रहनी है परन्तु इस दुष्कर का प्रकाशित रूप न देखकर मुझ परमो बार बहुत कृप्य बला में मत्ताप हो गया है क्योंकि इसमें मेरा आत्म-व्यपार प्रथम बार उभर कर मे प्रस्तुत हो गया है जिस रूप में कि मैं उसे प्रस्तुत करना चाहता था। या ता यह मेरी मन्त्रप्रथम वृत्ति नहीं है और विपत्त केरु बयों में अनकानेक गद्य पद्य कथनाओं का माप-माप परि में उन मापारण लपकाय परीक्षापयोगी पुस्तकों को तादिका में अमल कर दूँ ता यह मेरी दक्षी आत्म-व्यपारमक पुस्तक अक्षरम बनी या मरती है। विना ज्ञाना गभी मत्ताना न अक्षरम प्रम करता है और इसी प्रकार गद्य के हृदय में भी ज्ञानो मभी वृत्तियों के प्रति स्वाभाविक हा प्रम रहना चाहिए परन्तु मैं ज्ञानो अभी तक प्रकाशित मभी पुस्तकों का उम रनह वृष्टि में दर्शित न दग मका व कि के उम का म प्रस्तुत ही नहीं हूँ किम का म उम प्रस्तुत हुना चाहिए था। परन्तु अभी तक प्रकाशित वृत्तियों में मैं अधिकांश पुस्तकें इस पुस्तक के प्रकाशक के यहाँ में ही प्रकाशित हुई हैं और ऐगक तथा प्रकाशक के मध्य हृदया मात मो मीन की दूरी का अंतर रहा है अतः लक्षक का कभी यह जानने का गोचरम्य ही न प्राप्त हा गया कि आगिर उनही पुस्तक किम का में आ रही है। यहाँ में यह भी लक्ष्य कर देना उचित समझता हूँ कि इस पुस्तक का प्रकाशक भी सचकर निवागे मेरे भक्तिपरिचय की आत्मविभाग की पाठ्य क विनी दूर के आश्रीय रिधने में आकरे हाने है और इस प्रकार के अरे भी आकरे हुए केटि दिम उनमें किमो भी प्रकार का पुन परिवय या सम्बाध नहीं था अतः मैं इस लक्ष्य में पुनः अनधिकृत का था कि उन्हें प्रकाशक-मन्त्रार्थी आक्षरम आशकारी है भी या नहीं। अतः अनधिकृतता के कारण इसका परिणाम यही हुआ कि मने उरतनाम प्रकाशित करने वाली प्रकाशक मन्त्रा में अब आलोचनामक पुस्तकें प्रकाशित का तब का उम न तो मुझ का म प्रकाशित ही कर नहीं और न उम का रंभी बाध मरगा ही अतः का मभी या कि उनके गिरा आरग आररररर की। ही विमल मन्त्र हिम पक्षरम गुर प्रभा और मूरररर मका गिरी बलिना कुछ विचार लामर पुनः का न का-रर को लक्ष्य मुन प्रकाशक मन्त्र

दृष्टा गया कि उनके प्रकाशकों ने अपनी प्रजासत्तिका का परिचय अपने माध्यम से प्रकाश किया है। इन प्रकार 'बहुमो-जना की आचार विचार की देणकर मूल हमारे विचार हों हो रहा है कि प्रथम बार उक्त तरयुग संवागार में कोई पुस्तक इन रूप में प्रकाशित हो गयी है। अपने ही दृग वाक का ध्ये भी विचारो की को न मिलकर मेरे दिव भी निरम भी प्रकाश तथा समा प्रम के श्रम कर्मचारियों को प्राप्त हो जिनके माध्यम से मैं इसे इन रूप में प्रस्तुत कर रहा।

जैसा कि नाम लक्ष्य विषय सूची में स्पष्ट हो जाता है प्रस्तुत पुस्तक में बहुमो के मित्राभा का मादाहरण विवेचन किया गया है। या ता अब हिन्दी में सञ्जातिक मधोभा गम्भीर प्रया की अधिकता भी हो गई है परन्तु के समी मुक्त समीसारमय वाटि में नही आन और अधिकता प्रथो य ता उन कृतियों की संख्या बहुत ही गून है। जिनमें कि माहित्य व जिनो का विवेचन का ही विमर सञ्जातिक निरूपण किया गया है। उदाहरणार्थ बहानी व गम्भीर में अब हम विचार करम लेते हैं उन हम यह देणकर निराण होता पड़ता है कि हिन्दी के उमक तरवों के माध्यम में गम्भीर प्रकाश सामन बानी पुस्तक का निरा अभास ना है। इनके विरुद्ध पाठ्यालय माहित्य में बहानी के मित्राभा क माध्यम में अनेक प्रय विग यण है और अभी भी विम जा रहे हैं। जो पुस्तकें हिन्दी में इन माध्यम में प्रकाशित भी हुई हैं उनमें केवल भी विना-विचार व्यास की बहानी बनी और डॉ० अमराय प्रकाश वर्मा की 'बहुमो का रचना-विधान' ही उल्लेखनीय है लेकिन इन दोनों कृतियों में पाठकों का पूर्ण समाप नहीं हो पाया। 'बहानी बनी' का अर्थव्यय लय आकार की पुस्तक है और बहु उम समय प्रकाशित हुई या जबकि हिन्दी बहानियों का विधान हो रहा था अत उममें न तो क्या के सभी तरवों का माध्यम निरूपण ही हो सका और न उन सभी मित्राभों पर ही प्रकाश हाया गया जिनमें कि हमारी बहानी अनुसन्धित हो रही है। इनके विरुद्ध 'बहानी का रचना विधान' एक महत्त्व कृति है और उमके प्रथम डॉ० अमरायप्रकाश वर्मा ने बड़े ही गुणाएँ हुए रूप में बहानी के मित्राभों का विवेचन-निरूपण किया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि बानी हिन्दू विरुद्धविचारमय क हिन्दी विचार में रीति का न सृष्टिजन करने का नतीजा की को आयाचना गम्भीर भारतीय एक वाचार्थ दर्शो का अर्थव्यय सामा लक्ष्य अर्थव्यय है और उमका विचारनीयता एक कृति में यह एक एक लक्ष्य भी उनी है लेकिन वर्मा की गुण इन बहुत गाय का विधानों के विचार करने कि उनीय भी बहानी पुस्तक में बहुत से विषय अपुन हो पाए रहे हैं। 'बहानी का रचना विधान' में बहानी के सभी तरवों का विचार विवेचन नहीं किया गया और न ही बहानियों में क्या अपने बानी कृतिय नाम विचारमयों का ही उल्लेख किया गया है। अतएव उममें जो क्या और धन धन (विचारमय) द्वारा पुस्तक की बहानी-विचार विचार के कारण ही क्या कहा है अर्थव्यय विचारमय लक्ष्यार्थ वर्मा की उम वर का न उम न की क्या गुण गुण विचार है कि के विचार लक्ष्यम में अर्थव्यय कृति का और भी अधिक गुण बहाने का उल्लेख करत। इन उदाहरण बहानी बनी के

सम्बन्ध में एक ऐसी विपदा सैद्धांतिक पुस्तक की आवश्यकता अभी भी महसूस की जा रही थी जिसमें कि कहानी के सिद्धांतों का विस्तृत विश्लेषण किया गया हो और इसी अभाव के मध्य इस प्रस्तुत कृति को प्रकाशित किया है।

मेरी यह पुस्तक कहानी-कला की आधार सिद्धांतें भगवत पौने दो सौ पृष्ठों की है जिसमें कि कहानी का स्वरूप कहानी का रूपान्तरण और उसकी विशिष्टताएं, कहानियों में पात्र और चरित्र-चित्रण कहानी में संक्षेपकथन कहानी में रस-काम तथा बातावरण कहानी की भाषा शैली और उसकी विविध प्रकृतियाँ तथा कहानी का उद्देश्य नामक सारा सम्प्रदाय है। यहाँ अपनी इस पुस्तक के सम्बन्ध में मैं कुछ भी कहना उचित नहीं समझता और यह कार्य तो उन पाठकों तथा विचारकों का ही है जो कि इनका अनुशीलन करते हैं कि इस पुस्तक में अब क्या कह सकता हूँ कि मैंने आपके एवं अणु-विचारों में अपनी पुस्तक को बनाने का भरपूर प्रयास किया है और साथ ही कहानियों के आवश्यक उदाहरण देते समय वहीं से तबोत उदाहरण प्रस्तुत किए हैं जिसमें कि पाठकों का कभी भी मीमांसा विच्छेदण न प्रतीत हो। अपने प्रयास की पूर्ण सफलता असफलता या आंशिक सफलता असफलता का निर्णय मैं अब इसके पाठकों एवं विचारकों पर ही छोड़ रहा हूँ लेकिन यह यह निवेदन कर देना भी उचित समझता हूँ कि इस पुस्तक के लेखन और प्रकाशन की मैं एक कहानी हूँ जिसमें परिचित हुए बिना इस सम्बन्ध में कोई निश्चय करना उचित न होगा।

आज मे चार-पाँच बरस पूरे स्वर्गीय प्रा० मुनीमा अबस्सी एम० ए० दास्ती के जय महाविद्यालय के एक माहिरीयक समारोह में कहानी की कला के सम्बन्ध में कुछ कहने के लिए मुझे आमंत्रित किया था और उनके इस अनुरोध को स्वीकार कर मैंने एक विस्तृत भाषण उन समारोह में दिया जो कि बानांतर में पत्र-पत्रिकाओं में लेख्यमात्रा के रूप में प्रकाशित हो चुका। मैंने बिना उक्त भाषण को (जिसमें कि बाद में निबंध का रूप धारण कर लिया था) अपने निबंध 'निबंध की शैली' में संशुद्ध कर देना था परन्तु 'अनुसूचि और अध्ययन' के पत्रकारों ने किसी निबंध 'अवह' का प्रकाशित होना न तो मान्य ही न किन पाठकों को उक्त निबंध उन्नी के रूप में पढ़ा रहा। कुछ समय पत्रकारों ने मेरे एक दिन माई प्रकाशक की पाखरे में—जो कि उन दिनों आम दरिया में ही स्थित था—परिचय कर बाताचार करण समय अभावक मुझे उक्त निबंध के पुस्तक का बन दे देने की दवादा हुई और उन प्रकार समयग पाहू बीस दिना के समय परिचय के पत्रकार कहानी-कला की आधार सिद्धांतें अनेक प्रथम रूप में तैयार हो गईं। उन प्रथम रूप की प्रतिवृत्ति उत्पन्न करते समय मुझे माई प्रकाशक दुबन और उन अनुसूचि गोपालक दुबन का आर्थिक सहायता मिली है अतः उन दोनों बंधुओं के प्रति मैं यहाँ हृदय में आभारी हूँ।

भी गृह थी । समय बीतता गया और वास्तविक तैयार हो जाने पर भी कृत्रिम उपायों के कारण उन प्रकाशित करवाने की ओर देखा गया नहीं गया । कामाक्षी में मन् २६, २७ में भाई विनोद दासों ने जो कि मेरी पुस्तक 'हिन्दी पंचरत्न के प्रकाशक हैं और विद्वान्, बहुत ही कम आयु में प्रकाशित सम्बन्धी अच्छी गाड़ी घोषणा प्राप्त कर पा है । अपनी प्रकाशित मरवा भारतीय प्रथमान्त सततक में कहानी कला की आधार विनाए वा प्रकाशित करने की इच्छा प्रकट की और मुझसे मौखिक स्वीकृति भी प्राप्त कर ली । उन्होंने प्रकाशक समाचार एवं लिखी प्रकाशक में हमकी सुधता भी भय ही मेदिन उन पुस्तक उन्हें प्रकाशनायक न ही जा सती । एक ओर तो उन्हें मेरी जाने किस्कर न मय रही थी और दूसरी ओर मेरे एक प्रकाशक सङ्घोष में जो कि मुझ पर 'हाथी होना जात न तथा कितना विडम्बण यह रहा है कि 'भद्र जहाँ जाती बहा' मुझी जानी है उनसे हृदय में मेरे सम्बन्ध में बहुत ही अति धारणाएँ पदा कर हीं । फलत यह पुस्तक विधायनी कम्पनी ग्री और मरवा एक नाम यह हुआ कि मैंने इस पुन संशोधित एम् परिवर्द्धित जाता जाता । समय की कमी निरन्तर संस्करणता एवं प्राप्याप्तकोप जीवक की भीरमनाई के मध्य उमरा संशोधन की मरवा काय मरी वा और इगीनाए उमे परिवर्द्धित एवं संशोधित करने में काफी समय लभ जाने पर भी बहुत ही काने एगो गृह गई विद्वान् विचारक उपाय देना जाता था । " "समय बीतता गया और मुझ भी दूसरे उपाय परंपरा का गा विद्वान् विनोद के कारण हमको आर प्याय देन का समय ही न मिला और जब उमरा २० में मैंने एम्बक का स्थायी निवास स्थापन बनाने का निश्चय किया तभी मैंने इसकी ओर भी ध्यान दे गया । बूकि इससे जोवनदायक के लिए आय बनने में काम भी करने पर लगे न तो मैंने जहाँ गृह का संभवता कुछ विचार ही पाया और न अपनी कुछ अपूर्वी वास्तुविदियों का ही पूर्ण कर गया और न इस पुस्तक की ही प्रतिनिधि तयार हो पाई । मुझ इस कर मय के लिए भी दावा किया जाय मेदिन इसमें बहुत कुछ लक्षणा है कि एम्बक की विद्वान् विनोद का अवसंभव बनाने का मुझ है और जहाँ यह कर व्यक्ति कितना अविश्वसनीय कुछ प्राप्त करने के लिए उद्युक्त हो उठता है उठता कर्म में लगे रहने की इच्छा उठी गयी हाँ । टीक इसके निरीक्षण कतिपय प्राप्त की विद्वान् अनुष्ण में बसना ला देनी है और वहाँ का व्यक्ति जीवित मुझा का निवासना ने बसने पर सर्वथा अपमान रचना वा, गा है । मेरे पास सुविचारक वगु ही मरीचक विषय है—विनोद प्रकृता एवं अनुभवक ही मेरे एम्बक की बनना स्थायी निवास बनाने का निश्चय किया और कितने उरर मरपोष एवं मेरे के बनने में बनना में बहुत दूर हम बननी में यह गया—अवसर आये एक ही बार जहाँ कि मैं 'कामाक्षी कला की आधार विनाए' की प्रतिनिधि तयार कर लया अनुष्ण इच्छाके के साथ भय ही बनानु प्रतिनिधि तयार बनना हो कर वा बन ही वा थी । इस विना उरर बन वा बनने के प्रथम बनाने में धार्मिक विचार मातृतीय है—वा कि मेरी मुझ उरर और एम्बक काकर कुछ के प्रकाशक है और विद्वान् विनोद उरर पुस्तक बनने में इस कारण का प्रकाशित विना है तथा कितने क्षयकारक काय बनने

की निपुणता के साथ-साथ अनुरं उत्साह एवं सपन भी है—इन पुस्तक के कठिनय बंधा को देख अपने मानवीय प्रकाशन सम्बन्ध से इसे प्रकाशित करो इच्छा प्रकट की। मैंने उन्हें स्वीकृति प्रदान करते हुए यह दावं भी जोड़ दी कि यदि वे अगस्त ५० तक इसके सम्बन्ध में कोई निश्चित समझौता कर लेंगे और इसे इसी वर्ष प्रकाशित हो जाने का विरवाम मुझ दिना देगे तब इस पुस्तक के प्रकाशन का सबसभ्य अधिकार उन्हें ही रहेगा परन्तु अत्यंत मर के साथ कहना पड़ता है कि उन्होंने मसल के अंत तक मुझे कोई सूचना नहीं दी। इधर भी रामेश्वर तिवारी ने मुझ इस बात के लिए पुन पुन बाध्य किया कि यह पुस्तक उन्हें ही प्रकाशनार्थ मिले और न चाहते हुए भी तथा हृदय में उनका प्रति सदाय रहते हुए मुझ यह पुस्तक उन्हें इसीलिए देनी पड़ी क्योंकि यदि मैं ऐसा न करता तो कदाचित प्रतिनिधि तयार करन तक इसका प्रकाशन की प्रतीक्षा करने में वर्षों सब जाते। यहाँ मैं इस बात को भी स्पष्ट कर देना उचित समझता हूँ कि अपनी कृतियों को प्रकाशित करवाने के लिए मुझम कभी भी कोई बिलोप उत्साह नहीं था और मैंने प्रकाशकों से संपर्क बढ़ाने के बभी सक्रिय प्रयास नहीं किए अतः या तो पुस्तकें बहुत दिनों तक पड़ी पड़ती रहीं या फिर त्रिमने मांगा उमे ही दे दी गयी। यदि मैं अन्य अधिकारण सगर्कों की मांति प्रकाशकों ग सम्पक स्थापित करता ता निश्चय ही बेरी कृतियां इगमे अधिक सुन्दर रूप में प्रकाशित होनीं और मुझ बहु शोभ न होना या कि अब उन्हें दण कर हो रहा है। इस प्रकार यह पुस्तक उनी प्रकाशक भगोदय के यहाँ में प्रकाशित हो रही है त्रिहूँ कि मैं कोई भी पुस्तक प्रकाशनाय न देना चाहता था लेकिन बुकि नपयुय संघामार को इसका केबन प्रथम मसहस्य प्रकाशित करन का ही अधिकार है अतः हृदय का पर्याप्त मतोप भी है। यहाँ मैं यह भी स्पष्ट कर हूँ कि ग्रिंट बाहर दन समय जब मैंन इन पुस्तक का अकामोचन किया तभी मुझ यह आशयक जान पडा कि गोप ही इस पुस्तक का एक दुमरा मगापिन और परिचरित मसहस्य तयार किया जाय त्रिमयं कि कतानो के निदागनों की चर्चा करन समय उहूँ ऐतिहासिक गृष्मूत्रि में भी परगा जाय ? भविष्य के पथं में क्या है यह टीर गीर नहीं पडा जा सकता अतः जब तक कि मैं ऊपरबर्तित रूप म इन पुस्तक का दुमरा मसहस्य न तयार कर हूँ तब तक मुझ इन पुस्तक में चौड़ा अतः मतोप नो करना हो चरेगा। जाना है पायक लक्ष्म विचारक इगे अपना कर मुझ इन बात के निण उन्माहित करेगे कि गोप ही इन पुस्तक का एक दुमरा मगापिन मसहस्य प्रकाशित करवाया जाय ।

दुर्गाशकर मिश्र

पारदीय पूर्णिया म २०१४ वि०

११४ गारंग मकर

मकनर

की निपुणता के साथ-साथ अनूबं उत्साह एवं लगन भी है—इस पुस्तक के कतिपय बंगों को रेष अपने मानवीय प्रकाशन समनऊ से ह्ये प्रकाशित करने इच्छा प्रकट की। मैंने उन्हें स्वीकृति प्रदान करते हुए यह बात भी जोड़ दी कि यदि वे अगस्त २८ तक इसके सम्बन्ध में कोई निश्चित समझौता कर लेंगे और इस इमी वर्ष प्रकाशित हो जाने का विराम मुझ रिता लेंगे तब इस पुस्तक के प्रकाशन का सबप्रथम अधिकार उन्हीं को रहेगा परन्तु अर्थात् वेद के साथ कहना पड़ता है कि उन्होंने अगस्त के अंत तक मुझे कोई सूचना नहीं दी। इपर भी रामेश्वर तिवारी ने मुझ इस बात के लिए पुनः पुनः बाध्य किया कि यह पुस्तक उन्हें ही प्रकाशनाय मिले और न चाहते हुए भी तथा हृषय में उनका प्रति सवय रहते हुए मुझ यह पुस्तक उन्हें इतीलिए देनी पड़ी क्योंकि यदि मैं ऐसा न करता तो कदाचित् प्रतिनिधि तयार करने तक इसके प्रकाशन की प्रतीक्षा करने में वर्षों लय जाते। यही मैं इस बात को भी स्पष्ट कर देना जर्बन समझता हूँ कि अपनी कृतियों को प्रकाशित करवाने के लिए मुझमें कभी भी कोई विषय उत्साह नहीं था और मैंने प्रकाशकों से सम्पर्क बनाने के लिये सक्रिय प्रयास नहीं किए अथवा तो पुस्तकें बहुत दिनों तक पड़ी सड़ती रहीं या फिर जिम्मे लाना उसे ही ले ली लयी। यदि मैं अग्य अधिकार लेखकों की भांति प्रकाशक का सम्पर्क स्थापित करता तो निश्चय ही ऐसी कृतियाँ इसमें अधिक सुन्दर रूप में प्रकाशित होतीं और मुझे बहु शोभ न होता जा कि अब उन्हें दण कर हो रहा है। इस प्रकार यह पुस्तक जमी प्रकाशक मशोदय के यहाँ में प्रकाशित हो रही है जिन्हें कि मैं कोई भी पुस्तक प्रकाशनाय न देना चाहता था लेकिन बुकि मचयुष संयागार को इसका केवल प्रथम संस्करण प्रकाशित करने का ही अधिकार है अथ हृदय को पर्याप्त सतोय भी है। यहाँ मैं यह भी स्पष्ट कर दूँ कि ग्रिड भांडर लेने समय जब मैंने इस पुस्तक का अन्वेषण किया तभी मुझ यह भावलयक जान पड़ा कि लीप ही इस पुस्तक का एक दूसरा संपाशित और परिशुद्ध संस्करण तयार किया जाय जिसमें कि ज्ञानो के निष्ठाओं की खर्चा करन समय उन्हे ऐतिहासिक पृष्ठाभूमि में भी पण्गा जाय ? मरिष्य के लभ में क्या है यह टीक गीक नहीं कहा जा सकता अथ जब तक कि मैं अन्वेषण रूप में इस पुस्तक का दूसरा संस्करण न तयार कर लूँ तब तक मुझ इस पुस्तक में जोड़ा जान सतोय तो करना ही पड्या। बाधा है पाण्ड लखम् विचारक ह्ये जाना कर मुझ इस लभ के लिए उन्माहित करने कि लीप ही इस पुस्तक का एक दूसरा संशोधन संस्करण प्रकाशित करवाया जाय।

दुर्गाशकर मिश्र

घागनेय पुर्गीमा म २०१४ वि०

२१६ रासंग मंग

मगमः

सूची

	विषय		पृष्ठांक
१	कहानी का स्वरूप	---	६
२	कहानी का पठानक और इसकी विशिष्टताएँ		४०
३	कहानी में पात्र और चरित्र-चित्रण	" "	८३
४	कहानी में कथोपकथन	---	१०३
५	कहानी में देश-धूल तथा वातावरण	---	११६
६	कहानी की मापा-शैली और उमकी विविध प्रयासियाँ	---	१२६
७	कहानी का उद्देश्य	" "	१५६

कहानी-कला

की

आधार-शिकाएँ

कहानी

का

स्वरूप

: १ :

पारयात्य समीक्षक आर० के लागू (R. K. Lagu) ने अपनी पुस्तक Introduction to Modern Stories from East & West में एक स्थान पर लिखा है 'The storyteller has found a warm welcome and an eager audience in all ages and all countries. Young and old, the cultured and the illiterate—everyone succumbs to the spell which the storyteller casts upon us. The craving for a story is ingrained in us. It is in consequence of this that the storytelling tradition has suffered no break at any time and flourishes alike in the East and West.' अर्थात् सभी समयों में और समस्त प्रदेशों में कहानीकार का सदा ही एवं पूर्ण स्वागत होता रहा है तथा उसे अपने स्वागतार्थ उन्मुक्त मन समुदाय भी हृष्टिगोचर हुआ है। गुप्ता तथा पृष्ठ, मुमरूतन और असंगृह्य प्रायः समस्त भेदियों के ध्यात्क कहानीकार के उम संवत् में प्रसिद्ध कि प्रभाव सदा पर पड़ता है मुग्ध होने के हतु साक्षात्क रहता है। बल्लुन कहानी के अंदर हम सभी में विद्यमान है इमीनिष्ठ कहानी की परम्परा अभी बिनियत नहीं हुई तथा पूव आर परिपम दोनों में उमरी घारा समान रूप में प्रया-तिम हो रही है।' इस प्रकार हम देखते हैं कि कथा-साहित्य दिन-प्रतिदिन अपने अर मोतक्य की ओर उन्मुग्ध होता जा रहा है आर इस क्षेत्र में सर्पदा ही नूतन प्रति-

१ Tell-me-a story has been phrased on all tongues from the age when words were symbols scratched on stones and books were brick. Centinles ago at the gates of Bagdad beggars and petty merchants sat and passed the tim with wonder tales of adventure and of ma ॥

माथे अवतरित होती रही हैं।^१ वस्तुतः मानव ने जिस दिन से भाषा द्वारा अपने भावों की अभिव्यक्त करनी प्रारंभ की उसी दिन से उसने कहानी कहना और सुनना भी प्रारंभ कर दिया होगा अतः कथा-साहित्य की उत्पत्ति सर्वप्रथम किस स्थान पर और किस रूप में हुई यह कहना तो सत्य नहीं है लेकिन इतना तो निर्विवाद रूप से स्वमान्य है कि उसका अस्तित्व अत्यन्त प्राचीन है और यह स्वकाश तथा मनुष्य में विद्यमान रही है अतएव जैसा कि रिचर्ड वॉटन का कथन है "कहानी विरल की सर्वाधिक प्राचीन वस्तु है। इसलिये कोई आश्चर्य नहीं कि उसका प्रारंभ उसी समय हुआ होगा अथ मनुष्य ने घुटनों के बल चलना सीखा हो।"^२ इस प्रकार कहानी का प्रारंभ मानवसृष्टि के साथ ही हुआ है और उसका अंत भी प्रलय के साथ ही होगा तथा यदि मानव मनु और मनुष्य की कहानी ही मानव जाति की सर्वप्रथम कथा है।

चूंकि कहानी का उद्भव हुए सदृशों का व्यतीत हो चुके हैं और मनुष्य के विकास के साथ-साथ कहानियों का रूप भी परिवर्तित होता चला गया अतः कथा-कथन रूप परिवर्तित करने वाली वस्तु को परिभाषा के बौद्धिक में बाँधना सत्य मान्य नहीं है क्योंकि जिस प्रकार ईश्वर, प्रेम और सौन्दर्य आदि की निरिक्त परिभाषा पाए अभी तक नहीं बन सकी हैं उसी प्रकार कहानी की भी एक सुनिश्चित परिभाषा निवारित नहीं हो सकती। स्मरण रहे बिदयकवि रवीन्द्रनाथ टागोर का कथन है कि जीवन प्रतिक्षण एक सारगर्भित कहानी है अतः कथा कथा है और उसका स्वरूप कथा है इन प्रश्नों पर विभिन्न मत प्रस्तुत किए जा सकते हैं तथा जैसा कि श्री गुलापराम जी का मत है "जो वस्तु दिन-दिन रूप बदलती हुई विकसित हो जाती रही है उसकी परिभाषा देना उतना ही कठिन है जितना कि बिहारी की नायिका की तस्वीर खींचना जो अमुर बितेरी को भी क्लेश देता है।"^३ चूंकि आधुनिक कथा साहित्य अपने प्राचीन रूप से पर्याप्त विभिन्न और विफसित है तथा उसके मूल में

१ हमारी सम्मता के विकास के साथ साथ कहानियों के विषय तथा स्वरूप परिवर्तित होने लगे हैं परन्तु उनका मूल रूप वंसा ही अशुद्ध अपरिवर्तित बना रहता है। कहानी का मूल जीवन के प्रारंभ से लेकर जीवन के अंत तक का महत्त्व है। माता की कहानी के बाद अध्यापक की कहानी का समय आता है। जीवन के प्रारंभ के साथ शृंगार रस की कहानियों का महत्त्व बढ़ने लगता है। जीवन के अन्तिम दिनों में राम इत्यादि कहानियों हमारा ध्यान आकर्षित करने लगती हैं। मध्ये में कहानों का प्रय हनारे हृदयों में मरता बना रहता है।

—आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास भी दृण्वरकर पुस्तक पृष्ठ २५४

२ वाप्य के रूप—श्री गुलाकराम (पृष्ठ २१३)

कहानी का स्वरूप

अनक विविध तब विद्यमान है अतः प्रत्येक पाठ्यालय या संघालय समोच्च या लेखक ने अपने निजी दृष्टिकोण के अनुसार ही कहानी को पारिभाषित किया है और जैसा कि डॉक्टर जानसन ने एक स्थान पर कहा है "हम जानते हैं कि प्रकाश क्या करता है लेकिन हममें से कोई भी यह नहीं बता सकता कि यह क्या है और कैसा है" ठीक उसी प्रकार की सम्मति कहानी की परिभाषा के सम्बन्ध में भी की जा सकती है। साथ ही एक बिभारक की दृष्टि में तो कथाप्रिय मायुक्त प्रतापान और संस्कारकमबाधक के सहयोग पर ही कहानी का विद्यमान संभव है। इतना ही नहीं कहानी के फल अन्वय नाम भी प्रचलित है और जिस प्रकार प्राचीन भारतीय साहित्य में यह कहा, दंतकथा याता आत्मव्यायिका पादम्बरी, हितोपदेश तथा दृष्टान्त के रूप में प्रसिद्ध रही है उसी प्रकार अथ आपुनिक काल में इसके कहानी (हिन्दी), कथुक्था (मराठी) शाट स्तरी (अंग्रेजी) कौन्थि (प्रन्थ) नैथिक्ले (जर्मन) गरुप (यंगला), कथा (तमिल), टु की वार्ता (गुजराती) चित्रमा (उर्दू) इत्यादि अनेक नाम प्रचलित हैं। अंग्रेजी साहित्य में कहानी का पर्यायवाची शब्द Story स्तरी है और Story का मूल अर्थ a historical narrative or anecdote अर्थात् एक प्रकार का ऐतिहासिक इतिवृत्तात्मक वचन माना जाता है। यहाँ यह भी स्मरण रहना चाहिए कि संस्कृत साहित्य में प्रचलित कहानी के पर्यायवाची शब्द आत्मव्यान एवम् आत्मव्यायिका का अर्थ भी ऐतिहासिक वचन का शाब्द ही है क्योंकि आत्मव्यान का शब्दार्थ कहना है और इस प्रकार आत्मव्यान का अर्थ किसी पूर्ववृत्त को अभिव्यक्त करना माना जाता है। शब्दकल्पद्रुम के अनुसार तो आत्मव्यायिका का पर्याय स्पष्ट रूप में इतिहास माना गया है। कहानी शब्द की उत्पत्ति 'कथानिर्ग' या 'कथानक' से भी मानी जाती है। परन्तु आपुनिक युग में कथा ने कहानी की संज्ञा धारण कर ली है और इसका उर दय पहले की भक्ति उपदेश देना मात्र नहीं रहा है तथा उसमें उपयोगिता की अपेक्षा मार्मिकता और रसात्मकता पर धन दिया जाता है और इस बात का ध्यान रखन हुए कि यह मनोरंजन का गायन भी रहे इसमें जीवन के यथातथ्य चित्रण को ही प्रधानता दी जाती है। इस प्रकार जमा कि रा० गणनाथप्रसाद रामाने लिखा है "वर्तमान काल में आत्मव्यायिका कहानी के विम रूप में हम परिचित हो रहे हैं, अथवा जिस रूप का अन्वयिक विषय प्रसार हो रहा है उसमें न तो प्रधान पत्रिका का अनुसरण है, अरु न उसका इकादेयता और न हम सज्जना प्रदात्री से ही हमारा वाद सम्बन्ध रह गया है।"

1. Every work of every kind of art is a collaboration between the one who can create and the others who can appreciate. The artist of the short story needs a reader who is impatiently emotional swiftly intelligent.

महज नहीं समझ जाता और इसके लिए उनमें उत्कृष्ट अनुभूति भी आवश्यक मानी जाती है।^१

इसमें कोई संदेह नहीं कि श्री नन्दकुमार बाजपेयी ने उचित ही लिखा है "वस्तुचयन की दृष्टि से आश्र की कहानी वास्तविकता का सच्चा आभास देती है। पुरानी कहानी उद्देश्य को प्रमुख मानकर बिगमयजनक कथा के सहारे अपनी उद्देश्य व्यञ्जना कर देती थी, उपदेश दे जाती थी; किन्तु नयी कहानी शैली, वस्तु या साधनों को सजाने में अधिक व्यवस्त रहती है। बर्णन पैसा करने में माध्यम ध्यान देता नहीं। साथ ही यह है कि वर्तमान कहानी अधिक कलापूर्ण और विश्वसनीय रूप में अपना कार्य पूरा करती है।"^२ समरथ रहे जर्मनी में छोटी गथा कथाएँ उन्नीसवीं शताब्दी में ही 'नॉयले' नाम से विद्यमान हो चुकी थीं और श्लैरोल तथा गेने ने उनको पारिभाषित करते हुए कहा भी था 'नॉयले वह कथा है जिसमें कि एक ही विषय तथा वास्तविक घटना हो।'^३ साथ ही सन १८७१ में हेसे का भी यही मत था कि 'इसमें एक पूर्ण रूपरेखा होनी चाहिए तथा चरमोत्कर्ष भी अपेक्षित है।' इसी प्रकार जर्मन में तो प्रारंभ में ही प्रकार की छोटी कल्पनिक कहानी कौन्से कहलाती थी लेकिन आधुनिककालीन फ्रान्से छोमेजी की श्राट्स्वोरी के ही अनुसृत्य है। अतएव यह मानते हुए भी कि ऐतिहासिक दृष्टि से आधुनिक हिंदी कथा साहित्य का भारतीय कथा साहित्य से अन्तर्गत संबंध है।^४ इसे निःसंकाश रूप से यह भी स्वीकार करना चाहिए कि आधुनिक कहानी-कला पारंपार्य कहानियों से विशेष रूप से प्रभावित है और इस प्रकार श्री गुलाबराय जी ने उचित ही लिखा है 'आश्र की हिंदी कहानियों जिनको मुख्य आख्यायिका लघुकथा भी कहते हैं, हैं वे भारत की पुरानी कहानियों की ही संतति; किन्तु विदेशी संस्कार लेकर आई हैं। यद्यपि के सूत्र की मूर्ति उनकी सामग्री प्रायः देसी रहती है, किन्तु कटछाँट अधिकांश में विलायती ढंग का होता

1 The first necessity of the short story, at the outset is necessity. The story that is to say must spring from an impression or perception pressing enough, to have made the writer write.

—Elizabeth Bowen

२ आधुनिक साहित्य—श्री नन्दकुमार बाजपेयी (पृष्ठ १९०)

३ 'ऐतिहासिक दृष्टि से आश्र की कहानी वास्तविकता का सच्चा आभास देती है। पुरानी कहानी उद्देश्य को प्रमुख मानकर बिगमयजनक कथा के सहारे अपनी उद्देश्य व्यञ्जना कर देती थी, उपदेश दे जाती थी; किन्तु नयी कहानी शैली, वस्तु या साधनों को सजाने में अधिक व्यवस्त रहती है। बर्णन पैसा करने में माध्यम ध्यान देता नहीं। साथ ही यह है कि वर्तमान कहानी अधिक कलापूर्ण और विश्वसनीय रूप में अपना कार्य पूरा करती है।'^२

—श्री नन्दकुमार बाजपेयी का निष्कर्ष का विधान १० नवीनानुसृत्य (पृष्ठ ८)

है।¹ इस प्रकार कहानी-रचना पर विचार करते समय हमें पारंपारिक विचारकों के विचारों पर भी ध्यान देना होगा अतएव हम यहाँ पौराणिक तथा पारंपारिक दोनों ही प्रेशों के समीपकों की कहानी सम्पत्ती परिमाणां सूचित करेंगे।

पारंपारिक अंगत में अमेरिका के सुप्रसिद्ध कहानीकार एडगर एलिन पो (Edgar Allan Poe) का आधुनिक कहानी का जन्मदाता माना जाता है और उन्होंने सन १८४२ ई० में हायन की कहानी 'Twice Told Tales' की आलोचना करती हुए कहानी की परिभाषा इस प्रकार की है 'A short story is a narrative short enough to be read in a single sitting written to make an impression on the reader excluding all that does not forward that impression and final in itself' अर्थात् कहानी एक ऐसी आभ्यास है जो इतना छोटा हो कि एक बैठक में पढ़ा जा सके और जो पाठक पर एक ही प्रभाव को उत्पन्न करने के लिये लिखा गया हो। इसमें ऐसी बातों को स्थान नहीं दिया जाता जो इस छोटी प्रभावोत्पादकता में बाधक होती हों और यह स्वतः पूर्ण होनी है। स्मरण रहे एडगर एलिन पो ने का कहानी की संज्ञिकता पर जोर देने हुए यह भी लिखा है कि हमके पढ़ने में आधे घंटे से लेकर एक घंटे तक का समय लगना चाहिए। सुप्रसिद्ध कहानी लेखक एच० जी० वेल्स के अनुसार कहानी में मयत्नरत, कथनगुण, सतोरजक, सुन्दर और संपूर्ण रूप में समन्वयपूर्ण घटनाओं में स विभी एक का विग्रह होना चाहिए जिसके कि पढ़ने में पन्द्रह से पचास मिनट तक समय लगना हो।² इसी प्रकार प्रेशर गण्यु क शब्दों में 'कहानी में एक ही परिघ्र या एक ही घटनात्मक गिणति में विभिन्न भावों का विग्रह होता है और उसे पूर्ण रूप से समाप्त भी होना चाहिए।'³ हाँ बाकर ने तो मानव के प्रत्येक क्रिया-व्यस्य को ही कहानी माना है लेकिन हम इसमें सहमत नहीं हैं कि जो भी अनुभव करता है बड़ी कहानी है। पुनः ही दृष्टि में कहानी का विषय होता है एक प्रकाशित करने पाया तथा सर्व आशोचित धार, शाहू यह मान्यपूर्ण हो चाहे मयपूर्ण चाहे विम्व योत्पादक' और मोपंसा के शब्दों में 'प्रत्येक कथु में कोई न कोई कथानक संनिहित है, स्वयंनि है तिम कि हमारी कथनट्रियो हमारे वृषणों ध्यनि बना यह गण है इसी विना में उनकी रहने के कारण देग नहीं पानी। सयु स सयु, सु

1 शब्द के रूप— ही पुस्तककार (पृ० २११)

2 It may be horrible or pathetic or funny or beautiful or profoundly illuminating having only this essential that it should take from fifteen to fifty minutes to read aloud "

3 "A short story deals with a single character or a series of emotions called forth by a single situation. The short story must be an organic whole "

से कुछ वस्तु में भी कुछ अज्ञात तत्व विद्यमान है और कहानीकार को उन्हें ही खोज निकालना है। पहिले हार्टन की दृष्टि में "आधुनिक कहानी बहो प्रारंभ होती है जहाँ घटना सबकु से आत्मा के अंदर प्रविष्ट होती है" तथा जैक लंडन का मत है "कहानी मूर्त, सम्बद्ध, स्वरगुणी, सजीव और रचिकर होनी चाहिए।" प्रैडेम पैल-वीर के शब्दों में "मेरी दृष्टि में कहानी तीन प्रकार से लिखी जा सकती है, एक कथानक लेकर उसमें पात्रों के चरित्र की संयोजना की जाए, या एक पात्र लेकर उसके लिए घटनाओं का निर्माण हो या फिर एक विशिष्ट आतावरण लेकर उसके अनुरूप घटनाएँ और पात्र निर्मित हों" तथा स्टीवेंसन की दृष्टि में "कहानी जीवन भर की प्रतिनिधि नहीं, बसकी विशाओं की ही अभिव्यंजना है" और गिन्सवर्ट प्रीक्यू का मत है "मेरा मुख्य उद्देश्य एक मनोरंजक घटनाक्रम चित्रित करना है जिसे कि मैं पहले शब्द से अंतिम शब्द तक पाठक को अपनी और आकर्षित कर सकूँ। जिस व्यक्ति में सुगठित, सुनिरिचित नाटकीय अंतर्बलही घटनाओं के देखन की क्षमता नहीं है वह अपने आपको व्यय ही कहानीकार और उपन्यासकार कहलाना चाहता है। ३० वी० ईसनवीन का कथन है "प्रभाव की एकता, कथानक की अष्टता, घटना की प्रबलता एक मुख्य पात्र और एक समस्या का समाधान-कहानी में दो पाँच गुण आवश्यक है" तथा वालपोल की दृष्टि में "कहानी में घटनाओं का व्योम अपेक्षित है। उसे घटना कुर्वना संकट होना चाहिए, उसका प्रभाव तीव्र हो और विकास अप्रत्याशित। दुबिधा के माध्यम से उसे संकट की परिस्थिती की ओर अग्रसर होना चाहिए"। वालपोल कहानी की स्थिति उस पुद्गौड़ की भाँति मानते हैं जिसका प्रारंभ और अंत दोनों ही महत्वपूर्ण होते हैं। आर० के लागू (R. K. Lagu) के शब्दों में The modern story is a conscious literary effort. It is a cleverly planned artistic achievement अथवा आधुनिक कहानी स्वेच्छित, साहित्यिक प्रयास है। यह सतर्कता से तैयार की गई एक कलात्मक पूणता है।

स्मरण रहे पारश्चात्य साहित्य में ही नहीं अपितु हिन्दी साहित्य में भी कहानी की परिमाणार्थ प्रचुरता के साथ उपमन्त्र होती हैं। डॉ० श्यामसुन्दरदास के शब्दों में "आध्यायिक एक निरूपित लक्ष्य या प्रभाव की रूपकर लिखा गया नाटकीय आशयान है" और प्रसाद आ तो आध्यायिक में साम्बर्ध की एक क्लृप्त चित्रण करना और इसके द्वारा उस सृष्टि करना ही कहानी का उद्देश्य मानते हैं। सुप्रसिद्ध हिन्दी एक अंग या किमा एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य होता है इसके अतिरिक्त बसको शैली बमझ कथाविन्यास सब उन्नी एक मास को पुट

कहानी या स्वतन्त्र

करते हैं। उपन्यास की भाँति उसमें मानवजीवन का संपूर्ण तथा पृष्ठदृश्य दिखाने का प्रयास नहीं किया जाता, न उसमें उपन्यास की भाँति सभी रसों का सममिश्रण रहता है। यह एक ऐसा रमणीय उद्यान नहीं जिसमें भौतिक-भौतिक के फूल, धूल, घूटे, मत्तरे हुए हैं बल्कि एक गमला है, जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुचित रूप में दृष्टिगोचर होता है। माय ही वे यह भी कहते हैं कि "कहानी यह ध्रुव की तान है जिसमें गायक महकिल गुरु हावे हो अपनी मन्मथ प्रतिभा दिया देता है एक क्षण में बिल को इतने माधुर्य से परिपूर्ण कर देता है जितना रात भर गाना सुनने से भी नहीं होता।" श्री इलाचन्द्र जारसी के शब्दों में "जीवन का एक नाना परिस्थितियों के संपर्क से उल्लासोपलता रहता है इस सुदृश्य एक के किमी विशेष परिस्थिति की सखिप गति का प्रदर्शन करने, हृदय के माथों की किमी विशेष व्यथा के शो को रंजित करने में ही कहानी की विशेषता है।" श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी कहानी को जीवन रहस्य की अविच्छिन्न मानते हुए कहते हैं "रहस्य व्यक्ति के मानस में निवास करते हैं और उनका उद्घाटन करना ही कहानी समाज का षण होता है। इस प्रकार प्रत्येक कहानी प्रकाशान्तर में समाज की ही कहानी हुआ करती है।" माय ही वे यह भी कहते हैं "जब तक कहानी परित्र विगेष की दृष्टि नहीं होती, किमी व्यक्ति को अंततत्त्वा का यथार्थ विशिष्ट प्रतिबंध नहीं मलफता, उसके जीवन के रागात्मक उद्वेगों को काया नहीं प्रहण करते तब तक प्रोद् भी कहानी सही अर्थों में कहानी नहीं होती।" वाजपेयी जी की दृष्टि में "कहानी मानव जीवन की उस वास्तुस्थिति का दर्शन है जो केवल कहना नहीं उस समय की परंपरा है जो कहना के अन्तर्गत प्रोद् में कहीं दिया पड़ा रह गया है।" श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार के शब्दों में "कहना एक इच्छा के अंतर्गत विग्रह का ना कहानी है। स्पष्टि का सभी अंगों के समान रस उसका आवश्यक गुण है।" श्री विनयभोदन शर्मा के शब्दों में "कथा मानव जीवन का उच्च है और कथान भी तथा श्री ललिताप्रसाद गुप्त कहानी का कहना या परित्र विग्रह का संक्षिप्त सम्युक्त विग्रह" मानते हैं। श्री अनेन्द्रकुमार ने तो हम कहानी क्यों लिखते हैं नामक प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा है "यह तो एक भ्रम है जो निरन्तर समाधान पाने की आशिरा करत रहती है। हमारे अपने सवाल होते हैं, संकल्प होती हैं, चिन्ता होती है और उनका उत्तर, उनका समाधान ढोउने का पाने या मतलब प्रयत्न करत रहते हैं। हमारे प्रयाग होत रहते हैं। उदाहरणों का मिमानों की शोड

१. उदाहरण - श्री प्रमथान (पृष्ठ १)
 २. साहित्य-मन्त्रालय का दस्तावेज नं० (पृष्ठ १४)
 ३. प्रसिद्धि कहानी—महान्वर्ता का प्रकाशन काशी (पृष्ठ ६)
 ४. दृष्टि—श्री विनयभोदन शर्मा (पृष्ठ १)
 ५. साहित्य शिक्षा—श्री ललिताप्रसाद गुप्त (पृष्ठ २०)

होती रहती है। कहानी उस खोज के प्रयत्न का एक उदाहरण है। वह एक निरिषत उच्चर ही नहीं है देती पर यह असत्यता कहती है कि शायद उच्चर इस रास्त से मिले। वह सूक्ष्म होती है, कुछ सुमध देती है, और पाठक अपनी चिन्तन क्रिया के सहारे उस सूक्ष्म को ले लेते हैं।^१ अक्षय जी की दृष्टि में तो “कहानी जीवन की प्रविष्टि या है और जीवन स्वयं एक अचूरी कहानी है एक शिखा है, जो उच्चर मर मिलती है और समाप्त नहीं होती।” इतना ही नहीं उच्चर तो यह भी मत है कि “कहानीकार एक प्रकार के मानसिक संपर्प में जीता है। संपर्प कला की जननी है। यह संपर्प संकल्प और परिनिषति में चला करता है। संपर्प प्रगति को जन्म देता है।” भी गुलाबराय के शब्दों में “छोटी कहानी एक स्वतः पूर्ण रूपना है जिसमें एक तथ्य या प्रमाय का अपसर करने वाली व्यक्ति केन्द्रित घटना या घटनाओं के आवरण परंतु कुछ-कुछ अपत्याशित ढंग से, उत्थान-पतन और मोड़ के साथ पात्रों के परित्र पर प्रफारा डालने वाला कृतकपूर्ण वर्णन हो।”^२ तथा डा० सुधीन्द्र की दृष्टि में “कहानी साहित्य की वह विधा है जो पारंपरिक आख्यान के माध्यम से स्थूल अथवा सूक्ष्म भावात्मक प्रभाव की एकान्तिता का अनुसंधान करती हुई अपनी एकाम दृष्टि में जीवन को एक लंबे चित्र माला या मॉडी देती है।”^३ परन्तु जैसा कि हम प्रारंभ में ही कह चुके हैं। कहानी की निरिषत परिभाषा स्थिर करना सहज कार्य नहीं है क्योंकि विचारकों एवं कहानीकारों ने उसकी व्याख्या उनके उद्देश्य और विषय को लेकर निवारित करने का प्रयास किया है लेकिन चूंकि प्रत्येक युग की अपनी विशिष्ट समस्या होती है अतः स्थानाधिक ही परिभाषा में भी अन्तर पा जाता है। डा० रामरत्न भटनागर का विचार है कि “कहानी के उद्देश्य, विषय या टेकनिक को लेकर किसी परिभाषा नहीं बनाई जा सकती कहानी का क्षेत्र इतना विस्तृत है विषय और शैली दोनों की दृष्टि से कि हम किन्हीं दो बार वाक्यों को कहानी की परिभाषा के रूप में गढ़ नहीं सकते।”^४ अतएव हमारी दृष्टि में चूंकि उद्देश्य, विषय और टेकनिक की दृष्टि से हम किसी निरिषत परिभाषा करने में असमर्थ रहते हैं अतः उचित तो यह होगा कि हम कहानी के स्वरूप से परिचित होने का प्रयास करें क्योंकि साहित्य के अन्य अंग-उपांगों से न केवल वह सम्बंधित है अपितु उसकी उपयोगिता में भी वे सक्रिय रूप से भाग लेते हैं। इस प्रकार हम यहाँ यह स्पष्ट करने का प्रयत्न करेंगे कि साहित्य के अन्य अंग-उपांगों से कहानी का क्या सम्बंध है ?

१ साहित्य का धर्म और प्रय—पी जेनेरलुमार (पृष्ठ ३७८)

२ काम्य के रूप—पी गुलाबराय (पृष्ठ २१२)

३ साहित्य मंडल - जनवरी-फरवरी १९२१ (पृष्ठ २८-)

४ प्रबन्ध परिभाषा— डा० रामरत्न भटनागर (पृष्ठ ७८-७९)

उपन्यास और कहानी के पारस्परिक सम्बन्ध पर विचार व्यक्त करते हुए भी गुलाबराय ने लिखा है "कहानी अपने पुराने रूप में उपन्यास की समजा है और नये रूप में उसकी अनुजा । वृत्त या कथा-साहित्य की बंशाना दान के कारण कहानी और उपन्यास दोनों में ही कई बातों की समानताएँ हैं ।" इसी प्रकार भी नन्ददुलारे बाजपेयी ने भी दोनों की समानता पर विचार करते हुए कहा है कि "उपन्यास और कहानी रचनात्मक कला मूर्तियाँ नहीं हैं उनमें जीवन का स्वरूप दिखाया जाता है । उनमें घटनाओं पात्रों और परिस्थितियों के सामूहिक चित्र उपस्थित किए जाते हैं । विशेषकर उपन्यास तो जीवन की ऐसी भूलक दिखाने का उद्देश्य रखता है जिसमें मूल जीवन घटना और उसकी सामाजिक अभिव्यञ्जना में कोई अन्तर ही न दिखाई दे । जीवन के या सामूहिक संसार के, किसी अंग या अङ्ग को अलग करके उसे उपन्यास में रख दिया गया हो - पहले फिरत पात्रों और सामूहिक घटनाओं का अन्त जिसमें मूल और प्रतिकृति का अन्तर ही न रह गया हो । कहानी में यह बात यद्यपि इतनी स्पष्ट नहीं होती—उसके छोटे आकार और उसकी तीव्र घटना प्रगति के कारण यद्यपि वह किसी सामूहिक जीवन अन्त का प्रतिरूप नहीं जान पड़ती—फिर भी कहानी-लेखक का यह प्रयास ता रास्ता ही है कि वह कहानी में भी यथाय जीवन चित्र का सामाजिक अधिक से अधिक लावे । अर्थात् 'किन्मन' जो उपन्यास और कथा-साहित्य के लिए काम में लाया जाता है कदापि इसी अर्थ को व्यक्त करता है कि उपन्यास तथा कहानी में कल्पना द्वारा रची गई कथा को सामूहिक जीवन घटना से वृत्त करना आसान नहीं है । कला में वास्तविकता का धर्म हो जाने की पूरी संभावना है ।" भी विरयनाथप्रसाद सिंह की दृष्टि में "कहानी और उपन्यास में तत्त्वों की दृष्टि में कोई भेद नहीं है । भेद है घटनाओं की दृष्टि और समष्टि की यापना की दृष्टि में । कहानी की विस्तार सीमा छोटी ही होती है, पाठे उसका कितना ही फैलाव क्यों न किया जाय । उपन्यास की विस्तार सीमा बड़ी ही होती है पाठे उसका कितना ही संक्षेप क्यों न किया जाय । कहानी जीवन का एक चित्र रखती है—निर्देश, स्पष्टता । उपन्यास जीवन के एकाधिक चित्रों का योग संपन्न करता है, गारेण, संघट्ट ।" यही यह स्मरण रहना चाहिए कि दानों में समानताएँ होत हुए भी कहानी और उपन्यास दानों की अपनी विशेषताएँ भी हैं जिनमें कि दानों की विचार पारस्परिक एक दूसरे से वृत्त सी प्रतीत होती है और इस प्रकार न सा हम कहानी को छोड़ उपन्यास ही का मरते हैं और न उपन्यास को कहानी

१ बाजपेयी के मत—भी गुलाबराय (पृष्ठ २१४)

२ कथा साहित्य के अर्थ—भी अन्तारे बाजपेयी (पृष्ठ १)

३ कहानी का सामूहिक जीवन—भी विरयनाथप्रसाद सिंह (पृष्ठ १४६)

तथा भी गुलाबराय के शब्दों में “यह कहना रिमा ही असंगत होगा, जैसे खापाये होने की समानता के आधार पर मेंढक को छोटा बैल और बैल को पड़ा मेंढक कहना। दोनों के शारीरिक संस्कार और संगठन में अन्तर है। बैल पारों पारों पर समान बल देकर चलता है तो मेंढक उछल उछलकर रास्ता तय करता है।” इस प्रकार कहानी और उपन्यास के रूप, विषय उद्देश्य तथा विधान में समानताएँ होते हुए भी दोनों में कई मूल विभिन्नताएँ हैं और कहानी को उपन्यास का coming form कहना अपसुक्त नहीं है तथा भी प्रफ़राबन्ध गुप्त कर तो यही स्पष्ट मत है कि “उपन्यास और गल्प भिन्न कला हैं। यह आवश्यक नहीं कि सकल उपन्यासकार अच्छा गल्प-लेखक भी हों। उपन्यास में जीवन का विगूढ़ान होता है, गल्प में केवल भौतिकी मात्र होती है। मानव चरित्र के किसी एक पक्ष पर प्रफ़रा दाख़ने को, किसी घटना या वातावरण की सृष्टि के लिए कहानी लिखी जाती है।” इसी प्रकार भी अगभायप्रसाद मिश्र ने भी लिखा है “उपन्यास एवं गल्प दो भिन्न वस्तुएँ हैं। एक का स्थान दूसरा प्रदण नहीं कर सकता क्योंकि एक दूसरे के अभाव की पूर्ति नहीं कर सकता। उपन्यास एवं गल्प में सादृश्य है अथवा किन्तु माय ही दोनों में विभिन्नताएँ भी हैं। उपन्यास में किसी चरित्र की सम्पूर्णता होना आवश्यक है, गल्प में चरित्र के किसी अंश विशेष का चित्रण होने से ही काम चल जाता है। उपन्यास में नान्य चरित्रों के समावेश द्वारा समाज का एक सर्वांगपूर्ण चित्र अंकित किया जाता है, गल्प में दो एक चरित्रों के दो एक स्वरूपों को चित्रित कर देना ही यथेष्ट है। किन्तु हम चरित्र चित्रण की प्रयाली क्या होगी, इसकी लेकर ही समस्या उपस्थित होती है। गल्प में विषय-वस्तु होती है, रचना कौराल होता है और उसमें भी बहुर एक वस्तु होती है वास्तविकता को प्रस्तुतित करने का काशल। उपन्यास में अटिक्त मानव-जीवन की मनोवृत्तियाँ तथा उसके बाह्य एवं आंतरिक दृश्यों का जो सूक्ष्म एवं विभिन्नमुखी चित्र हमें देखने को मिलता है, यह छोटी कहानी में संभव नहीं हो सकता; क्योंकि इसके लिए चाहिए सुपरिसर स्थान, जिसका छोटी कहानी में अभाव होता है। चरित्र का क्रम बिकाम बसकी जगलताओं का विश्लेषण एवं सहज समाधान भी हम छोटी कहानी में पाते”।^१ स्मरण रह कि दोनों में केवल लघुता-दीर्घता या आधार और मात्रा को ही विभिन्नता नहीं है अपितु प्रकर का भी अंतर है।^२ श्री प्रभाकर माथवे के

१ काव्य के रूप—श्री गुलाबराय (पृष्ठ २१६)

२ नया हिन्दी साहित्य एक दृष्टि—श्री प्रभाकर गुप्त (पृष्ठ १०४)

३ साहित्य की वर्तमान धारा—श्री अगभायप्रसाद मिश्र

४ The story differs from the novel in length so it must of necessity differ from it in motive plan and structure

शब्दों में "कहानी जीवन के छंद या अंश मात्र को प्रस्तुत करती है, उपन्यास जीवन की समग्रता को। कहानी उदलता वृद्धता हुआ बन्व्य निर्भर है, उपन्यास गंभीर वृद्धहीन समुद्र। कहानी एक ही दिन में मुरझानेवाली खिली की कमी है; उपन्यास विशाल युगों युगों तक स्तम्भ मीन, तना खड़ा देवदारु। कहानी हेरफेर जैसे कुछ रेखाचित्र या 'स्नैप' मात्र होता है, उपन्यास वृद्ध चित्रचित्र (प्रोन्टो) के समान है। कहानीपर भीड़ को अपनी छोटी सी खिड़की में से या मध्य क एक क्षीने में हेरफेर लेना पर्याप्त समग्रता है, उपन्यास-क्षेत्र एक ऊँची मीनार पर बठकर जैसे आस पास का विस्तृत भू-प्रदेश दिखता है।" डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी का भी यही मत है कि "उपन्यास एक शाखा प्रशाखा वाला विशाल वृक्ष है, जब कि छोटी कहानी एक मुकुमार लता" और बैरीषेन ने भी उचित ही कहा है कि "उपन्यास पढ़ना भरपैत्र भोजन में पूरा संतोष पाना है, कहानी का केवल पुष्पशा सदृशता या उजसाना मात्र।" पाठ्यात्म्य विचारकों ने तो कहानी को जीवन के केवल एक भाग (aspect) की सँधी (snapshot) मात्र मानकर उचित ही लिया है क्योंकि उपन्यास यदि जीवन का पूरा चित्र है तो कहानी उसके एक अंग की मूलक मात्र है लेकिन यह सँधी स्वतः अपने आप में स्वच्छा पूर्ण होती है। स्मरण रहे कहानी समग्र जीवन के किसी एक विशिष्ट अंग या हिन्दु की ही मूलक प्रस्तुत करती है हिन्दु उपन्यास में पृष्ठों की अधिकता रहती है; पहनाओं परिस्थितियों तथा देश, काल और पातावरण का अत्यन्त विराट विवेचन भी होता है। इतना ही नहीं उपन्यास में तो कई आकर्षण केन्द्र होते हैं और उनमें पाठकों को आकर्षित करने वाली अनेकानेक परिस्थितियों की संयोजना की जाती है परन्तु कहानी में केवल एक ही आकर्षण केन्द्र होता है, क्योंकि कहानी का पात्र विशेष सीमित लोगों के लिए ही हमारे सामने आता है तथा पाठकों का अपनी ओर आकर्षण कर मग्न-मग्न मा कर सता है। यह भी मत्स्य है कि कहानी के पात्र का पाठक के हृदय पर बिना प्रभाव पड़ता है लेकिन कुछ बिन्दुओं का मत है कि औपन्यासिक पात्रों का पाठक की मानस-स्वप्नी पर अधिक हृदयवादी प्रभाव पड़ता है।^१

१ अनुसूच भी प्रमाणात् मासके (पृ० १०६)

साहित्य का मार्ग डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी (पृ० ६६)

२ It is true of men and women in fiction as it is of men and women in actual life. But in the short story we meet people for few minutes and see them in few relationships and circumstances only and while it is indeed true that concentration of attention upon a particular aspect of character may result in a very powerful impression still as a rule such impression is not exactly comparable with that left by an ampler more detailed and more varied representation.

तथा श्री गुलाबराय के शब्दों में "यह कहना ऐसा ही असंगत होगा, जैसे चापापे होने की सम्मानता के आधार पर मेंढक को छोटा पैल और पैल को बड़ा मेंढक कहना। दोनों के शारीरिक संस्कार और संगठन में अन्तर है। पैल चारों पैरों पर समान पैल बैठकर चलता है तो मेंढक बड़ल-बड़लकर रास्ता तय करता है।" इस प्रकार कहानी और उपन्यास के रूप, विषय उद्देश्य तथा विधान में समानताएँ हाते हुए भी दोनों में कई भूल विभिन्नताएँ हैं और कहानी को उपन्यास का coming form कहना अपयुक्त नहीं है तथा श्री प्रभूराचन्द्र गुप्त का तो यही स्पष्ट मत है कि "उपन्यास और गल्प मिल्न कला हैं। यह भावरयक्त नहीं कि सफल उपन्यासकार अच्छा गल्प-शैलिक भी हो। उपन्यास में जीवन का दिग्दर्शन होता है, गल्प में केवल भौतिकी मात्र होती है। मानव चरित्र के किसी एक पहलू पर प्रकारा खाने को, किसी घटना या वातावरण की सृष्टि के लिए कहानी लिखी जाती है।" इसी प्रकार श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र ने भी लिखा है 'उपन्यास एवं गल्प दो मिल्न वस्तुएँ हैं। एक का स्थान दूसरा प्ररण नहीं कर सकता क्योंकि एक दूसरे के अभाव की पूर्ति नहीं कर सकता। उपन्यास एवं गल्प में सादृश्य है अथवा किन्तु माप ही दोनों में विभिन्नताएँ भी हैं। उपन्यास में किसी चरित्र की सम्पूर्णता होना आवश्यक है, गल्प में चरित्र के किसी अंश विक्षेप का चित्रण होने में ही काम चल जाता है। उपन्यास में नाना चरित्रों के समावेश द्वारा समाज का एक सर्वांगपूर्ण चित्र अंकित किया जाता है, गल्प में दो एक चरित्रों के दो एक स्वरूपों को चित्रित कर देना ही यथेष्ट है। किन्तु इस चरित्र चित्रण की प्रणाली क्या होगी, इसको लेकर ही समस्या उपस्थित होती है। गल्प में विषय-वस्तु होती है, रचना-कीराल होता है और उसमें भी बढ़कर एक वस्तु होती है वास्तविकता को प्रस्तुतित करने का कौशल। उपन्यास में जटिल मानव जीवन की मनोवृत्तियाँ तथा उसके बाह्य एवं आंतरिक दृश्यों का जो सूक्ष्म एवं विभिन्नमुखी चित्र हमें देखने को मिलता है, वह छोटी कहानी में संभव नहीं हो सकता, क्योंकि हमें के लिए चाहिए सुपरिमेर स्थान, जिसमें छोटी कहानी में अभाव होता है। चरित्र का क्रम विधान उसकी जटिलताओं का विश्लेषण एवं सहज समाधान भी हम छोटी कहानी में पाते हैं।" स्मरण रह कि दोनों में केवल सघुना-शीर्षता या आकार और मात्रा को ही विभिन्नता नहीं है अपितु प्रकार का भी अंतर है।^{१४} श्री प्रभाकर माधवे के

१ काव्य के रूप—श्री गुलाबराय (पृष्ठ २१६)

२ नया हिन्दी साहित्य एक दृष्टि—श्री प्रभाकर गुप्त (पृष्ठ १०८)

३ साहित्य की वर्तमान धारा—श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र

४ The story differs from the novel in length, so it must of necessity differ from it in motive plan and structure

राश्यों में "कहानी जीवन के दृष्ट या अंश मात्र को प्रस्तुत करती है, उपन्यास जीवन की समग्रता को। कहानी उद्यतता वृद्धता हुआ अन्य निर्मर है, उपन्यास गंभीर व्युत्पत्ति समुद्र। कहानी एक ही दिन में मुरम्भ जानेवाली लिवी की कर्ती है; उपन्यास विशाल युगों युगों तक स्तब्ध मीन, तना स्वप्न देवदारु। कहानी भोगक जैसे कुत रेश्यापित्र या 'स्नैप' मात्र होता है उपन्यास वृद्ध भित्तिचित्र (प्रोन्ग्रे) के समान है। कहानीकार भीड़ को अपनी छोटी सी झिड़की में से या मराय क एक कोने में देख लेना पर्याप्त समझता है; उपन्यास-हीतक एक ऊँची मीनार पर बैठकर हीम आस पाम का विस्तृत मू प्रवेश हैमता है।" डा इजारीप्रसद द्विवेदी का भी यही मत है कि "उपन्यास एक शारा प्रशाया बाला विशाल वृष्ट है अप कि छोटी कहानी एक मुकुमार सता" और श्रीवेन ने भी उचित ही कहा है कि "उपन्यास पढ़ना भरपे भोजन म पूण संतोय पाना है कहानी का केवल धुभुसा लहकाना या उकमाना मात्र। पाठपात्य विचारकों ने तो कहानी का जीवन के केवल एक भाग (aspect) की झँकी (snapshot) मात्र मानकर उचित ही विद्या है क्योंकि उपन्यास यदि जीवन का पूण चित्र है तो कहानी उसके एक अंग की झलक मात्र है लेकिन यह झँकी स्वत अपने आप में स्वया पूण होती है। स्मरण रहे कहानी समस्त जीवन के किसी एक विशिष्ट अंग या हिन्दु की ही मजक प्रस्तुत करती है निन्तु उपन्यास में वृष्टों की अधिकता रहती है, घटनाओं परिस्थितियों तथा देश काल आर बानावरण का अस्यन्त विशद विवेचन भी जाता है। इतना ही नहीं उपन्यास में हा काट आकर्षण केन्द्र होते हैं आर उममें पाठकों को आकर्षित करने वाली कनेकनेक परिस्थितियों की संयोजना की जाती है परन्तु कहानी में केवल एक ही आकर्षण केन्द्र होता है, क्योंकि कहानी का पात्र बिगेर मीमित सलों क निष् ही हमारे सामने आता है तथा पाठकों का अपनी ओर आकृष्ट कर मंत्र-मुग्ध मा कर सता है। यह भी मत्य है कि कहानी के पात्र का पाठक के हृदय पर बिन्प प्रभाप पड़ता है लेकिन कृद विचारकों का मत है कि आप-यात्मक पात्रों का पाठक की मानस स्थनी पर अधिक हृदयमाटी प्रभाव पड़ता है।^१

१ अनुगत भी प्रभाव माधरे (पृ १८६)

२ मार्क्स का मार्च डा इजारीप्रसद द्विवेदी (पृ ८६)

3 It is true of men and women in fiction as it is of men and women in actual life. But in the short story we meet people for few minutes and see them in few relationships and circumstances only and while it is indeed true that concentration of attention upon a particular aspect of character may result in a very powerful impression, still, as a rule such impression is not exactly comparable with that left by an actual more extended and more varied representation.

इसमें कोई संदेह नहीं कि उपन्यास की सी अनेकरूपता कहानी में नहीं होती तथा उसमें न तो प्रासंगिक कथाएँ ही रहती हैं और न वातावरण एवं दैरा काल की परिस्थितियों का विस्तार ही रहता है। स्मरण रहे कि उपन्यासों में तो जीवन के विभिन्न चित्र दृष्टिगोचर होते हैं तथा विस्तार के साथ उनका निरूपण भी किया जाता है लेकिन कहानी का क्षेत्र छोटा होता है और इसमें न तो पात्रों का उस प्रकार का चरित्र-चित्रण ही संभव है और न जीवन की वैसे विस्तृत व्याख्या ही हो सकती है। भी पहाड़ी ने भी उपन्यास और कहानी में अंतर स्पष्ट करते हुए लिखा है "उपन्यास में जीवन की समस्याओं को व्याख्या मिलती है और इन समस्याओं का समाधान मिलता है। कहानी में यह बात नहीं पाई जाती। कहानी एक प्रश्न को बटाती है किन्तु इसका उत्तर पूर्णरूप में नहीं देती। व्याख्या उपन्यास का प्राण है। संकेत और गूँज (Suggestion and Echo) कहानी की जीवन स्वास हैं। उपन्यास की हम नवप्रत्यक्ष आकारा करें तो कहानी को सप्टरंगी इन्द्रधनुष मान लें। अकस्मात् रहस्यपूर्ण चित्रण के बने से रंगों की रागिणी बठी और देखते-देखते नयनामिराम होकर अछोर फैल गई और देखते-देखते न जाने कहीं विलीन हो गई। पर बहुत देर के लिए आँखों और मन में एक कस्तक और एक गूँज छोड़ गई।" उपन्यास की सी अटिक्तता भी कहानी में नहीं होती और उसकी अपेक्षा कहानी में पाठकों को अंतिम संवेदना तक शीघ्रातिशीघ्र ले जाने की क्षमता विशेष रूप से पाई जाती है। साथ ही कथानक चरित्र-चित्रण तथा शैली आदि तत्वों में से किसी एक को ही कहानीकार प्रमुखता दे सकता है साथ ही एक साथ नहीं लेकिन उपन्यास में तो सभी का समावेश हो सकता है। संक्षिप्तता के फलस्वरूप कहानी की शैली अधिक व्यञ्जना प्रधान होती है अतः उसमें काव्यत्व की मात्रा भी अधिक होती है। उपन्यास तथा कहानी में एक और भेद प्रभाव की अन्विति (Unity of Impression) जिसे कि एडगर एल्लेन पो ने पूर्णता का प्रभाव (Effect of Totality) कहा है मानते हुए Evelyn May Albright की *The Short Story Its Principles and Structure* में कहा गया है — Brander Matthews in his 'Philosophy of the short story' lays great stress on this Unity of Impression what Poe calls the "Effect of totality"—as the mark of distinction between the short story and the novel. And Canby carrying the distinction further says it is the deliberate and conscious use of impressionistic methods together with the increasing emphasis of situation that distinguishes the short story of today from the tale or simple narrative and makes

It seem a new work of art अर्थात् प्रेस्वर मैप्यू ने अपनी पुस्तक 'छोटी कहानी का दर्शन' में प्रभावान्वित को विशेष महत्व दिया है जिसे 'पो' पूर्णता का प्रभाव मानते हैं- छोटी कहानी और उपन्यास में यही मध्यसे बड़ा अन्तर है केनयाइ ने इस अन्तर को और आगे स्पष्ट करते हुए कहा है कि यह प्रभावोत्पादक मायनों का एक स्पेसिफिक और मत्क प्रयोग है तथा इसमें परिस्थिति पर भी विशेष जोर दिया जाता है जिससे कि आधुनिक कहानी कथा या आख्यायिका में विभिन्न जान पड़ती है और वह एक सुन्दर नूतन कलाकृति के रूप में दृष्टिगोचर होती है। इस प्रकार प्रतीति कि श्री रामनारायण 'यादयेन्दु' ने लिखा है "संक्षेप में कहानी की सामग्री एक स्थिति है। आधुनिक कहानी इस विषय में उपन्यास और सरल वर्णन या कथा एवं उपाख्यान जिससे इनका प्रादुर्भाव हुआ है। से सर्वथा भिन्न है। उपन्यास का सम्यक् जीवन परिश्रों में है और सरल वर्णन एवं उपाख्यान का घटनाओं के रासक सारतम्य से। परन्तु कहानी जिसे अंग्रेजी में शॉर्ट स्टोरी कहते हैं, जीवन क इतिवृत्तों को जिम ढंग में प्रस्तुत करती है वह उपाख्यान और उपन्यास के ढंग में सर्वथा भिन्न है। कहानी में पात्रों के जीवन को हम तीन रूपों में पाते हैं। एक पूर्व पिन्वन द्वारा, दूसरे भाषी निर्देश द्वारा और तीसरे प्रमुख संकट के प्रस्तुत द्वारा। कहानी में घटनाओं के सारतम्य का प्रयोग एक निरिषत इरेज्य द्वारा होता है जिसमें एक स्थिति के प्रभाव की अभिव्यक्ति हा।" अन्य समीक्षकों की मूर्ति श।० भगीरथ मिश्र ने भी उपन्यास और कहाना में तत्वों की दृष्टि में सादर्यता मानते हुए भी दोनों का अंतर यही ही कुरालता क साथ अपनी हाल ही में प्रकाशित 'कथ्य-शास्त्र' नामक सैद्धान्तिक समीक्षा सम्यन्धी ग्रंथ में स्पष्ट किया है। देखिए—

कहानी

उपन्यास

- | | |
|--|--|
| <p>(१) कहाना जीवन की एक मत्क मात्र प्रस्तुत करता है।</p> <p>(२) कहानीकार के लिए संक्षिप्त और सद्भावमयता आवश्यक है।</p> <p>(३) कहानीकार एक भाव या प्रभाव दि।व का विरूप करता है।</p> | <p>(१) उपन्यास सम्पूर्ण जीवन का विराद और व्यापक चित्र उपस्थित करता है।</p> <p>(२) उपन्यासकार के लिए विषयपूर्ण विराद और व्याप्यपूर्ण शैली आवश्यक है।</p> <p>(३) उपन्यासकार पूर्ण परिस्थिति की गतिशील जीवन की विपूर्ण करता है।</p> |
|--|--|

१) कहानी कथा—श्री रामनारायण 'यादयेन्दु'

२) 'उपन्यास'—श्री भगीरथ मिश्र (सं० ८—२३)

- (४) कहानी में प्रासंगिक कथाओं का अवसर नहीं होता ।
- (५) कहानी में थोड़े समय में ही महत्वपूर्ण बात कहनी होती है । अतः कथा की सूक्ष्मता इसमें आवश्यक होती है । कहानी कलात्मक अधिक होती है । यह एक भाव-विक्षेप का ही चित्रण करने का प्रयत्न करती है ।
- (६) कहानी द्वारा इच्छा मनोरंजन ही प्रायः सम्पादित हो पाता है ।
- (४) उपन्यास में प्रासंगिक कथाओं का संगठन आधिष्ठानिक कथा की पकड़सत्ता को दूर करने तथा ध्यान में विविधता ज्ञाने के लिए आवश्यक होता है ।
- (५) उपन्यास में सूक्ष्म कला की उतनी आवश्यकता नहीं जितनी व्यापक उदात्त दृष्टिकोण तथा भाव रस और परिस्थिति के समग्र रूप में चित्रण की । रस के विविध रूपों का समावेश उपन्यास में ही सकता है ।
- (६) उपन्यास परिस्थिति और पात्र के पूर्ण चित्रण द्वारा हृदय-मग्न और मनस्संस्कार भी करता है ।

इस प्रकार अपनी संक्षिप्ता एकध्वेयता प्रभापोत्पादकता समुचित की तीव्रता आदि के कारण कहानी उपन्यास से सर्वथा स्वतंत्र सत्ता रखती है ।

स्मरण रहे कि संस्कृत साहित्य में आधुनिक कहानी के समकक्ष आत्म्यायिका, कथा, कथानिका या कथानिका परिकथा और लंबकथा नामक शब्द सप्रथम अग्निपुराण में ही मिलते हैं तथा कालांतर में दुखी ने आख्यान आख्यायिका और चित्रकथा नामक तीन अन्य पारिभाषिक शब्दों का भी प्रयोग किया है लेकिन आधुनिक कहानी से इनमें पर्याप्त विभिन्नता है । अग्निपुराण में आख्यायिका के लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि उसमें लेखक के बंश की विस्तारपूर्वक प्रशंसा इतनी चाहिए तथा साथ ही कन्याहरण संग्राम, विप्रलम्भ आदि विपत्तियों की घटनाएँ भी अंकित की जानी चाहिए । संपूर्ण आख्यायिका में एक या अपेक्षक लक्षों का प्रयोग कर इसे विभिन्न परिच्छेदों में उच्छ्वास नाम शब्द विभाजित करना चाहिए । दुखी ने भी इन्हीं लक्षणों को दुहरते हुए कहा है कि आख्यायिका के विषयों की कोई कालिका निर्धारित नहीं की जा सकती तथा आचार्य धामन के अनुसार आख्यायिका की कथा को किसी मरपाल से संबंधित होना चाहिए । इसी प्रकार अभिनवगुप्त आदि ने भी इसके लक्षणों पर प्रकाश डाला है परंतु विचारपूर्वक शब्दों पर यह स्पष्ट हो जाता है कि आख्यायिका तथा कथा आधुनिक कहानी के समकक्ष प्रतीत नहीं होती अपितु वे उपन्यास के समीप ही ही बरतु मानी जा सकती हैं । यही बात लटकथा, परिकथा, कथानिका और स्फुल्लका के विषय में भी कहा जा सकती है ।

साथ ही नीतिकथा और लोककथा तथा आधुनिक कहानियों में भी विभिन्नता है। वस्तुतः नीतिकथाओं का प्रतिपाद्य विषय महाकाव्य, नैतिक और व्यावहारिक ज्ञान ही है तथा लोककथाएँ तो विशास रूप में मनोरंजन प्रधान ही होती हैं। आधुनिक कहानी प्राचीन कथा आभ्यासिका, लोककथा और नीतिकथा से मिलबुल ही मिश्र वस्तु है तथा उसकी कथा, उपाय विधान, उसकी भाषा उसकी शैली सब कुछ नए हैं। यद्यपि साहित्य की परंपरा पर प्रचारा टाबते समय उनका उद्भव अथवा विषय आसक्तता है परंतु जैसा कि डॉ० इमरीपसाद द्विवेदी ने लिखा है 'यद्यपि धारणा है कि उपन्यास और कहानियों मरुत की कथा और आभ्यासिकाओं की भी मूलान हैं।' समस्त रत्नकारों के- लागू (R. K. Laqu) ने भी यही कहा है कि "एक राष्ट्र में प्राचीन लेखक उन सिद्धान्तों से पूर्णतः अभिज्ञ था जो कि आधुनिक कहानी के रूप को नियंत्रित करते हैं। अपना कार्य उमने अपूर्व सफलता के साथ सम्पन्न किया होता लेकिन उसे इमविये सफलता न मिल सही कि उमने कहानी की अचरहेलना पर शक्तिहीनता के साथ अपना कार्य प्रारंभ किया था। इन प्राचीन कहानियों को केवल उनमें अचिन्त मनोरंजक विषय-सामग्री और जीवन विषय साधारण बातों के कारण ही हम पढ़ते हैं तथा उनमें विद्यमान ज्ञान और अनुभवों की प्राप्ति के लिए भी हम उनका अध्ययन करते हैं। आधुनिक कथाकार अपनी शैलियों में अपनी कथा का अंकित करने में सफल हैं। वह समझ-बूझकर कुछ भाषात्मक, मानसिक तथा दृश्यदृश प्रसंगों को अंकित करना है और उनके निर्याह में पूर्ण योग देता है।"

इस दिग्दी परिच्छाओं में ही नहीं अन्य भाषा भाषी परिच्छाओं में भी रेखाचित्रों (Sketches) के उदाहरण प्रचुरता से मिलते हैं और यदि हम विचारपूर्वक देखें तो बहुत सी कहानियाँ, कहानियाँ न हो कर रेखाचित्र ही होती हैं। श्री गिण्टान्तिका पीतान ने रेखाचित्र का साहित्य का मथया स्वयं अग्र माना है और उनकी दृष्टि में

1 In a word the old writer was entirely unconscious of the principles which control the short story form. He might have accomplished his work with superb success but he did it without worrying about the formal technical side of his art. We enjoy those old stories for their delightful subject matter the quips and quarels which flash through them and best of all for the teaching of knowledge and experience which is enshrined in them. The modern story teller is conscious of his art to his fingertips. He deliberately purs certain emotional intellectual and humorous effects and strains every nerve to attain them.

—Introduction to Modern Stories from East & West

“कला के अंदर रेखाचित्र की एक स्वतंत्र सत्ता है, उसे पढ़ने के बाद पाठक को समाज या व्यक्ति की जीवनभारा के अगले मोड़ प्रवाहों को जानने की आवश्यकता नहीं रह जाती। वह उस पूरी तस्वीर को पढ़कर संतुष्ट हो जाता है और वृत्ति रेखाचित्र एक चित्र है इस कारण उसका वर्णविषय रूपता प्रधान भी हो सकता है और वास्तविक भी।” यहाँ यह भी स्मरण रहना चाहिए कि डा० मगीरथ मिश्र रेखाचित्र को शब्द चित्र मानते हैं और उनका विचार है कि “अपने सम्पर्क में आप किसी विनम्रण व्यक्तित्व अथवा संवेदना को जगाने वाली सामान्य विशेषताओं से युक्त किसी प्रतिनिधि चित्र के समतुल्य स्वरूप को देखी-सुनी या सकलित घटनाओं की पृष्ठभूमि में इस प्रकार उभार कर रखना कि उसका हमारे हृदय में एक निरिपत प्रभाव अंकित हो जाय रेखाचित्र या शब्दचित्र कहलाता है।”^१ वस्तुतः रेखाचित्र में एक ही वस्तु या पात्र का स्थायी रूप से चित्रांकन किया जाता है और उसमें वर्णन की ही प्रधानता होती है परंतु कहानी में वर्णन के साथ साथ प्रवृत्तात्मक कथन मा रहता है और गत्यात्मकता भी दृष्टिगोचर होती है। डा० नगेन्द्र ने भी वही ही सुन्दर ढंग से फहानी और रेखाचित्र का तुलनात्मक विवेचन करते हुए कहा है “कहानी और रेखाचित्र में कोई आस्विक अंतर करना फटिल है, फिर भी दोनों में अन्तर अवश्य है क्योंकि ये दोनों शब्द आज भी अरापर प्रचलित हैं और इनका प्रयोग करने वाले इनके द्वारा एक ही अर्थ की व्यंजना नहीं करते। कहानी के विषय में तो किसी का विशेष भाव होने की गुंजाइश नहीं है, रेखाचित्र के विषय में हो कठिनाई है। स्पष्टतया ही रेखाचित्र चित्रकला का शब्द है वैसे कि नाम से ही व्यक्त है। इसमें चित्रांकन का मूल आधार रेखाएँ होती हैं। आभिति में रेखा की विशेषता यह है कि इसमें लम्बाई होती है, मोटाई पाँड़ाई आदि नहीं होती। अतएव अपने मूलरूप में रेखाचित्र में मोटाई पाँड़ाई अथवा मूलरूप और रंग आदि नहीं होते। इसमें आधार तो हाता है, पर भरण नहीं होता इसीलिये हम रूपा भी करते हैं। अब चित्रकला का यह शब्द साहित्य में आया तो इसकी परिभाषा भी स्वभावतः इसके साथ आई अथवा रेखाचित्र एक ऐसी रचना के लिए प्रयुक्त होने लगा जिसमें रेखाएँ हों पर मूलरूप अथवा अक्षर इतार दूसरे शब्दों में कथानक का इतार-चढ़ाव आदि न हों, अर्थों का उद्घाटन मात्र हो। पूव आयोगन अथवा आधोचित्त विकास न हो। रेखाचित्र में कथ्य सुकठे आते हैं, संयोजित नहीं होते हैं। कदापि के लिए घटना का होना जरूरी नहीं है, पर रेखाचित्र के लिए बसका न होना जरूरी है घटना का भरण यह यदन नहीं कर सकता। इसी प्रकार कहानी के लिए विरलेनय किसी भी प्रकार अवांछनीय नहीं है परंतु रेखाचित्र का यह प्राय

१ प्रगतिचार — श्री विनयानंदिह चौहान (पृष्ठ ११)

२ वाप्यशास्त्र — डा मगीरथ मिश्र (पृ० १०)

अनिवार्य माधन है।¹ यहाँ यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि रेखाचित्र में न तो ध्यानरु ही होता है और न परम सीमा वाली स्थिति ही आती है तथा कहानियों में अत्यन्त घटनाएँ भी रहती हैं अन्वयात्मक घटनाओं के होने से इसका ममस्त सार्थक ही विनिष्ट हो सकता है। इस प्रकार जसा कि डा० लक्ष्मीनारायण लाल का मत है 'आधुनिक कहानी कला में रेखाचित्र शैली को कड़ी-कड़ी प्रमुखता मिल रही है लेकिन तुलनात्मक दृष्टि से अभी तक रेखाचित्र कहानी के समस्त सहायक तत्वों में आता है।'²

यद्यपि विचारकों का मत है 'एक कहानी लेखक के समान रिपोर्ताज-लेखक को भी अपने सीमित कक्षों में उस समस्या का समाधान प्रस्तुत करना पड़ता है जिसको कि सच में रचकर वह रिपोर्ताज लिखता है। ... एक रेखाचित्रकार अपनी कृषी के जरा से संकेत से ही समस्त चित्र की भावनाओं को व्यक्त करने की सामर्थ्य रखता है उसी प्रकार रिपोर्ताज-लेखक को भी संक्षिप्त शब्दावली में घटना का ठीक-ठीक और मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करना होता है।³ परंतु कहानी की सी सादृश्यता रखते हुए भी रिपोर्ताज कहानी नहीं है, ही वह कहानी का एक विशिष्ट भण्डो का प्रभावशाली प्रयोग अवश्य कहला सकता है। रिपोर्ताज में घटनाओं के चित्रण के साथ-साथ कहानी की सी रोचकता भी अपेक्षित है और कहानीकार की भाँति रिपोर्ताज लेखक को भी कम समय तथा कम स्थान में ही अपने भावनाओं की अभिव्यक्ति करनी पड़ती है परंतु कहानी किसी निश्चित उद्देश्य को लक्ष्यकर ही लिखी जाती है जब कि रिपोर्ताज में विभिन्न घटनाओं का समावेश होता है और रिपोर्ताज लेखक नियमों के कई बंधनों में स्वतंत्र रहता है। इसना ही नहीं कहानी गद्यमय या गद्यगीत से भी सयथा भिन्न है क्योंकि गद्यपाठ्य या गद्यगीत में किसी भाव के धारण से कलाकार की भावना मधुर उद्धान होती है तथा उसमें घटनाओं का समावेश सा रहता है और यदि प्रसंगानुसार घटनाएँ अचिंत भी की जाएँ तो भी हमसे महत्त्व न प्रदान कर उनमें आपत्त इदयोद्गारों को प्रमुखता दी जाती है परंतु कहानी में उद्गारों के साथ-साथ घटनाओं को भी समान महत्त्व दिया जाता है और वह अपने व्यापकता से पूर्ण में कम प्रकार के अपने-अपने भावचित्रों का समावेश रखती है।

विचारकों ने निर्बंध और कहानी की तुलना करते हुए दोनों में पर्याप्त साम्यता मानी है और कहा जाता है कि दोनों के आकार, रूपरेखा तथा उद्देश्य में

1. विचार और विवेचन—डा० लक्ष्मी (पृष्ठ ८-८१)

लिखी कहानियाँ या रिपोर्ताज या विचार या लक्ष्मीनारायण लाल (पृष्ठ १२०)

2. आधुनिक विवेचन—पी. एच. नुपन और श्री. माण्डवकर मन्त्रिक (पृष्ठ १००)

साम्य है। जिस प्रकार कहानी का सृजन एक विशिष्ट उद्देश्य के प्रतिपादन हेतु ही होता है और उसके प्रतिपादन के अनन्तर ही वह समाप्त हो जाती है वही प्रकार निबंध भी एक विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति हेतु ही लिखा जाता है तथा उसके पूर्ण होने पर वह भी समाप्त हो जाता है। निबंध की भाँति कहानी भी व्यक्तित्वप्रधान ही है परंतु दोनों के शिल्पविधान में पूर्ण विभिन्नता है और दोनों में किसी भी व्यक्तिगत विचार का प्रतिपादन तथा उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति सर्वथा विभिन्न रूप में होती है। स्मरण रहे जब कि निबंध में केवल विषय-समस्या से सम्बंधित बौद्धिक विश्लेषण, शुष्क ज्ञान, तर्क एवं व्याख्या के ही दशान होते हैं वहीं कहानीकार किसी भाव या समस्या के चित्रण विश्लेषण हेतु उसके अनुरूप कथायत्तु का अंकन कर आकर्षक इतिवृत्त में उसे बहुरूप और घटनाओं के माध्यम से कौतूहल-पूर्ण सजीवता और गति उत्पन्न करता है तथा इस प्रकार संपूर्ण कहानी के फाय व्यापार में आकर्षण उत्पन्न होता है और वह अपने सामूहिक प्रभाव के सहित लक्ष्य के अन्तर्गत पर पहुँच जाती है। साथ ही जैसा कि डॉ० कन्हैयालाल सहाय का मत है 'जिस निबंध में कल्पित विषय तो हो किंतु व्यक्ति नकारक हो वह मूल्य अर्थ में निबंध नहीं। सच्चा निबंध क्लेशक कार्य विषय का उतना प्रस्तुत नहीं करता जितना वह अपने व्यक्तित्व का प्रस्तुति करता है।' परन्तु कहानी में ठीक इसके विपरीत स्थिति रहती है क्योंकि उसमें व्यक्ति ही गीर्ण रहता है तथा कल्पित विषय को प्रधानता दी जाती है। साथ ही निबंध के पाठक प्रायः परिष्कृत बुद्धि वाले व्यक्ति ही होते हैं जब कि कहानी सामाजिकों की सामाजिक युष्ठा का न्यायिक मामलों को जुटाकर समझ करती है अतः वह निबंध की अपेक्षा न केवल अधिक प्रभावोत्पादक है अपितु लोकप्रिय भी है।

जैसा कि एक समीक्षक ने लिखा है "कहानी में घटनाओं की योजना और उनका आकर्षण नाटक के ढंग का होता है" तथा इसमें कोई संदेह नहीं कि हर एक नाटक और अभ्य-काव्य कहानी में एक ही समान तत्वों की अभिव्यक्ति की जाती है। इतना ही नहीं विचारकों का तो यहाँ तक कहना है कि 'यिना नाटकीय ढंग का अनुसरण किए कहानी मजबूत नहीं हो सकती। नाटकीय गुणों के समायोजन से इनके प्रभाव में प्रबलता आती है। हृदय पर गहरी छाप लगाने वाली रीतियों का प्रयोग, पात्रों के जीवन में संकट उपस्थित करना, स्थिति को प्रौत्साहन देना, कथोरक्षण की कलापूर्ण नाटकीय रचना केवल एक ही समस्या पर मनोयोग हर एक अमर्यपरीत चित्रण आदि अमर्यपरीत पूण कहानियों के ही लक्षण हैं और यह विकसित न्य नाट्यरचना की सहायता पर ही परिणाम है। अतः इसे सिद्ध करने

१ समीक्षक—डॉ० कन्हैयालाल सहाय (पृष्ठ ११५)

भाषाशास्त्र—या अक्षरपाठ पाठकोश (पृष्ठ १८६-८०)

की आवश्यकता नहीं है कि कहानी का यह सुन्दर, सरल, रोचक एवं क्लामय रूप बहुत कथाओं के द्वारा ही बन सके है। सच तो यह है कि यदि नाटक के य सुन्दर उपकरण कहानियों में निराल दिये जायें तो कहानी मनोरंजन का साधन न बनकर विरक्ति का साधन हो जाय ।” इसी प्रकार भी जगन्नाथप्रसाद मिश्र ने भी लिखा है ‘आफार के सम्बन्ध में उपन्यास की अपेक्षा नाटक के साथ छोटी कहानी का अधिक सादर्य है। नाटककार को भी इस बात पर दृष्टि रखनी होती है कि नाटक बहुत बढ़ा न हो जाय और एकद्वार में ही वह समाप्त हो जाय। इस प्रकार के नाटक बहुत बढ़ा न हो जाय और एकद्वार में ही वह समाप्त हो जाय। रंगशास्त्र में अभिनय करने योग्य नाटक दो हजार पंक्तियों में अधिक का नहीं होना चाहिए। इस प्रकार हम देखते हैं कि गल्प-लेखक एवं नाटककार को संक्षेप का अर्थ ही अपने रचना-कारण की विशिष्टता एवं मनोरम रूप में अपना उद्देश्य पूरा करना पड़ता है।” यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि पिना अभिनय के नाटक पूर्णतया रसवृष्टि में असमर्थ ही रहता है जब कि कहानी के पढ़ने और मनोरंजन हेतु न तो किसी अन्य निरिपत ध्यान पर ही जाना पड़ता है और न समय का ही कोई प्रतिबन्ध रहता है। साथ ही अभिनय के समय रंगमंच को सजाने के लिए एकत्रित किए जाने वाले विभुल उपकरणों की भी कहानी के लिए आवश्यकता नहीं पड़ती। इस प्रकार नाटक की अपेक्षा कहानी सज्जन सुलभ है लेकिन कहानी की मरुतता और उसके प्रभाव में प्रयत्नता, रोचकता तथा चमत्कार को लाने के लिए कहानी में बहिष्कृत घटना-दीप्ति की नाटकीय अभिव्यञ्जना अत्यन्त आवश्यक है। नाटकीय अभिव्यञ्जना से अभिप्राय नाटकीय गुणों के समावेश तथा नाटकीय ढंग के अनुसरण से है क्योंकि उनके अभाव में कहानी में साहित्यिकता का अभाव हो सकता है और वह मनोरंजन शून्य भी हो सकती है। कहानी में पात्रों का आचरित्व प्रवेश, अचरित्व अर्थ आदि में भी हमें नाटकीय छाना ही दृष्टिगोचर होनी है और साथ ही बहुत सी कहानियों का अधोपकथनात्मक प्रारंभ भी नाटकीय तथा चौतूहलपूर्ण प्रतीत होता है। प्रसाद जी की ‘आचार्य-दीप’ का प्रारंभ है—

‘बन्दी
 ‘क्या है ? माने हो ?’
 ‘मुग्ध होना चाहते हो ?’
 ‘कभी नहीं। निरा मुजने पर चुप रहा।
 ‘निर चबमर न मिलेगा।
 ‘बड़ी शीत है, कदा में एक कापस दानकर कोद शीत-मुजत करता।

१ साहित्य - श्री विपनागना कर्मा (पृष्ठ २६)

२ साहित्य की चमत्कार काग - श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र (पृष्ठ ३०)

साम्य है। जिस प्रकार कहानी का सृजन एक विशिष्ट उद्देश्य के प्रतिपादन हेतु ही होता है और उसके प्रतिपादन के अनन्तर ही वह समाप्त हो जाती है उसी प्रकार निबंध भी एक विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति हेतु ही लिखा जाता है तथा उसके पूर्ण होने पर वह भी समाप्त हो जाता है। निबंध की मूर्ति कहानी की व्यक्तित्वप्रधान ही है परंतु दोनों के शिल्पविधान में पूर्ण विभिन्नता है और दोनों में किसी भी व्यक्तिगत विचार का प्रतिपादन तथा उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति सर्वथा विभिन्न रूप में होती है। स्मरण रहे जब कि निबंध में केवल विषय-समस्या से सम्बंधित वीटिक विश्लेषण, शुष्क ज्ञान, तर्क एवं व्याख्या के ही दर्शन होते हैं वहाँ कहानीकार किसी भाव या समस्या के विश्रुत विश्लेषण हेतु उसके अनुरूप कथावस्तु का अंकन पर आकर्षक इतिवृत्त में बने घट्ट कर पात्रों और घटनाओं के माध्यम से कौतूहल-पूर्ण सजीवता और गति उत्पन्न करता है तथा इस प्रकार संपूर्ण कहानी का फाय व्यापार में आकर्षक उत्पन्न होता है और वह अपने सामूहिक प्रभाव के सहित सत्य के परमोत्कर्ष पर पहुँच जाती है। साथ ही वैसे कि डा० कन्हैयालाल सहल का मत है 'जिस निबंध में बर्णन-विषय तो ही किन्तु व्यक्ति नदारद हो वह सत्त्व अर्थ में निबंध नहीं। सत्त्वा निबंध लेखक कार्य विषय का उतना प्रस्तुत नहीं करता जितना वह अपने व्यक्तित्व की प्रस्तुति करता है।' परन्तु कहानी में ठीक उसके विपरीत स्थिति रहती है क्योंकि उसमें व्यक्ति तो गीण रहता है तथा बर्णन-विषय को प्रधानता दी जाती है। साथ ही निबंध के पाठक प्रायः परिष्कृत बुद्धि वाले व्यक्ति ही होते हैं जब कि कहानी सामाजिकों की सामाजिक धुमुझा का सामाजिक सामयियों पर जुगुन रामन करती है अतः वह निबंध की अपेक्षा न केवल अधिक प्रभावोत्पादक है अपितु लोकप्रिय भी है।

जैसा कि एक समीक्षक ने लिखा है "कहानी में घटनाओं की घोषणा और उनका आच्छादन नाटक के ढंग का होता है" तथा इसमें कोई संदेह नहीं कि हरय काव्य नाटक और अन्य काव्य कहानी में एक ही समान तत्त्वों की अभिव्यञ्जना की जाती है। इतना ही नहीं विचारकों का तो यहाँ तक कहना है कि "विना नाटकीय ढंग का अनुसरण किम कहानी सफल नहीं हो सकती। नाटकीय गुणों के समावेश से इनके प्रभाव में प्रयत्नता आती है। हृदय पर गहरी छाप लगाने वाली रीतियों का प्रयोग, पात्रों के जीवन में संघर्ष उपरिष्ठ करना, स्थिति की प्रोत्साहन देना, कथोपकथन की कलापूर्ण नाटकीय रचना केवल एक ही समस्या पर मनोयोग हरय का मर्मस्पर्शी चित्रण आदि चमत्कार पूर्ण कहानियों के ही लक्षण हैं और यह विकसित रूप नाट्यकला की सहायता का ही परिचायक है। अतः इसे सिद्ध करने

१ मनीलाल—डा० कन्हैयालाल सहल (पृष्ठ ११२)

भाषुनिक माहित्य—डी नरदुबाने बाबरोवी (पृष्ठ १०६-१०)

की आवश्यकता नहीं है कि कहानी का यह सुन्दर, सरल, रोचक एवं क्लामय रूप पद्यत श्रृंखला में नाटक के द्वारा ही बन सके है। सब ही यह है कि यदि नाटक के य सुन्दर उपकरण कहानियों में निराला दिये जायें तो कहानी मनोरंजन का साधन न बनकर विरक्ति का साधन हो जाय।^१ इसी प्रकार भी जगन्नाथप्रसाद मिश्र ने भी लिखा है "नाटक के सम्बन्ध में उपन्यास की अपेक्षा नाटक के साथ छोटी कहानी का अधिक सादर्य है। नाटककार को भी इस बात पर दृष्टि रखनी होती है कि नाटक पद्यत बड़ा न हो जाय और एकद्वार में ही बह समाप्त हो जाय। इस प्रकार के संकीर्ण क्षेत्र में ही नाटककार को अपना उद्देश्य सिद्ध करना पड़ता है। रंगमाला में अभिनय करने योग्य नाटक दो हजार पंक्तियों से अधिक का नहीं होना चाहिए। इस प्रकार हम देखते हैं कि गल्प-लक्षक एवं नाटककार को संकीर्ण क्षेत्र के अन्दर ही अपने रचना-कौशल की विशिष्टता एवं मनोरम रूप में अपना उद्देश्य पूरा करना पड़ता है।"^२ यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि यिना अभिनय के नाटक पूर्णतया रसवृत्ति में असमर्थ ही रहता है जब कि कहानी के पढ़ने और मनोरंजन हेतु न तो किसी अन्य निरिपत स्थान पर हो जाना पड़ता है और न समय का ही कोई प्रतिषेध रहता है। साथ ही अभिनय के समय रंगमंच की सजाने के लिए एकत्रित किए जाने वाले विपुल उपकरणों की भी कहानी के लिए आवश्यकता नहीं पड़ती। इस प्रकार नाटक की अपेक्षा कहानी सबजन सुखम है लेकिन कहानी की सरसता और उसके प्रभाव में प्रकलता, रोचकता तथा समतुल्य को लाने के लिए कहानी में वर्णित घटना-व्यक्ति की नाटकीय अभिव्यञ्जना अत्यंत आवश्यक है। नाटकीय अभिव्यञ्जना से अभिप्राय नाटकीय गुणों के समायोजन तथा नाटकीय अंग के अनुसरण में है क्योंकि इनके अभाव में कहानी में स्थितिकता का अभाव हो सकता है और वह मनोरंजन शून्य भी हो सकती है। कहानी में पात्रों का प्राकृतिक प्रवेश, अद्यतान् अंग आदि में भी हमें नाटकीय दृष्टि होनी चाहिए और साथ ही पद्यत ही कहानियों का कथोपकथनात्मक प्रारंभ भी नाटकीय तथा कौतूहलपूर्ण प्रतीत होना है। प्रसाद जी की 'आकाश-दीप' का प्रारंभ है—

'बन्दी'

'क्या है ? माने हो ?'

'मुझ होना चाहते हो ?'

'अभी नहीं ! निरा मुझने पर चुप रहा।'

'किर अबगर न भिरेगा।'

'बड़ी शीत है, कहाँ मैं एक कपन दानकर खोद शीत-मुक्त करता।'

१. नाट्य - भी लिखनासमय कर्मा (पृष्ठ २६)

२. नाट्य की बन्धनता का—भी बन्धनपरमाणु विषय (पृष्ठ ७०)

‘भौंघी की संभावना है। यही अवसर है। आज मेरे यंधन शिथिल हैं ?’
 ‘तो क्या तुम भी वही हो।’
 ‘हाँ घोरे बोलो इस नाव पर केवल वस नाभिक और प्रहरी हैं ?’
 ‘शास्त्र मिलेगा ?’
 ‘मिल जायगा। पोत से सम्बद्ध रज्जु काट मछोगे ?’
 ‘हाँ।’

— आकाश-दीप जयरांकर प्रसाद

वस्तुतः इस प्रकार की संवाद शैली को विरुद्ध ढंग से नाटकीय शैली कहना ही अधिक उपयुक्त होगा और इसीलिए न केवल प्रसाद जी अपितु अन्य कई कहानीकारों की कहानियों के कथोपकथनात्मक अंश पढ़ते समय हमें ऐसा प्रतीत होता है मानों कि हम कोई नाटक ही पढ़ रहे हों। यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि इस प्रकार के संवादों में प्रसंगानुसार पात्रों के क्रियाकलाप सम्बन्धी संकेत भी रहते हैं। यहाँ एक दो उदाहरण उद्धृत करना असंगत न होगा। देखिए—

‘‘मस्य अपने उस भारी सन्नेह के बावू भो गयी थी। सुरीला बड़ी देर तक सत्या के पलंग के पास ही कुर्सी पर बैठी रही। अपने पलंग पर पहुँची थी कि सत्या बिरुलाई ‘जीजी’, ‘जीजी’।

सुरीला कुछ भी समझ नहीं पाई थी। पास पहुँची। देखा कि सत्या सकेंदू पड़ गयी थी। और मय से कौपती बोली ‘जीजी न जाने क्यों भारी डर लग रहा है।’

‘मैं तो जगी हूँ।’

‘फिर यह आया था।

‘कान।’

‘वही लड़कर। उसके हाथ में वही बिल्लीना या। बोला ‘बल सत्या मेरे साथ, मुझे देखो हा रही है।’

‘जीजी बचे मैं नहीं छोड़ूँगी मैंने कहा था और यह बिलबिल्ला कर हँस पड़ा।’

सुरीला बात नहीं समझ सकी थी। दिमागी यह तमारा या स्पष्ट आर केवल स्वप्न ही तो था। क्या सत्या मर रही है। इतने स्या बने ‘परम’ देखी सुस्त। पबड़ा गई। उठकर बाहर आई। दूसरे कमरे में घरा फ्रेम इठाया, नम्बर मिमाकर बिम्बाई थी डाक्टर. स्या का दिल दूब रहा है।

लौटकर सत्या के पास बैठ गई थी। स्या अय बोली थी—

'जीजी मैं उसके साथ जाऊँगी ।'

'हाँर अस्पताल, वह सारी स्त्रीम ।'

'मुझे माफ़ करना जीजी ।'

'क्या सत्या ?'

'मैं इमम प्रेम करती हूँ !'

'प्रेम !'

'तू अस्पताल चलाना । किन्ती स प्रेम मत करना । वह मुम घुला रहा है

—तमारा पदाङ्गी

हाँर भी—

'या पी चुकने के परचाणु लैम्प सिरदाने रक्ये यह एक डेढ़ पंटे लाइ हुई पुस्तक पढ़ता रहा । पढ़ कर जब उसने पक्षी कम की तो पाम ही की थारपाइ पर लेनी हम को देखा । पुकारा 'हम ।

'हूँ ।' स्वर कराहता-मा था ।

'होने लगा सिर में दूद ? मैंने वा पहिले ही कटा था कि हम तो अटर्कीनी ही या मेंगे, पेट में गाल घोड़े ही रहती है ।' हाँर यह पिम्पर म बाहर आ गया । लम्प तेज किया ।

'ओर मे हा रहा है ?' पास जाकर मिर पर हाथ रक्या, गरम था—'अप रीक रही ? दूमेरे कमरे में जाकर गाली लाया, शीरो प गिलास में पानी भी । पाम आकर घोला- ला इसे पी लो ?' मिरदाने की ओर घंटाकर मातरा देकर उमे इत्रया । हेम ने चुपचाप गोभी खाकर पानी पी लिया । यह अमृतांतन की निबिया लानर उमके मिरदाने धैठ गया ।

'लाओ मम दू ।'

'आरे तुमने तो आरुन पर ही भया जग मा मिर में दर्द है, ठीर हो जाणगा ।'

'पुप रही ।' तरिके पर अचलेग दाहर बह उमके माथ पर मनन लगा ।

'डाक्टर को से आऊँ, पिमूनि को ।' अरुण ने पूछा ।

'तुम भी गतप पर रहे हो ?' हम हेम दा मिर प्णदम धाकी 'क्यों भया तुम्हें मो की थार है ।

'नती—मैं इही पुका के पाम था । अब मैं द पर वा था ता मो मर गइ और जब तुम द बने की दूद तो विना जी—हम शानों चमगे है ।' हाँर धीरे म बह अथा की हैमी देसा । उमहा हाथ हेम के गज मा । पर अन्ना रहा दीवार पर इसती पगण्ड —पुव निरपन ।

‘अब होते तो पन्त्रह अगस्त को छोड़ दिये जाते ।’ हेम बोली ।

‘हाँ शायद उन लोगों ने वेल में ही विद्रोह कर दिया था, दीवार फँसते हुए गोली लग गई ।’ हाथ उसी तरह पलता रहा ।

‘क्यों मैया, कैसा लगता होगा, अकेले ही अकेले वहाँ, बही वैधी-वैधी दिनचर्या । अकेले पानी वालों का जीवन कैसा होता होगा ।’

‘मुझे क्या माहूम ?’ फिर धीरे से हँस कर बोला—‘ऐसा ही होता होगा जैसा हमारा है ।’

—यारह वर्ष यारह पन्ते राजेन्द्र यादव

इतना ही नहीं हिन्दी में तो अब नाट्य कहानियों भी लिखी जा रही हैं और जिस गति से उनका प्रकाशन हुआ है उसे देखते हुए कोई आश्चर्य न होगा कि भविष्य में उनकी संख्या काफी अधिक हो जाए । आधुनिक कहानीकारों में भी रावी को इस दिशा में विशेष सफलता मिली है तथा उनकी ‘पूव और पश्चिम’ नामक पुस्तक में दस नाट्य कहानियाँ संगृहीत हैं । यहाँ यह भी स्मरण रहना चाहिए कि इन नाट्य कहानियों में नाटकीय संकेतों की प्रचुरता सी रहती है और इस प्रकार उन्हें कहानियों न बूझकर नाटक कहना अधिक युक्तिसंगत जान पड़ता है । एक उदाहरण देखिए—

‘[आधुनिक ढंग का एक सजा हुआ शयन गृह । पीछे की दीवार के सहारे एक लम्बा सोफा और उसके पास दो कोच पड़े हुए हैं । दीवार से सट्टी, सोफा के किनारे, कपड़ों की एक आलमारी है । आलमारी के बगल में एक आदमकय शीशा जड़ा हुआ सिंगारदान है । कमरे के बीचो बीच दो पलंग बिछे हुए हैं । उन दोनों के बीच एक तिपाई है । कमरे में विजली का प्रकाश है । उधर वाले पलंग का लिहाफ उभरा हुआ अस्त व्यस्त पड़ा है — उस पर सोने वाला उठ गया है । इधर के पलंग पर एक सुन्दर नवयुवती—रेखा गले से पैर तक लिहाफ में लिपनी सो रही है । पलंग के सिरदाने की ओर के दरवाजे से एक दूसरी नवयुवती पहली की अनिधि और सहेली, रजनी प्रवेश करके इस सुन्दरी के पलंग पर बैठ जाती है । रेखा आँगे त्वाल देती है ।]

रजनी—(रेखा के ऊपर मुकी हुई) मुम अब बहुत सोने लगी हो रेखा, मैं कब की उठी हुई हूँ ।

रेखा—(एक झगड़ाई लेकर) हिस्ट्री की किताबों और परखों का भूत अब तो मेरे सिर पर नहीं है । सुप की नींद अब भी न सार्कै । सोव में जागते से अधिक घाम बरती हूँ । (रजनी की आँगों में आँगे गड़ा कर मुस्कराती है)

रजनी—माते में आगने स अचिर धाम । यह किमी कविता की भाषा है या बड़ी सुन्दारी पुरानी ओकल्ट फिन्नासभी का फोड़ सिद्धान्त ? मैं आज जाऊंगी ।

रेखा—तुम अभी निरी पन्थी हो रजनी । तुम आज जाना चाहती हो । नहीं नहीं जाने दूंगी । वैसी मुसोबत क्या है ? रमेश दादा को मैं वार दे दूंगी रजनी अभी पन्द्रह दिन और नहीं आ सकती ।

रजनी—पन्द्रह दिन मुझे रोके पर क्या करोगी रेखा ?

रेखा—पन्द्रह दिन में जवान पर दूंगी ।

[दोनों हँसती हैं । रेखा उठकर सन्धि के सहारे घंट जाती है ।]

रेखा—रजनी मैं स्त्री हूँ । तुं न ?

रजनी—हाँ, हाँ ना । इसकी भी याद दिलाने की आवश्यकता है ?

रेखा—निर्ममईह मैं स्त्री हूँ (गर्दन कुछ पर कुछ देर तक अपने मोने की ओर देखने के परभाव) अब पूरी स्त्री हूँ लेकिन रजनी, मैं मनुष्य भी हूँ ।

रजनी मनुष्य ?

रेखा—हाँ मनुष्य । स्त्री और पुरुष, मनुष्य के केवल दो रूप हैं । मैं यह सब कर सकती हूँ जो किमी भी मनुष्य द्वारा किया जा सकता है ।

—रेखा मनुष्य भी है रजनी

स्मरण रहे जेम्स डब्ल्यू लीन (James W Linn) के अनुसार Short story is a representation, in a brief, dramatic form of a turning point in the life of a single character अर्थात् आधुनिक कहानी संक्षेप में नाटकीय दृग में किमी एक पात्र के जीवन में संक्रमण बिन्दु की अभिव्यक्ति है । परन्तु नाटकीय गुणों के अभाव में कहानी हृदयवर्गी नहीं होती क्योंकि पात्रविक्रमता ही यह है कि उममें किमी विशिष्ट पात्र के जीवन की किमी महत्वपूर्ण घटना या दो नाटकीय रूप प्रदान किया जाता है और प्रभाव पर तथा शैली की दृष्टि से तो दोनों एक दूसरे के बहुत समीप पाए जाते हैं लेकिन नाटक की अवेका कहानी एकांकियों के अतिरिक्त अनुस्य जान पड़ती है तथा यह कहना असुविध होगी कि नाटक साहित्य में जो स्थान एकाकी नाटकों को दिया जाता है वही क्या साहित्य में कहानी का है । हाँ मनेन्द्र का कथन है कि 'कहानी तथा एकांकी एक ही में मनात होने वाला नाटक है और यद्यपि हम अंक क विस्तार के विषे कोई नियम नहीं है फिर भी दोनों कहानी को तरह उमरी एक भीमा का है

1 Evelyn May Albright ने भी एक कथा का उदाहरण दिया है जो कहानी की दृष्टि से एक ही दृग में मनात होने वाली है — 'The story writer like the dramatist is compelled by lack of space to present his situation effectively

ही। परिधि पर यह संक्षेप कथा-संक्षेप की ओर इंगित करता है और एकांकी में हमें जीवन का कमबख्त विघेयन न मिलकर, उसके एक पहलू, एक महत्वपूर्ण घटना, एक विशेष परिस्थिति अथवा एक प्रदीप्त क्षण का चित्र मिलेगा।^१ यद्यपि एकांकी की इस परिभाषा से स्पष्ट हो जाता है कि एकांकी और कहानी में कोई मौखिक अन्तर नहीं है तथा दोनों एक ही वस्तु हैं और दोनों पर अन्त भी आकस्मिक ही होता है। श्री प्रभाकर माचवे पर भी यही मत है कि “कहानी बहुत कुछ एकांकी नाटक के समान होती है। प्रभाव की एकता, जीवन का आंशिक चित्रण, संवाद की स्वाभाविकता, घटनाओं की नाटकीयता आदि दोनों में एक सी आवश्यक वस्तुएँ हैं।^२ परन्तु दोनों के उद्देश्य एवं दृष्टिकोण में अन्तर होते हुए भी शिक्षाविधान पर रूपरचना की दृष्टि से दोनों में बहुत बड़ा अन्तर है। यों ही मोहनलाल ‘मिह्रासु’ का भी यही विचार है कि “जिस प्रकार एकांकी नाटक में जीवन का एक अंश, परिवर्तन का एक क्षण मेघमाया में दामिनी की चमक की तरह बिद्यमान रहता है उसी प्रकार कहानी में भी जीवन के किसी अंग विशेष की व्यंजना होती है।^३ लेकिन जैसा कि डा० लक्ष्मीनारायण लाल ने लिखा है ‘कहानी और एकांकी नाटककला में कथावस्तु, पात्र और संवाद आदि तमाम तत्वों के होते हुए भी दोनों कला वस्तुएँ अपने रूपविधान में विभिन्न हैं।^४ वह वस्तुतः उचित ही है। यहाँ पर

in a few strong strokes, and to render his main characters prominent in their true relations to each other and to their whole environment without the aid of many groups of lesser characters and without the background of a long series of minor events which prepare for and emphasize the climax. The artificial isolation of a limited number of people and events, the artistic heightening of dialogue, the concentration of a single issue, the vivid picturing of a scene that is significant are essentially dramatic. In a word the drama is largely responsible for the brilliant technique which is one of the distinguishing features of modern story writing.

— (From the Short Story Its Principles and Structures by Evelyn May Albright)

- १ प्राथमिक हिंदी नाटक—डा नरेन्द्र
- २ सन्तुलन—श्री प्रभाकर माचवे (पृष्ठ १८६)
- ३ कहानी और कहानीकार—श्री मोहन लाल मिश्रा (पृष्ठ १३)
- ४ हिन्दी कहानियों की शिक्षाविधि का विकास—डा० लक्ष्मीनारायण लाल (पृष्ठ ३५७)

समरूप रहना चाहिए कि कहानी कला के शिष्ट विधान पर विचार करते समय हम देखते हैं कि कहानी निर्माण की विभिन्न प्रणालियों का अंततः नाटकीय शैली का भी उद्देश्य किया जाता है और इस नाटकीय शैली के अंततः भी दो मुख्य प्रणालियाँ प्रचलित हैं जिनमें से एक तो संवाप प्रणाली या वाचस्वाप प्रणाली कहलाती है तथा दूसरी पक्षाधी नाटक के विधान का अनुसरण करती है और इस दूसरी प्रणाली का प्रचलन आधुनिक काल में विशेष रूप से देखा जाता है ।^१ परन्तु पक्षाधी दृश्य-काल्य के ही अंततः आता है और कहानी अन्य काल्य के अंततः अन्त पक्षाधी नाटक एक अभिनय की धनु है तथा मैरियन क्रॉफ़ोर्ड के अनुसार "इसकी रंगशाला उसी में निहित है ।" पक्षाधी कला का संपूर्ण प्रभाव और उसकी संतुल्यता के हेतु रंगमंच की समस्त आवश्यकताएँ अपेक्षित हैं जब कि कहानी में किसी वास्तविकता का तनिक भी प्रतिबंध नहीं रहता । इतना ही नहीं डा० मन्वेल् के शब्दों में "पक्षाधी के लिए कथा भूमि" नहीं जैसा नाटक के लिए है केवल कन्द्र या पुरी (pivot) है जिस पर पक्षाधी घूमते हैं पक्षाधी की बलु का पमाना है - - - पक्षाधी में पक्षा मिश्रित कर पुरी के विद्वु जैसी बन जाती है और इसका ऊपर पात्रों के उभरे व्यक्तित्व की मूर्च्छी में भी अधिक विषय की मार्मिकता प्रकट हो उठती है ।"^२ साथ ही कहानी की अपेक्षा पक्षाधी में पन्नाओं में अधिक महत्व पात्रों को दिया जाता है और पात्रों के माध्यम से ही पन्नाओं का आसराबरोध, काल-व्यापार आदि का चित्रण होता है ।

१ पक्षाधी नाटक प्रणाली का एक उदाहरण देगण—

"और ठीक उसी समय श्री का पति प्रवेश करता है । पति बीजा ही उमरा म्भर है नाचान्त, न कता न धीन विमल बुध बनाना भी है बुध उदासीनता भी लेकिन बना बनाना और उदासीनता प्यार के परिचय के ही दो पक्ष नही है ?

पति—मायनी ।

श्री—जी ।

श्री—(विह्वला हुआ) अन्त में बाहर गया पक्ष या मोक्षता न जाने कौन कृपण बन कर रहा है । पक्ष बना पक्ष का कि और कूटं करतरी के भी बाने कर लक्ष्मी है ।

श्री—महो-ही ।

श्री—कानी इनकी लक्षण होकर बना कर रही की कि मुझे मान्य ही मही । कौन का पक्ष बनकरत बुध विचाराजन बीन - - - - - कथा का ?

श्री—(अनमनी गी) बनन ।

पति—न मयगते हुए कौन बनन ?

—बयतोर बनन - कख (पृ० २०)

२ हिन्दी पक्षाधी - डा कावेड (पृ० २२ २६)

डा० रामकुमार वर्मा का भी यही मत है "एकांकी में पात्र ही महारथी होता है। फटनाएँ रथ बनकर समस्या संग्राम में उभरे गति प्रदान करती हैं। मेरी दृष्टि में पात्र प्रदान एकांकी कला की दृष्टि से अधिक शक्तिशाली दृष्टा करते हैं।" "यूँकि एकांकी-कला अपने रूपविधान की मान्यताओं में ही सीमित रहकर अपने परम लक्ष्य तक पहुँच पाती है जब कि कहानीकार को अधिक से अधिक शिल्प विधान संबंधी अधिकार प्राप्त होते हैं अतः एकांकी कला की अपेक्षा कहानी कला स्वभाविक ही पूर्ण सुगमता और सरलता के साथ एकांत प्रभाव, मनोरञ्जन तथा ध्यान प्रदान करने में अधिक सक्षम होती है लेकिन अथ तो आधुनिक कहानियाँ और एकांकी एक दूसरे के अधिक समीप पहुँच रहे हैं क्योंकि रंगमंच और अभिनय के अभाव से कहानी की भौति एकांकी भी प्रायः पढ़ने के लिए अधिक दिलसे खाते हैं। इस प्रकार डा० जगन्नाथप्रसाद शर्मा के शब्दों में "कहानी और उपन्यास, और कहानी और नाटक में तो भेद है पर एकांकी में आकर कहानी एकांकी का कलात्मक रूप ही प्राप्त होती है। इस आधार पर यदि दोनों की रचना प्रणाली की विवेचना की जाय तो विभिन्न तत्त्वों और उनके संयोजन के विचार से भी दोनों में समानता है—ऐसा दिव्याया वा सकता है।"

साहित्य के अन्य अंग उपांगों से कहानी की तुलना करते समय हमें न केवल गद्य से अपितु कविता से भी कहानी का संबंध स्पष्ट करना होगा। यद्यपि कविता को पद्यपद्य रचना तथा कहानी को गद्य में लिखी जानेवाली कृति माना जाता है परंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि कहानियाँ कविता में नहीं लिखी जाती। आरूपानक काव्य या कथा काव्य की परम्परा तो प्राचीन ही है और महाकाव्य तथा खंडकाव्य के फथावस्तु चरित्र, वातावरण आदि कतिपय तत्त्व भी कहानी के तत्त्वों से संबंध विभिन्न नहीं हैं। स्मरण रहे महाकाव्य में तो छोटी कहानियों के आकर प्रथम की अनेक प्रासंगिक कथाएँ अंतर्भूत रहती हैं तथा इसमें संपूर्ण जीवन का चित्रण किया जाता है और खंडकाव्य में भी जीवन की किसी विशिष्ट घटना को आधार बनाया जाता है लेकिन काव्यप्रयोगों में रमणकृता आश्चर्यक मानती जाती है जब कि कहानी में केवल भाव चित्रण ही अपेक्षित है और साथ ही शैली की विभिन्नता तो उनमें है ही। यों तो कवि और कहानीकार चिरकाल से मानवजीवन के मापी माने जाते हैं तथा दोनों का जन्म मानव-जीवन और मानव हृदय से ही हुआ है और एक यदि भावनाओं का गायक कहा जाता है तो दूसरा मनोवृत्तियों का निदर्शक लेकिन कविता में भावजगत की वन संघित अनुभूतियों को मूर्तिमान रूप प्रदान किया जाता है जिनकी कि अभिव्यक्ति में कल्पना का महत्वपूर्ण योग रहता है; जब कि कहानी का सूत्रन जीवन के किसी

१ अनुपम—डा० रामकुमार वर्मा (भूविज्ञान पृष्ठ १५)
 २ कहानी का रचना-विधान—डा० जगन्नाथप्रसाद शर्मा (पृष्ठ २०)

विशिष्ट सत्य को आनोक्ति करने के उद्देश्य से ही होता है अतः उसमें कविता की अपेक्षा पिनितन और मनन की प्रधानता रहती है। कविता केवल भाव या हृदय विग्रहण पर ही आधारित रह सकती है लेकिन कहानी में सामान्य वैज्ञानिक जीवन की समीप सत्यता अपेक्षित है। स्मरण रहे कि टा० मगीरय मिश्र ने विस्तार के साथ कहानी और कविता का अंतर स्पष्ट करते हुए लिखा है "कहानी और कविता में स्थूल भेद तो यह है कि कहानी की भाषा गद्य और कविता की भाषा पद्य रूप होती है। कविता के अंतगत में आतस्थ की छन्द-रथछन्द फरी जाने वाली कविता को भी ले रखा है। कविता के अंतगत छन्द आवश्यक है। उहाँ पर हमारा उद्गार किसी भी नियमित गति के अनुकूल चलता है वहाँ छन्द आ जाता है। गति ही छन्द का प्रमाण है और गति कविता के लिए भी अनिवार्य है। व्याकरण के नियमों की अवहेलना या उमड़ा त्याग उहाँ पर भी गति के लिए किया जाए वहाँ हमें छन्द की सत्ता माननी पड़ेगी। अतः कविता और कहानी का स्थूल भेद कहानी की गद्य रूपता में है। दूसरा भेद कहानी और कविता में यह है कि कविता विशिष्ट भाषनाओं को लेकर चलती है जब कि कहानी जीवन की सामान्य अनुभूतियों को ही महण करती है परन्तु वस्तुओं और अनुभूतियों के कल्पनागत रूपों का विग्रहण करता है कहानीकार अनुभूत जीवन की वियार्थता को कवि वास्तविकता का ध्यान रखते हुए भी ऐसा विग्रह उपस्थित करेगा जो हमारी कल्पना को अधिक मनुष्य करे। इसका प्रयत्न पद्य का अंतःसत्ता का विग्रह करने में और उम मायमान मन्य को पकड़ने में है जो हमारी आंतरिक वृत्तिषी का जीवन है, पर कहानीकार कल्पना के सहारे वास्तविक जीवन के स्थूल हृदय उपस्थित करता है। हमारे अनुभूत जीवन के सभी को फिर म पगाता है। कवि विषय म पुनर्मिलकर एक हो जाता है। अतः कविता अपने और पाठक के बीच में कोई अन्तर नहीं रखना चाहती और कहानीकार विषय का दृशर रहता है और पाठक द्वारा मुने जीवन के हरयो को फिर से देखता है। कहानीकार विषय और घटनाओं का संयोजन करता है परन्तु कवि उनका माय स्वरूप चलाता है।^१ इसमें कोई संदेह नहीं कि कहानी का भाषात्मक अंश कविता ही है और लिटरी कृतियों में कविता के अन्तर्गत रहते हैं जहाँ कि भाषनाधारित शैली म कहानीकारों ने किसी पात्र का हृदय-विशेष का कल्पनात्मक विग्रह किया है।"

१ वास्तविकता--डा कलात्मक विषय (पृष्ठ ११-१२)

२ "युव उमरा अन्तोम्य पृदा ही म उमरा विद्यम देने म अयमव ह
—हृदय के उमार्थ कावचर को जानो है उमरा नहीं को कि म उम विविष्ट वम।
हर एक उमार्थ है का अना वमना को जानो म अना अन्तर विना एमना है।
अन्तर मम और युद्ध और वम अन्तर मरी अना म विर माना है मरी अन्तर म
एना का अन्तरिनी को जीवन का ममो है।"

इतना ही नहीं कुछ कहानियों तो ऐसी भी दृष्टिगोचर होती हैं जिनमें काम्यात्मकता की प्रधानता सी हो जाती है। स्मरण रहे कि निराला जी की अधिकारा कहानियों में स्पष्ट रूप से कविता की छाया विद्यमान है और फही कही तो वे उनमें रहस्यमयता की चन्दना सी करते प्रतीत होते हैं।^१ यहाँ यह भी स्मरण रहना चाहिए कि हमारी अनुनादन नई प्रतिभाओं में भी मायात्मकता की ओर विशेष रुझान वीर्य पड़ती है और इस प्रकार नई कहानियों में भी काम्यात्मक कथाओं का निराला प्रभाव नहीं है।^२ लेकिन इसना अवश्य है कि प्रायः उनमें रहस्यात्मकता और

इसी प्रकार का जर्मकारपूर्ण विचित्र विन्नाहित बवतरण में भी देखा पड़ता है।

‘उम दिन की राति मानों मरिच के कुमार स बचेतन सी हा रही बी।
 द्विपहर राति सुपुत्र बाहघाह का मइम। प्रहरीगण के नेत्रों में निद्रा की सम्मोहिनी।
 शपथी सी बानें। केवस उम दिन के नमार की भेच्छ सुन्दरी नूरजहाँ के नेत्रों में निद्रा के
 बरने में जीबन्त विस्मय प्रहरी की शक्ति बैठा हुआ था। उनके कमरे में सब बीप
 निश्चिन्त थे किन्तु फिर भी एक उज्ज्वल विचित्र प्रकाश से बमबसा रहा था। और
 नूरजहाँ की सी की चौकी पर परधर की रक्षा की पर रखे हुए हीरे की अपमक नेत्रों से
 निहार रही थी। उठ हीरे में कदाचित्त चाँद से अपनी उमोत्तमा को लिप्यपकर भर दिया
 हो मुटा दिया हो ऐसा लग रहा था। तीव्र नहीं किन्तु स्निग्ध प्रकाश जो कि मन में
 अपना अस्तित्व रख जाया करता है जैसे ही विचित्र प्रकाश से कमरा उज्ज्वल हो
 रहा था।

—गंगा प्रताप का हीरा उपादेशी विषय

१ देखिए—

“मन बीरे बीरे उगरेने मया। देना आकाश की नीनी मता में मूम चर
 और तापकों के फूल हाथ जोड़ मिय हुए अज्ञात राति की समीर से हिस रई है पृथ्वी
 की मता पर पर्वता के फूल हाथ जोड़े ममस्कार कर रहे हैं—आनीर्षा की सुभ हिय
 बाध उन पर प्रकाशित है समुद्रों की चौथी मता में आधतों के फूल धिले हुए अज्ञात किनी
 पर चढ़ रहे हैं डाल डाल की बाँहे अज्ञात की ओर पुण बहाए हुए हैं। मृग-मृग पूजा के
 चर और कनक हैं। इसके बाद उम्मी उम्मी पुष्पा के पुष्पाकारों में छर और ताप
 प्रतीवमान होने लग—मन बीरे आरती करने दिग्गने मीन माया में मायना स्पष्ट करते हैं
 बरने मय निगत हो रही है मय की पवन बदन कर रही है पुण-पुण पर अज्ञात कहीं
 में आनीर्षा की किरणें पड़ रही हैं इसके बाद समरी स्वर्गीया प्रिया बीने ही मुग्ध का
 निराला लपाए हुए नामने बाँ”।

— मल और बगवान् सूर्यकांत विषाठी निराला

२ देखिए—

“माया की प्रथम घटाए किरणों के कमलों पर लहराने वाली अमर-नील की शक्ति
 बाँ दिग्ग रिमरिम नरेन देकर बनी गई। उद्यान में मोर पण वीमाकर माय उ” किन्तु

दुरुद्धता का लेशा मात्र भी दृष्टिगाचर नहीं होता। वस्तुतः कहानी में कल्पना, भाव तथा युद्धितत्य में स अंतिम को ही विशेष महत्त्व दिया जाता है और साथ ही कविता तथा कहानी की भावमाहिक-शक्ति में भी विभिन्नता है क्योंकि कहानी की अपेक्षा कविता के प्रेमी सीमित संख्या में ही होते हैं। वस्तुतः अनुभूति, कल्पना और चिन्तन के विविध पैदागो में टंकी हुई कविता का प्रकृत रूप भावविधान तथा उक्ति-व्यक्ति के मार में इस प्रकार द्य जाता है कि यह हमें दुरुद्ध प्रतीत होती है जब कि कहानी की सप्रम पड़ी विवेचना उसकी मरुता ही है जिमके फलस्वरूप यह अन्य साहित्यांगों की अपेक्षा अधिक मनोरंजक और मर्मस्पर्शी मानी जाती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी कविता और कहानी का अन्तर स्पष्ट करने हुए कहा है कि "कविता मुननेवाला किसी भाष में मग्न रहता है और कभी-कभी मार-मार एक ही पद्य मुनना चाहता है। पर कहानी मुनने वाला आगे की घटना के लिए आसुत रहता है। कविता मुनने वाला कहता है "जरा फिर मो कशिप। कहानी मुनने वाला कहता है 'हाँ! तब क्या।'।" इस अन्तरण में भी यही स्पष्ट होता है कि कहानी हमारी उन्मुक्तता या जामन पर आगे की घटनाओं में जानकारी प्राप्त करने के लिए धार्य करती है जब कि कविता में फाल्गुन वृत्ति की अपेक्षा रमणवृत्ति ही विशेष रूप में रहती है। इस प्रकार भी भगवती प्रसाद वाजपेयी ने कविता की अपेक्षा कहानी की ही जीवन की वास्तविक मरुत अंकित करने में समर्थ मानने हुए कहा है "मनुष्य की आत्मा का मूल स्वर यों तो व्यापक रूप में ममरुत साहित्य है, चिन्तु मनावेगों का आ रूप शिल्प-विधान के माध्यम में कविता द्वारा परक होता है यद जिनका अधिक स्थायी होना है इनका ही चिन्तनहीन भी रहता है। कथावित इसका कारण यह है कि मध्यमा क युग-युगाल्ण पार कर जाने पर भी कविता का गेयगुण अप तब यथावत् स्थिर है। या कविता गेय नहीं हो पानी, यह मरुण शक्ति की पावन गाढ़ के आसय में भी कथित हो जानी है और गेय पनी रहने के कारण यह परियमनशील जीवन की नाना वृत्तियों पर विषाद गर्ह, संयत और चिन्तन प्रकृत करने की अपत्ती सामर्थ्य मरुत भी गो देती है।" १

कविता के विविध रूपों में से गीत का कहानी की तुलना में यथासंभव मरुत आ मरुता है तथा एकधैता और वैयक्तिक दृष्टिधन की प्रधानता के कारण दोनों में उनके मूल को देखकर बिचन हा अनेकता का कारण एकाधिकता में निर्माण में लगीत रूप बान्नी में जीवितबीदी मरुत अन्तरिणों का अंकित उत्तरण कन्तर की मुद्राश का अन्तिम में मरुतोर का कथना का रूप मरुत हा का मरुत मरुत अनेकता मरुत मरुत भी कथना का मरुत का अन्तरण मरुत का मरुत।

—कथना का मूल बिचन मरुत मरुत मरुत

१ बिचमरुत (११११ भाष)- मरुत मरुत मरुत (११११)

२ अन्तिम बिचमरुत - मरुत मरुत या मरुत मरुत मरुत (११११)

घनिष्ठ संबंध भी जान पड़ता है अतः बहुत से विचारक काव्य में जो स्थान गीत का है वही कव्यामाहित्य में कहानी का भी मानते हैं लेकिन दोनों में पर्याप्त समानता होते हुए भी कहानी और गीतिकाव्य में यह मूल अंतर बना ही रहता है कि गीत भाव जगत की अनुभूतियों के आधार पर सृजित होते हैं और वे भावना के गगन में पंख खोलकर उड़ने लगते हैं तथा कल्पना-सत्य के साथ-साथ संगीतात्मकता की तादात्म्यता भी उनमें रहती है परंतु कहानीकार अपनी भावनाओं को सजीवता और स्वाभाविकता प्रदान करने के लिए ठोस घरातल खोज निकालता है तथा इस प्रकार कहानी में जीवन के घरातल से जीवन की आलोचना और सत्यदर्शन ही अंकित किया जाता है। गीतों की सी भावुकता के लिए कहानी में कम से कम स्थान की गुंजाइश रहती है।

यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो ने एक स्थल पर कहा है कि हर एक काल्पनिक कृति में मौलिक सत्य अवरय विद्यमान रहता है तथा इसी प्रकार एक विचारक का मत है कि इतिहास में सब कुछ यथार्थ होते हुए भी वह असत्य है और कव्या-माहित्य में सब कुछ काल्पनिक होते हुए भी वह सत्य है अतः कहानी और इतिहास के पारस्परिक संबंध पर विचार करना यहाँ अप्रासांगिक न होगा। वस्तुतः इतिहास में अतीत की अनेक घटनाओं को क्रमबद्ध रूप में उपस्थित किया जाता है लेकिन उन्हें कहानियों नहीं कहा जा सकता तथा इतिहास के सत्य और कहानी के यथार्थ में विभिन्नता भी है क्योंकि कहानीकार को किसी भी प्रकार के तथ्य-संग्रह की आवश्यकता नहीं रहती और वह सम्भाव्य सत्य को ही अंकित करता है जब कि इतिहासकार का तथ्यान्वेषण और घटना के घटित होने के प्रमाण प्रस्तुत करने पड़ते हैं। इतिहास में समाज और जाति को प्रमुखता दी जाती है तथा व्यक्ति का महत्त्व गांथ ही रहता है लेकिन कहानी में व्यक्ति की प्रधानता देते हुए मनुष्य की उत्कृष्टतम अभिलाषाओं को भी स्थान दिया जाता है। इतिहासकार बेरा और अल का यथातथ्य चित्रण ही कर सकता है तथा इतिहास में सत्य का जो रूप अंकित होता है वह बेरा और अल तक ही सीमित रहता है अतः नममें उत्सुकता और रोचकता पर ध्यान देना आवश्यक नहीं समझा जाता लेकिन कहानी में तो इत्य को संवेदनशील बनाने की क्षमता विद्यमान है और यह न केवल सत्य, शिष्य और मुन्दर का रूप हमारे सामने प्रस्तुत कर देती है अपितु मोक्षोत्तर आनंद की भी सृष्टि करती है। स्मरण रहे इतिहास के आधार पर लिखी गई कहानियों में भी कहानीकार व्यक्ति की महत्ता का प्रतिपादन करता है। भी प्रेमचंद का भी यही मत है कि 'कहानी में नाम और मन के सिवा और सब कुछ सत्य है और इतिहास में नाम और मन के मिया बुद्ध भी सत्य नहीं।'^१

इस प्रकार आधुनिक कहानी के स्वरूप पर विचार करते समय हम यह धर चुके हैं कि कहानी का अपना निजी स्वरूप और अपनी स्वतंत्र गतिविधि है तथा प्रमाणीत्यादिका की दृष्टि से तो भी विरयनायप्रमाद मिम का यह मत उचित ही जान पड़ता है कि "कहानी ने कविता को दबाया निर्बंधों को भगाया, नाटकों को नवाया और उपन्यासों को गायी" अर्थात् गद्य की अन्य समस्त विधाएँ उसकी सफलता में अपना अधिक महत्व नहीं रखती। इस प्रकार आधुनिक कहानी की सफलता में पूर्ण परिभाषा डॉ० श्रीहृत्कृष्णनाथ के शब्दों में यह हो सकती है— "आधुनिक कहानी साहित्य का वह विकसित कलात्मक रूप है, जिसमें लेखक अपनी कल्पना-शक्ति के सहारे कम से कम पात्रों अथवा पात्रियों के द्वारा, कम से कम घटनाओं और प्रसंगों की सहायता में मनोबांदिष कथानक परित्र यातावरण द्वारा अथवा प्रभाव की सृष्टि करता है।"^१ इसी प्रकार डा० जगन्नाथप्रमाद शर्मा ने भी कहानी की सुन्दर और सुनिरिपत परिभाषा प्रस्तुत की है— "कहानी गद्यरचना का क्यासंगृहक यह स्वरूप है जिसमें सामान्यतः सपु विचार के साथ किन्ही एक ही विषय अथवा तथ्य का उच्च संवेदन इस प्रकार किया गया हो कि वह अपने में सम्पूर्ण हो और उसके विभिन्न तत्त्व एधेम्मुख होकर प्रमान्विति में पूर्ण योग होते हों।"^२

मानव शरीर कुछ तत्त्वों से निर्मित है और यदि उनमें स किन्ही एक का भी अभाव हो जाए तो मरण शरीर ही मिट्टी में मिल सकता है अतः स्वाभाविक ही इन तत्त्वों का अध्ययन महत्व माना जाता है। इसी प्रकार साहित्य के प्रत्येक अंग उपांग के भी कुछ निरिपत तत्त्व रहते हैं और अपने मनोबांदिष अभिप्राय तक पहुँचने के हेतु कथाकार को कथासृजन में जा प्रक्रिया करनी पड़ती है उसे ऐकनिक, शिन्धुविधान या रूप-विधान कहा जाता है और उसके निष्पन्न उपररगों को यह तत्त्व करता है वे समस्त उपररग उनके मूलतत्त्व कहलाते हैं। आधुनिक कहानी का स्वरूप निरिपत करते समय हम देख चुके हैं कि विचारकों ने उनके तत्त्वों की भाषायां का है और इस प्रकार कहानी का निर्माण कुछ विभिन्न तत्त्वों के आपार पर ही होता है परन्तु विचारकों में इस सम्बन्ध में अतः विभिन्नता भी पाई जाती है कि अतः कहानी के किन्ने तत्त्व माने जायें ? यों तो इपन्नाम की भौतिक कहानी के भी कथानक या कथायन्तु पात्र और परित्र विरग कयोपचयन जालावरण शैली और उररय नामक द तत्त्व माने जाते हैं तथा शरीर के अथवशों की भौतिक इन तत्त्वों का भी अन्धान्धकार होना आवश्यक कहा जाता है परन्तु यहाँ यह भी उररग रहना चाहिए कि कृति के रूप विन्ने के कारण इन तत्त्वों के प्रयोग में कुछ

१ 'लि० बर्गमिनो' ललनदरुर्जी डा० याहृत्कृष्णनाथ (कविता पृष् २३)

२ 'कहानी का स्वरूप-विधान'—डा० जगन्नाथप्रमाद शर्मा (पृष् १०)

विभिन्नता सी रहती है। जैसा कि अभी अभी हम कह चुके हैं वस्तुतः अधिकांश विचारक इन छः तत्त्वों को ही कहानी के प्रमुख तत्त्व मानते हैं और डा० इयाठी प्रसाद द्विवेदी, श्री गुलाबराय, डा० लक्ष्मीनारायण लाल, डा० मगीरथ मिश्र प्रसूति विचारक इन छः तत्त्वों को ही कहानी-निर्माण में आवश्यक समझते हैं परन्तु डा० रामकुमार वर्मा डा० विनयमोहन शर्मा और भी मोहनबाल 'मिथ्यासु' आदि समीक्षकों ने तो कहानी के केवल पाँच तत्त्व ही माने हैं। स्मरण रहे कि डा० रामकुमार वर्मा का मत है कि "कहानी मुख्यतः पाँच अंगों में विभाजित की जाती है। प्रथमतः कहानी उन घटनाओं और कथों से सम्बन्ध रखती है जो पात्रों द्वारा किए जाते हैं और वही कथानक का रूप ले लेते हैं। दूसरे, ऐसी घटनाएँ जिन व्यक्तियों पर पड़ती होती हैं अथवा जो व्यक्ति कथानक का कार्य करते हैं— वे ही पात्र कहलाते हैं। पात्र जो वातावरण करते हैं वही कथोपकथन कहलाता है। जिस मापा अथवा रीति में कथानक सजित होता है उसी में शैली का अस्तित्व रहता है और लेखक जो जीवन का लक्ष्य दिखलाना चाहता है वही आदर्श कहानी के सम्मुख रहता है।" इतना ही नहीं अतिपथ समीक्षकों ने तो कथा-साहित्य के विधायक तत्त्वों की संख्या देने की अपेक्षा कहानी का स्वरूप इसकी विशिष्टताओं को अंकित करते हुए स्पष्ट किया है और इस प्रकार जैसा कि सुप्रसिद्ध फ्रि भी अंधस्र जो कहना है कि "कहानी में सुखान्त-दुःखान्त का सम्मिश्रण प्राचीनता-नवीनता रस-सिद्धांत का संपर्क और इतिहास के स्मरणीय युगों के—नये विचारों की तृप्तियों मनोपुष्टियों के सुसमतम अध्ययन, रिद्धियों के श्रेष्ठ और कठोर हृदयों का—पुरुषों के प्रति उनके आकर्षण विकर्षण का—उनके बहीत हृदय-दोषन का और उसी प्रकार पुरुषों के मन में उठने वाली स्पन्दनशील भावनाओं का सच्चा अथलोकन-समी बुद्ध मिलता है। भाव-जगत और उसकी समस्त क्रियाओं प्रति-क्रियाओं का फल कहानी का आधार है। जीवन के आदर्श और यथार्थ दोनों का चित्रण कहानी में होता है। कहानी की यही से बड़ी शक्ति उसकी फना है—प्रमाय की एक नाटकीय और अघातकारी रूप में उत्पन्न करने की शक्ति। कहानी में आदर्श और यथार्थ दोनों फना से अनुप्राणित होने पर ही जीवित रहते हैं। अलाबिहीन आदर्श और यथार्थ दोनों नश्वर हैं।" परन्तु अंधस्र जी का सा दृष्टिकोण अल्प सभी विचारकों का नहीं है और फिर वास्तव में सैद्धांतिक चर्चा के लिए यह निदान आवश्यक भी नहीं है अतः कहानी के विधायक तत्त्वों पर अथा हमारा ही होती रही है तथा न केवल समीक्षकों अपितु कहानीकारों ने भी अपने मत व्यक्त किए हैं और इस प्रकार भी भगवतीप्रसाद बाजपेयी की दृष्टि में "यों तो कहानी को हम कई अंगों में विभाजित कर सकते हैं जैसे कथानक, लक्ष्य, कथोपकथन दुविधा की तीव्रता तथा अरम परिणति। किन्तु इनमें कथानक, लक्ष्य दुविधा की तीव्रता तथा

१ साहित्य-समालोचना—डा० रामकुमार वर्मा (पृष्ठ ४२)

२ रेखा-नेपा-वी अथन (पृष्ठ ७-७९)

परम परिणति का निर्वाह अपेक्षाकृत असाधारण होता है।" इसी प्रकार मॅटसवरी तो कथानक (Plot), परित्र-चित्रण (Character), संवाद (Dialogue) और वरान या वातावरण (Description) नामक चार अंग ही कहानी के आवश्यक मानते हैं परंतु श्री प्रभाकर माधवे ने कहानी में दस आवश्यक तत्व माने हैं।^१ वस्तुतः असाकि हम कह चुके हैं कथानक, पात्र और परित्र चित्रण, कथोपकथन, वातावरण शैली तथा उद्देश्य नामक छः तत्व ही कहानी के मूल तत्व हैं अतः अथ हम इन्हीं पर बिस्तार के साथ विचार करेंगे।

१ कहानी के आवश्यक तत्व निम्न माने गए हैं—

(१) कहानी छोटी हो (२) एक ही मासना का उमरमें उरक हो (३) कहानी मिलने से विनयी आकाशकता रमृति की है उरको ही विरमृति की भी है यानी कहानी में पुनार बहुत बरुकी थीर है (४) कथानक कृत का बरनु—पात्रों द्वारा किए जाने वाले कार्य या बरनार्ण (५) ऐसी बरनार्ण विर बर धीरन हाठी है के पात्र और उनका बरिब विरन (६) कथोरकथन का मबार (७) विग रीति से कथानक विरनिठ होना है बह रकथानक (८) भाषा रंनो बर्रन का वातावरण निर्मिति तथा उन पर लेगक के विचार (९) टीररर बररन और बरन (१०) कहानी का ममक प्रभाब और मून रंनु उद्देश्य का बरार्ण का निर्वाह।

कहानी का कथानक और उसकी विशिष्टताएँ

:२:

कथानक को कथावस्तु तथा पृष्ठ के अतिरिक्त शैलेजी में प्वाट कहते हैं और एक विचारक ने तो यह लिखकर कि “कहानी के लिए सपसे आवश्यक वस्तु है घटना-संबंधित कथानक का ऐसा प्रसार, जो अपनी सीमा में, एक प्रभावशाली और अपाधारण जीवनमर्म की पूरा पूरा व्यक्त कर दें”^१ कहानी में कथावस्तु का बरी महत्व माना है जो कि शरीर में अस्थियों का है। इसमें कोई संदेह नहीं कि कहानी में कथानक का स्थान मुख्य है क्योंकि इसी पर सम्पूर्ण कहानी आधारित रहती है और यह भी कहा जाता है कि यदि कहानी में भाषा, भाव चरित्र-चित्रण शैली तथा वातावरण आदि सभी तत्व हों लेकिन कथावस्तु न हो तो वह अस्थिरहित तन के सदृश प्रतीत होगी। रिचार्ड्स ने तो कहानी को सृजनात्मक साहित्य का शीर्ष मानते हुए वस्तु तत्व को अत्यन्त महत्त्व दिया है परन्तु यहाँ यह भी स्मरण रहना चाहिए कि ऐसे समीक्षकों की भी संख्या कुछ कम नहीं है जो कि कहानी में कथावस्तु की प्रमुखता को स्वीकार नहीं करते। कुछ विचारकों ने तो किसी निरिच्छत कथा का आधार लेकर कहानी में किसी भी प्रकार का वस्तु-विन्यास उचित नहीं समझते हैं।^२ इनकी दृष्टि में किसी पूर्व निरिच्छत व्यपस्था योजना में आस्था रखना आवश्यक नहीं है क्योंकि बिना इस प्रकार की किसी आरंभिक

१ आधुनिक साहित्य—श्री नरदुन्दारे बाबपयी (पृष्ठ १८९, १९०)

२ “With or without your kind permission I will kick the word *Plot* right into the sea, hoping that it will sink and never reappear. It is the most deceptive word in the jargon of the art-craft or what would you. As a *noun* it usually means nothing more or less than *story-outline* or *synopsis*. As a *verb* it means *to shape* or *plot*.”

I had ambiguities and so I am substituting *story outline* for the noun and *devise* for the verb.

योजना के भी कहानी का सृजन हो सकता है। स्मरण रहे कि कहानी में कथात्मक की भर्त्सना करनेवाले समीक्षकों के विचारों में विरोधाभास भी है लेकिन कथापस्तु की अनिवार्यता स्वीकार न करनेवाले विचारकों की विचारधारा को निरा महत्वहीन ही नहीं कहा जा सकता। गैरबुद्ध एन्डरसन (Sherwood Anderson) ने कथानक को कहानी का विप कहा है और शोन फो फाडलेन (Seon o Faolain) का कहना है कि आधुनिक कहानी लेखकों ने पटना अथवा फिन्सा या कथानक और उसके मय साथ के तथ्यों को छोड़ा नहीं है अपितु केवल उनका स्यामायमात्र परि वर्णित कर दिया है। आधुनिक कहानियों में भी पटना रहती है किन्तु वे केवल मन की यात्राएँ हाती हैं। उनकी दृष्टि में तो आधुनिक कहानीकार के लिए यात्राएँ मानव-स्यमाय के जंगल में हाती हैं। फतिपय आलाचको ने तो कथानक को कहानी के विभिन्न तथ्यों में मिन्डीला अथात् सौतनी पुत्री माना है लेकिन अरस्तू ने तो कथानक को ही कहानी में विशेष महत्त्व प्रदान किया था। उनकी दृष्टि में तो दृष्टिहीन का अस्तित्व चाह पिना पात्रों के सम्मय भी है लेकिन कथानक के पिना असंभव था। कथानक उनकी दृष्टि में चित्र की रेश्माओं का समान था और अन्य तथ्य रंगों का सहरय थे जो कि चित्र में सूरता अथवा ला देत हैं किन्तु अनिपाय नहीं हैं। इस प्रकार कथापस्तु का कहानी में अपना विशिष्ट स्थान अर्जय है।

जैसा कि एक विचारक का मत है 'कथापस्तु का पन्ना कहानीकार की इन अनुभूतियों और लक्ष्यात्मक प्रवृत्ति से होता है जिसके घरातल अथवा मूल प्रेरणा से कहानीकार अपनी कहानी का निमाण करने बैठता है।'।¹ इसमें फोड मदेड नहीं कि जिनकी भी कहानियाँ निर्मित होती हैं, उनके मूल में चाट कल्पना, भावना अनुभूति विचार या तथ्य अथवा विद्यमान रहता है और उसी से कहानीकार का कथा-निर्माण की योजना या प्रेरणा होती है। कहानीकार का अंत करण में जब प्रेरणा रहती है तब वह कहानी का निर्माण कार्य प्रारंभ कर देता है और कथा काल के मूल में इटी मायी का नियाम रहता है जो कि उसके मानस में रक्कर दिवारों लेते हैं और इस प्रकार हम इन भावों को कथापस्तु का बीज कह सकते हैं। यहाँ पर भी स्मरण रहना चाहिए कि वे बीजभाष अनेक प्रकार के और अनेक रूप का होते हैं नया इटी के संयोग से कहानीकार कथानक का मायार रूप देकर कहानी कहानी का निर्माण करता है नया पारपातल समीरणों ने गा इन्हे अल्पचित्त महत्त्व देने हुए इती को प्रेरणा (motivo)² या कहानी का पात्रभाष (निर्माण

* 1 गिरी कहानियों की निर्माण-विधि का विचार-डॉ० कर्माचारानन्द शार (पृ० 1-2)

2 Post starts most commonly with an idea originating in the impression made by a single incident in a situation experienced or invented in a chance or order fancy or in a conception of character. The starting

आइडिया)' माना है। स्मरण रहे कि स्वयं प्रेमचंद जी ने भी इसका महत्व स्वीकार करते हुए कहा है कि 'आज लेखक कोई रोषक हरय देखकर कहानी लिखने नहीं बंठ जाता। उसका उद्देश्य स्थूल सौंदर्य नहीं है। वह तो कोई ऐसी प्रेरणा चाहता है जिसमें सौंदर्य की भव्यता हो और इसके द्वारा वह पाठक की सुन्दर भावनाओं की स्पर्श कर सके।'^१

यहाँ यह भी स्मरण रहना चाहिए कि आधुनिक कहानीकार जो कुछ भी कहना चाहता है उसे अपनी कथावस्तु का विषय बना लेता है और इस प्रकार आधुनिक कहानी की विषय-सीमा के अंतर्गत एक निरीह चरित्र की मृत्यु से लेकर एक युवा तरुणी के प्रेम व्यापार तक की घटनाएँ चित्रित की जा सकती हैं। एक ओर तो ऐसी कथावस्तु भी अंकित की जा सकती है जिसमें अलित मरीनें और केमरे की परिधि में आनेवाली अनेक कथाएँ या घटनाएँ आदि जा सकती हैं तथा दूसरी ओर जिनमें कोई कथावस्तु या कथानक सबूत रूप से उत्पन्न ही न होता हो अत आधुनिक युग में कथानक की विषय सीमा व्यापक सी हो गई है जिसके फलस्वरूप कहानी के शिक्षण-विधान में भी वैविध्यता सी आ गई है।^२ साथ ही कहानी की कथावस्तु में मानिकता का हाना भी निरान्त आवश्यक है परन्तु कथावस्तु की मौलिकता लेखक

point for the plot may be called the story theme the idea the plot-germ or the motive. By the term motive is meant whatever in the material has served as the spur of stimulus to write, the moving force of a story in short its reason for existence

—The Short Story By E.M. Albright pp 28.

१ "A dramatic incident or situation; a telling scene; a phase of character; a bit of experience; an aspect of life; a moral problem; any one of these and innumerable other motives which might be added to the list, may be made the nucleus of a thoroughly satisfactory story"

—An Introduction to the Study of Literature By W H Hudson pp 457

२ कुछ विचार—भी प्रमचन्द (पृष्ठ १९)

३ "The short story can be anything the author decides it shall be. It can be anything from the death of a horse to a young girl's first love affair from the static sketch without plot to the swiftly moving machine of bold action and climax from the prose poem, painted rather than written, to the piece of straight reportage in which style colour and elaboration have no place from the piece which catches like a cob-web the light subtle insidencence of emotions that can never be really captured or measured to the solid tale in which all emotions all actions all reactions is measured

—Modern Short Story By H. E. Bates pp 15

की मूर्तम निराखण शक्ति पर निर्भर रहती है और बड़ी कथानक पाठकों के मागम पर शक्तिशालि प्रभाव डालने में सक्षम हो सकता है जिसमें कि कथानीकार की अंतर्दृष्टि मानव प्रकृति के विभिन्न रूपों की ओर गई हो। मोपामा का तो यही मत है कि वस्तुओं का चित्रण करने समय इनका पूर्णम-निरीक्षण आवश्यक है और अपनी मूर्तम पर्यवेक्षणी शक्ति द्वारा ही हम इन वस्तुओं की यह नूतनता श्रम करते हैं जिसका न तो किसी ने अन्वलीकृत ही किया है और न अनुशीलन ही किया है।

यहाँ यह भी स्मरण रहना चाहिए कि विचारकों का मत है कि स्नायन में मोपामा को भी मीमांसना के विषय में इसी प्रकार का उपदेश दिया था। देखिए—

Every thing which one desires to express must be looked at with sufficient attention and during a sufficiently long time to discover in it some aspect which no one has yet seen or described. In everything there is still some plot unexplored because we are accustomed only to use our eyes with the recollection of what others before us have thought on the subject which we contemplate. The smallest object contains some thing unknown find it. To describe the fire that flames and a tree or plain, look keep looking at the flame and that tree until in your eyes they have lost all resemblance to any other tree or any other fire.

This is the way to become original.

When you pass a grocer seated at his shopdoor a janitor smoking his pipe a stane of hackney coaches show me that grocer and janitor—their attitude their whole physical appearance embracing likewise as indicated by the skilfulness of the picture their whole moral natures so that I can not confound them with any other grocer or any other janitor. Make me see in one word that a certain cub-horse does not resemble the fifty others that follow or precede it.

वस्तुम शिव की अन्वेषण वस्तुम में बौद्ध न अर्थात् श्रम निर्मल अर्थात् श्रम शक्ति बरूपने निम्न वस्तुम द्वारा ही व्यक्तता का सकता है।' अम वि

↑ "Everything, which one desires to express must be looked at with sufficient attention and during a sufficiently long time to discover in it some aspect which no one has yet seen or described. In everything there is still some plot unexplored, because we are accustomed only to use our eyes with the recollection of what others before us have thought on the subject which we contemplate. The smallest object contains some thing unknown find it."

कहा जा चुका है कहानी के प्रारंभिक युग में कथानक को ही विशेष महत्व दिया जाता था परन्तु शनैः शनैः ज्यों ज्यों कहानी-कला विकसित होती गई त्यों त्यों उसका स्थान गौण होता गया और "सबसे उत्तम कहानी यह होती है जिसका आधार किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर हो" सट्टरथ विचारों द्वारा जब से कहानियों में मनोवैज्ञानिक अनुभूति और मनोविदलेपण को प्रधानता दी जाने लगी तब से कथावस्तु की प्रमुखता अपेक्षाकृत कम हो गई क्योंकि कथानक का उद्भव कहानीकार की इन अनुभूतियों तथा अह्यारमक प्रवृत्ति से ही होता है जिसकी मूल प्रेरणा या घरातल से वह अपनी कहानी का निर्माण करने बैठता है। प्रारंभ में जब उसकी अनुभूतियों घटनाओं या कार्य-व्यापारों की शृंखला से निर्मित हुई तब यह उनके आशोक में सहज ही कथानक को प्रमुखता देने लगा और इस प्रकार कथावस्तु पृथक् इति वृत्तात्मक तथा स्थूल ही रही परन्तु अब इसकी अनुभूतियों मनोवैज्ञानिक सत्य तक अन्तर्द्वर्ध पर्य मनोविदलेपण के घरातल से आविर्भूत हुई तब स्वामाधिक ही कथावस्तु का रूप सूक्ष्माविसूक्ष्म और गौण होता गया तथा कभी-कभी तो बहुत से आधुनिक कहानीकार उसे भिन्नपुत्र ही परोक्ष में रखाकर एकमात्र पात्रों के चरित्र या परिस्थितियों के अंकन में ही कहानियाँ प्रस्तुत करने लगे लेकिन जैसा कि हम कह चुके हैं इतना होते हुए भी कथानक के सर्वथा अभाव की कल्पना नहीं की जा सकती क्योंकि किसी न किसी रूप में कहानीकार को उसका अवलम्ब ग्रहण करना ही पड़ता है। वस्तुतः मानवजीवन ही कथानक का आधार है तथा कहानीकार अपना कथावस्तु का बीज उन्हीं अन्त अनुभूतियों से ग्रहण करता है जिन्हें वह वैनिक जीवन से सन्निवृत्त करता है। स्मरण रह जीवन की विविध समस्याएँ तथा कार्य-व्यापारों का ही कहानी में पित्रण होता है अतः कहानीकार की अन्तर्दृष्टि जीवन जगत की गूढ़तम समस्याओं की ओर जानी चाहिए जिससे कि उसका कथानक जीवन से अतिप्राप्त हो सके। वस्तुतः प्रत्येक उन्मुक्त कहानी का कथावस्तु मानवजीवन से इस प्रकार सम्पर्क रखती है कि वह ऐसा प्रतीत होती है मानों कि यह उसका ही एक अंग हो। यद्यपि इसीलिए उसमें मानव जीवन के पित्रण के माध्य-साध्य सांसारिक दुःख-सुख की वेदना पर्य अर्थव्यति की हिसोरों भी रहती हैं और वे पाठकों के मानस में मधुका के लिए अपनी स्मृति छोड़ जाती हैं। यहाँ प्रेमचंद की सुपरिचित कहानी "रानी सारन्धा" का अन्तिम अंश उद्धृत करना आवश्यक है क्योंकि इसमें कहानीकार ने अत्यन्त निरुणता के साथ यह प्रकटाया है कि रानी सारन्धा का अन्त जीवन की अन्त वेदनाओं से परिपूर्ण था और इसीलिए यह पाठकों को अत्यधिक हृदयरसों भी आ

पढ़ता है। देखिए

‘रानी ने जिज्ञासा-शक्ति से राजा को देखा। वह उनका मतलब न समझी।

राजा—मैं तुमसे एक वरदान माँगता हूँ।

रानी—सहर्ष माँगिये।

राजा—यह मेरी अन्तिम प्रार्थना है। जो कुछ कर्तूंगा करोगी।

रानी—मिर के पल कर्तूंगा।

राजा—देखो तुमने पबन दिया है। इनकार न करना।

रानी—(फौप पर) आपके कहने की देर है।

राजा—अपनी तलवार मेरी छाती में चुभा दो।

रानी के हृदय पर वज्रपात सा हो गया। वाली—जावननाय ‘इसने आगे यह और कुछ न कह सकी, आँसुओं में नैराश्य छा गया।

राजा—मैं देखियों पहनने के लिए जीवित नहीं रहना चाहता।

रानी—तुमसे यह कैसे हागा ?

पौपको और अन्तिम सिपाही धरती पर गिरा। राजा ने मुझ पर कहा—इसी जीवन पर आन निभाने का गर्व था।

शादशाह के सिपाही राजा की तरफ लपके। राजा ने नरारण्यपुत्र भाष म रानी की ओर देखा। रानी काग भर अनिश्चित रूप में खड़ी रही। लेकिन सच में हमारी निरपवात्मक शक्ति बसवान हो जाती है। निश्चय था कि सिपाही लोग राजा को पकड़ लें कि सारख्या ने दामिनी की मौति मरण कर अपनी तलवार राजा के हृदय में चुभी दी।

प्रेम की नाव प्रेम के सागर में डूब गई। राजा के हृदय में गहिर की धारा निकल रही थी, पर चेहरे पर शांति छाई हुई थी, कैसा चकण दरव है। वह स्त्री जो अपने पति पर प्राण देनी थी, आज उसकी प्राण धानिच है। जिस हृदय से आविहित होकर उसने जीवन मुग लूटा, जो हृदय उसकी अभिप्रायों का चक्र था, जो हृदय उसके अभिमान का पोषक था, उसी हृदय को आज मारणा की तलवार टूट रही है। किमी रही की तलवार से क्या क्या हुआ है ?

आह ! आत्माभिमान का कैसा विरुद्धमय अस्त है। उदयपुर और मारणा के इतिहास में भी आत्महारण की ऐसी पञ्जाएँ नहीं मिलनी।

शादशाहो सिपाही मारणा का यह सारम और धैर्य देकर दंग रह गए। मारणा ने अपने पद का चक्र—रानी सदवा। मुझ गया है, हम मध आरके गुनाम है। आरणा जो दुःख हा हम पमठेपाम बजा लायेगे।

मारणा ने कहा—अगर हमारे पुत्रों में म होइ जीवित हो तो ये दोनों लोगों उमे गौन देना।

यह धर कर उसने वही तलवार अपने हृदय में चुमा ली। जब वह झं होकर पृथ्वी पर गिरी तो उसका सिर राजा चम्पतराय की छाती पर था।”

—रानी सारन्धा प्रेमचन्द

स्मरण रहे कि इसी प्रकार के हृदयस्पर्शी उदाहरण अधुनातन कहानियों भी दृष्टिगोचर होते हैं, उदाहरणार्थ -

“पहलवान को बाहर निकले दो मिनट भी नहीं होते कि श्यामलाल भी पहुँच जाता है और जमुना फर्श पर बिछी हुई एक मैली दरी के ऊपर हाथ पं फैलाकर प्रायः अचमरी सी अवस्था में लेगी है। धुम्की हुई पत्ती के बहुत ही जी प्रचर्रा में श्यामलाल कुछ क्षणों तक उसके उस भयावने रूप की ओर देखता : जाता है। आतंक की एक ठंडी सिहरन क्षण भर के लिये उसकी रीढ़ में हो कर वृ जाती है। पर फिर दूसरे ही क्षण अपनी उस भावना को मझ फेंकता है और फ... पर जमुना के निष्कट बकहूँ बैठकर बह कहता है ‘आ पहलवान ने क्या दिया तुम्हें ? मैंने ही उसे तैरे पास भेजा था। मुझे इस समय रुपयों की सख्त जरूरत है। चुपचाप से मेरे हाथ में दे दे। मैं तुम्हें आज फिर कुछ नहीं माँगूंगा। इसके बाद बासा गाहक तुम्हें जो कुछ देगा उसे लू ही रख लेना। उसमें से मैं एक पैसा भी नहीं लूँगा। जल्दी दे।’ वह अपेक्षाकृत नम्र स्वर में कहता है और हाथ में उसे हिलाने लगता है।

जमुना चीक कर इठ बैठती है। स्पष्ट ही वह इतनी दूर तक या तो पैहोरी की सी हालत में पकी थी या खोपी हुई थी। कमरे के दीख प्रचर्रा में श्यामलाल को देखते ही वह भीखला बठती है। उसकी सारी मानसिक और शारीरिक बचावट पम भर के लिए लुप्त हो जाती है। सिरहाने के नीचे रन्वे हुए रुपयों को अंटी में छिपाकर वह पूरी ताकत से भिखलाकर फरती है—‘तुम फिर आ गये ! यहाँ से इसी क्षण चले जाओ, नहीं तो मैं तुम्हारा बड़ा मुरा हाल कर दूँगी।’ और उठकर अलग खड़ी हो जाती है।

श्यामलाल का स्वर फिर कटोर हो जाता है। वह दोनों को किचकिटाता हुआ लपककर उसके पास जाता है और उसकी अंटी टटोलने का प्रयत्न करता है। उसके मुँह से कच्ची शरण की तीव्र गंध आ रही है।

‘मैं यह रुपये हरिगज नहीं दूँगी। हरिगज मही दूँगी।’ वह पीलती हुई रोने-के से स्वर में कहती है। ‘इन्हें मैंने पत्थरों की दबा-दान और हाकर की फिस के लिए रख छोड़ा है।’

वह उसके दोनों हाथों को अपने बायें हाथ की मुठी में बसकर पकड़ लेता है और दाहिने हाथ से उसकी अंटा में रुपये निकालने का प्रयत्न करता है। वह

हटपाती है अपने दौलों को उसका बायें हाथ पर गड़ा कर पूरी ताकत से काटती है। पीड़ा के कारण एक धीमी-सी कराह श्यामलाल के मुँह में निकलती है, पर फिर भी वह मुट्ठी नहीं छोड़ता। वह फट फाट कर उसके हाथ में खून निकल देती है पर कोई फल नहीं होता। अन्त में वह उसके हाथों को छाड़ देती है। यह नाखूनों से उसका मुँह नोचने लगती है पर तब तक श्यामलाल उसकी अन्नी में रुपये निकाल कर बाहर से सँकल चढ़ा कर अट्टहाम करता है। बिस्लाफर करता है 'पहलवान यके-यइ धायुओं स भी दरियादिल निकला। दस रुपये दिये, उसने पूरे दम। फरबी पीकर तबीयत खराब हो गई थी अब आकर 'भी गप्स' पीऊँगा। शिम्पन के यहाँ अब भी मिल जायगो, एक रुपया ज्यादा देकर। हा। हा। रात भर बन्द रही। आराम करा, बहुत थक गई हागी.....' ।

अमुना मीनर से दरवाजे पर पूरी ताकत से हाथ में धक्के देती रहती है और चिन्ताती है 'शौनान, अरुनी खाल दरवाजा अन्नी खोल। मेरे रुपये वापस कर दे। रुपये पर रहम कर।' और वह गुहार मारकर खन लगती है।

यदुत देर तक वह इसी तरह खती हुई क्रियाङ पर धक्के देती रहती है पर न कोई उत्तर मिलता है न दरवाजा खुलता है। वह अपना सिर क्रियाङ पर पटकने लगती है, पर क्रियाङ पर रहम नहीं आता। अन्त में थक कर यह कराँ पर पड़ाङ गायर गिर पड़ती है। काही देर तक इसी अवस्था में पड़ी रहती है। उसके बाद मरसा उठकर लड़गढ़ाते हुए पोंबों से उस मरिया पर जाती है जहाँ बरबी पड़ी है। इसी तरह उसकी बगल में जाकर लट जाती है। पिङ्गने कुछ पन्तों के मार बरघर में अपने को इस करर घसी हुई मरूम करता है कि इस लगता है कि हम मूडङ्ग का जायगो। उसे सब कुछ भूमता हुआ सा मागूम होता है। मानने की पतो की सा धीरे-धीरे मुकरी जा रही है। इस नाँद मागूम दाने लगता है। आँसू खेने लगती है और पर सो जाती है।

काही देर बाद जब एक दुःखद देवने के कारण उसकी नींद उपत्ती है तब यह बरबी की आर करपट पड़लती है। अभ्यासवश अनन्य भाव में बरबी की पीठ थपथपाती जाती है, जैसे उसे मुला रही हो। जगते बके हुये निराश्रम शरीर और अराशन मन पर नींद का मुहार अमो तक पैसा टापा है कि बरबी देर स मरी हुई पड़ी है इसको कुछ मुड ली जाने नहीं दे। वह अभ्यासवश जगती पीठ थपथपाती हुई खोरी के शर में करती जाती है 'रा भाड। आ भाड। आ भाड। आ भाड। आउउउ' ।

—डॉक्टर की फीस इयापन्द्र खोरी

यही यह भी समरण रहता पाटिर कि कहानीकार के मानम-भट पर त्रिग के ना का गवधिष्ठ प्रभाव पड़ा है उसे हा यह कथानक का गव दे देता है, पाटे निर

वह घटना उसके निजी जीवन में घटी हो या दूसरों के और अन्य व्यक्तियों के जीवन-घटनाओं को वह देखकर, पढ़कर या सुनकर ही जान पाता है। अतः प्राचीन भारतीय आधारों में प्रख्यात, उत्थाप और मिश्रित नामक तीन भेद कथानक के माने हैं। जिस कथावस्तु का मूल स्रोत पुराण, इतिहास या जनश्रुति हो वह प्रख्यात कहलाती है तथा उसमें कथानक की अभिव्यञ्जना-प्रणाली चाहे किसी भी रूप में क्यों न हो लेकिन पूर्णतया वह मूल कथा के अनुरूप ही होती है और उसमें घटनाओं के तथ्य परिवर्तित नहीं हो सकते। उत्थाप कथावस्तु पूर्णतः मौखिक होती है तथा उसका प्रेरणा स्रोत कहानीकार की मानसिक अनुभूतियाँ ही हैं और कथानक की पृष्ठभूमि में प्रख्यात की सी वास्तविकता नहीं होती तथा लेखक के सामान्य सत्य पर ही वह आधारित रहता है। वस्तुतः प्रख्यात कथावस्तु के वातावरण चित्रण में लेखक युग-विशेष की संकीर्ण परिधि में ही बंधा रहता है परंतु उत्थाप कथानक में वह वरुणनाशक के सहारे किसी भी घटना को अतीत वर्तमान एवं भविष्य जीवन का कर्ण विषय बनाकर अंकित कर सकता है और उसे कारुणिक वातावरण के सृजन में पूर्ण स्वतंत्रता रखती है। जब कोई कहानीकार प्रख्यात कथावस्तु को लेकर अपनी इच्छानुसार उसमें क्लृप्तमक परिवर्तन परिवर्धन या संशोधन करता है तब वह कथानक मिश्रित कहलाता है। कुराल कलाकार अपनी प्रतिभा शक्ति के फल पर प्रसिद्ध तथा नीरस घटनाओं को भी भावनाओं की सुपरता के योग से मौखिक, नवीन, मध्य और रुचिकर बना देता है तथा साधारण से साधारण बातों में भी असाधारणता और लौकिक घटनाओं में अलौकिकता ला देता है।

कथानक प्रख्यात, उत्थाप और मिश्रित नामक उक्त तीनों भेदों में से चाहे किसी भी प्रकार का हो परंतु स्वरूप की दृष्टि से उसके घटनाप्रधान चरित्रप्रधान, भावप्रधान और बहानामक नामक चार प्रकार होते हैं। घटनाप्रधान कथानक में घटनाओं या कार्य-व्यापारों की ही प्रधानता होती है तथा प्रत्येक घटना या कार्य व्यापार की पारिपरिक सम्बद्धता भी अपेक्षित है। इस प्रकार की कहानियों में परिश्र-विश्वास की ओर विशेष ध्यान न देकर घटनाओं को रोचक और कृतज्ञ-वर्धक बनाकर पाठकों का मनोरंजन करने की चेष्टा की जाती है तथा दैवी घटनाओं और अति मानवीय प्रसंगों के योग से उनमें अर्थ-व्यापारों की सीमा स्वामाबिधता से बहुत आगे बढ़ जाती है। पाठकों की जिज्ञासा-शक्ति चाहे इस प्रकार की कथा-नियों से शांत होती हो किंतु इनमें बला-चरित्र का मूर्धन्य नाम मात्र होने से उन्हें निम्नकोटि की समझा जाता है। जासूसी कहानियों की कथावस्तु इसी प्रकार की होती है और गोपालराम गहमरी जी पी भीपास्तव, बुर्गाप्रमाद् स्वामी आदि की अधिकांश कहानियों का कथानक इसी श्रेणी का है।

जैसा कि डा० श्रीकृष्णलाल का मत है "परिग्रहप्रधान कथानियों में लेखक का मुख्य उद्देश्य किसी परिग्रह का सुन्दर चित्रण होता है"। अन्य परिग्रहप्रधान कथानिक में परिग्रह चित्रण और विस्लेषण का ही प्रधानता ही जाती है तथा घटना और संयोग का महत्त्व गौण ही रहता है और कहानीकार किसी एक पात्र विशेष के सुन्दर परिचित्रण पर ही अपना ध्यान देता है। चूंकि संश्लेषण के कारण मानव परिग्रह के सभी अंगों और पक्षों का विशद चित्रण संभव नहीं रहता अतः कहानीकार केवल एक पक्ष विशेष का ही इस प्रकार अत्यन्त मायधानी के साथ चित्रण करता है कि परिग्रह पूर्णतः अंकित हो जाता है और अन्य सभी पक्ष अज्ञेय पक्ष होते हैं। साथ ही कहानीकार उसी पक्ष का चित्रण करता है जो कि परिग्रह के मुख्यतम गुण विशेष का शोभक होता है। परिग्रहप्रधान कथावस्तु में अहम्-त्याग, धीरता, प्रेम, शोभक पराजना इत्यादि विशिष्ट गुणों या अङ्गगुणों के प्रतीक पात्रों का ही परिग्रह अंकित किया जाता है, मंदिरलुप्तम शस्त्रों के प्रयोग में आरोहायरोह के अत्यात्मक क्रम द्वारा पुराण कहानीकार अस्मत्-निपुणता के साथ मानव को पारित्रिक उन्नतियों और विभिन्न परिस्थितियों में अविश्वस्य हीनेवासी उसकी पारित्रिक विपत्तियों का वर्णन-विषय घनाता है और जैसा डा० लक्ष्मीनारायण लाल ने परिग्रहप्रधान कथानिक के विषय में कहा है "इसका रूप अवेशात्मक मूल्य और पूर्ण अज्ञात्मक होता है क्योंकि जैसे कथानकों के निर्माण में घटा घटनाएँ, अर्थ-व्यापार विपत्तिल प्रपुत्र नहीं होने पर पारित्रिक अन्तर्मुख पात्रों की मानसिक उदात्तता और विभिन्न परिस्थितियों में अत्यन्त हीनेवासी उनकी समस्त परिग्रहगत विपत्तियाँ इसके निर्माण में अतिरिक्त होती हैं।" प्रेम-वर्ध की इपतरी, आत्माराम, पृथ्वी वाची, दीक्षा, शंकर मार, अन्तर्य शर्मो गुलेरी की इतने कहा या, प्रसाद की भिगारिन, दीपशशी, गुदा कर्षिका की तारी, ईश्वर की निर्मम, जाहरी अज्ञेय की रोज, छाया, पुत्र्य का प्रभाव आदि कथानकों की कथावस्तु परिग्रहप्रधान ही है।

भाष्यप्रधान कथावस्तु में मनोभावों का बिदलेपण किया जाता है तथा कथानक में प्रेम, महाबुद्धि, अज्ञान आदि विरलत भावों में से किसी एक की अभिव्यक्ति की जाती है और घटना तथा परिग्रह का विशेष महत्त्व नहीं दिया जाता। इसमें कथावस्तु का रूप अत्यन्त मूल्य तथा अमूर्त ही जाता है और वर्णनात्मकता एवं शक्तिगुणत्वकता का अभाव रहता है तथा कथावस्तु की स्थायता अर्थवत्ता और संकेतोपार्थक्य का अभाव ही होता है। अन्तर्दृष्टों का अंकन होने हुए भी इसमें अधीन भाव की भावना अभाव रूप से प्रकटित होती हुई जान पड़ती है और इस भावविषय की अभिव्यक्ति कथावस्तु की आधारशिला होने हुए भी अत्यन्त अल्प में पूर्ण होती है। प्रसाद

१. शकुन्तिक विन काश्य का विज्ञान—डा. पाण्डुराज्य (पृष्ठ ३१)

२. हिन्दी कथानकों की विज्ञान—डा. लक्ष्मीनारायण लाल (पृष्ठ २१०)

की तथा अज्ञेय की अभिकारा कहानियों में क्यावस्तु इसी प्रकार की है। वर्णन-प्रधान कहानियों की जिन्हें कि वातावरणप्रधान कहानियों भी कहा जाता है क्यावस्तु में वर्णन की ही प्रधानता रहती है। श्री बुद्धिनाथ भद्र 'कैरब' के शब्दों में "वातावरण प्रधान कहानियों में कथानक और चरित्र के विक्रम के लिए परिस्थितियों को संयोग प्रधान बना दिया जाता है। अतएव अपनी निर्दिष्ट भावना को अभिव्यक्त करने के लिए पात्रों की मनोनुकूल योजना कर लेता है और उसके लिए उनसे ऐसे कार्य कराता है जो उस विशेष भावना की पुष्टि करने वाले हों। पात्रों की चरित्रगत विशेषता उस वातावरण के अनुकूल भावना की समर्थक होती है और उसमें ऐसी सामर्थ्य नहीं होती कि वातावरण के प्रतिफल अपना कोई कार्य दिखला सके। मनुष्य परिस्थितियों का दास होकर किस प्रकार विशेष वातावरण में अपना जीवन तक व्यर्थ नष्ट कर लेता है, यही दिव्यज्ञाना ऐसी कहानी का लक्ष्य रहता है।" स्वयं ही, इस प्रकार की कहानियों में हृदयचित्रण एवम् वातावरण की सृष्टि हेतु कहानीकार चित्रमय शब्दों का प्रयोग करता है तथा कमी-कमी परिपार्श्व पर भी बहुत ओर दिया जाता है। इस प्रकार की क्यावस्तु में घटना-वैचित्र्य, चरित्र-विश्लेषण और भावसिद्धि की अपेक्षा वर्णन-वैचित्र्य को ही महत्ता दी जाती है तथा चूंकि कहानीकार को अपनी कल्पानिपुणता के प्रदर्शन के लिए उचित अवसर मिल जाता है अतः वह कवित्वपूर्ण, साहित्यिक सीधों से युक्त वातावरण का चित्रण सफलता के साथ कर सकता है। पंजीप्रसाद 'हृदयेश' की योगिनी, उन्माद, प्रेमपरिणाम तथा वेमपंद की रात-रज के तिल्लाही अचरार्कर प्रसाद की आक्षराक्षीप, बिस्तावी, स्वर्ग के लंबहर में, समुद्र-संतरण गोविन्दबल्लभ पंत की जूठा आम, सुदर्शन की द्वार की जीत इत्यादि कहानियों की क्यावस्तु वर्णनप्रधान ही है। इन चार श्रेणियों की क्यावस्तु के अतिरिक्त कथानक के हास्यप्रधान ऐतिहासिक, प्राकृतवादी नामक कुछ अन्य प्रकार भी कहे जाते हैं लेकिन यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो इन चार श्रेणियों में दो द्वेष प्रकार भी आ जाते हैं अतः उनका स्वतंत्र विवेचन अप्रासंगिक ही है।

कहानी की क्यावस्तु का संक्षिप्त होना अत्यंत आवश्यक है और इसकी रचना अत्यंत वैज्ञानिक ढंग से तथा क्रमिक विकासके रूप में ही होनी चाहिए। चूंकि इसमें एक या अधिक घटनाएँ क्रमबद्ध रूप से संमिलित रहती हैं अतः घटनाओं का परस्पर सम्बन्ध रहना भी आवश्यक है तथा कहानीकार का भी मूलमंत्र admittance except on business must be the short story writer's motto यही होना चाहिए। बसुन्त बुन्तल कहानीकार का यही लक्ष्य रहता है। स्मरण रह किम कथानक के अंग दिग्ग-भिन्न होते हैं इसमें भिन्न भिन्न

घटनाएँ एक कच्चे भागे के सहारे गूँधी हुई प्रतीत होती हैं। उनमें पारस्परिक सम्बन्ध रहता ही नहीं तथा कथावस्तु का विश्रुत कार्य-विषय पर न होकर किसी ऐसे रूपक अथवा ऐसी घटना पर हाता है जिसके पारों पार विस्तरी हुई घटनाएँ कच्चे भागे से जुड़ी रहती हैं। वस्तुतः ऐसी कहानी किसी व्यक्ति विरोध के कार्यों के इतिहास का रूप ग्रहण कर लेती है। उदाहरणार्थ—

“कमला ने मायके में एक घात मीची थी कि धन मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन मात्र है। किन्तु यापू साह्य इस सिद्धांत में सहमत नहीं थे। यह धन को आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन ही नहीं, बरज उपामना की वस्तु भी समझते थे।

मायका विरोध सम्पन्न न था किन्तु वहाँ कमला को ये सभी मुख्य धे जा साधारणतया लड़कियों को माता पिता के घर प्राप्त होते हैं। अपने माता-पिता की अकेली बेटी होने के कारण मायके में कमला पर विरोध मान था। इस पूर्ण स्वतंत्रता थी, इसी इच्छाशक्ति पर किसी दूसरे का आधिपत्य न था किन्तु समुदाय में परिस्थिति और थी। यहाँ स्वतन्त्रता नहीं पराधीनता थी।

हृदयनारायण के स्वभाव में मुक्ति का अभाव था। एक धैर्यमूया को ही ले लीजिये। आपका कोई पत्र ऐसा न था जो अपने जीवन की अंतिम पंक्तियों में गिन रहा हो।

अपने विर-भ्रमिन्त स्वप्नों पर इस प्रकार गूँज होता ईश्वर कमला से पड़ी। पर काटे जाता था। उसका चित्त हर समय मुरझाया हुआ सा रहता, किसी में बात-चीत करना अस्वाभाविक न लगता। अन्ततः न अस्ति होने लगी।

रातें रातें दिन पीने लगे। जब कमला का स्वभाव पति के स्वभाव से लड़ते-लड़ते पूर्णतया शिथिल हो गया तो प्रतिक्रिया का आरम्भ हुआ। पर की काय गानेशानो प्रवृत्ति मई पड़ने लगी। धारे-धारे बढ़ उस पर से दिसमिल गई और वही के जीवन में भी। नारी मुक्त समर्पण की मद्दृष्टि ने पुत्र के रीतिरूप के सम्मुख मिर नुचा दिया।’

— अंततः रातें भरमादिति

यही कमला का स्वभाव, मायके का दिग्दर्शन हृदयनारायण का स्वभाव, कमला की निरारा और धन में इसका संतोष आदि सभी घटनाएँ एक कच्चे भागे में बाँधकर भाग बनाई गई प्रतीत होती हैं धन मनुष्य कथा में यह आचरण नहीं है जो कि हममें रहना चाहिये था। परंतु जिस कथावस्तु के अंग परस्पर सम्बद्ध रहते हैं वे स्वाभाविक रूप में ही भागे बंधन हैं और अन्वेष्य अंग का दूसरे अंग से पूरा पक्ष पलित सम्बन्ध रहना है तथा यदि एक घटना भी रह जाय तो सम्बन्ध

क्यानक क्षिप्र मित्र गृहलला की भौति मूलने लगता है । स्मरण रहे समस्त घटनाओं के पीछे एक शक्ति रहती है जो उनको यथा-स्थान सञ्चाकर सेनापति की भौति संचालित करती है और घटना में पात्र सजे रहते हैं तथा पात्रों में घटनाएँ । ये सभी शक्तियाँ परस्पर मिलकर अंतिम फल की ओर बढ़ती हैं और अंत में उसे प्राप्त भी कर लेती हैं । एक उदाहरण देखिए —

“नजर उठाकर नाथ की ओर देखा—आपकी दृष्टि साल्टेन के चित्रों की ओर न थी, आप बाँई ओर पहिली तीन आधी लाइनों में बैठी हुई महिलाओं की ओर देख रहे थे । विरोध निरूपण करने पर जान पड़ा पहिली लाइन की पहिली कुर्सी पर ही उसका लक्ष था ।

कौहनी से टोहकर देख कर मैंने पूछा— ‘क्या यही क्षेत्र पर मुन रहे हो ?
मेरे घरन का उत्तर न है उसने पूछा—‘जानते हो वह कौन है ?’
वह वैहरा मेरा विरोध परिचित नहीं था । पूछा—‘क्यों ?’

एक गभीर निद्रयास छोड़ नाथ ने कहा— ‘देखते नहीं आधुनिक रमणी समान में जिन तीन ‘तस्वरों’ सुराक्षित’ सुसंरुता और मुल्लहना का होना जरूरी है उनका इसमें कितना प्राचुर्य है ।

नाथ का कहना ठीक था । आधु, शस्त्र की व्यवस्था ने मुग्धावस्था को पार कर जाने पर भी वहाँ मोह की मात्रा घटित थी । जल के किनारे उगे पृष्ठे हुए, वायु के झोंके से लहराने हुए कास के समान पग-पग पर लपकते हुए उनके क्षेत्र लता के समान लचीले शरीर से लावण्य फड़ा पड़ रहा था । मुख के इस कल्पेपन से—मैं नहीं समझता वह पाइडर होगा—कामार्थ की पुरि हो रही थी । उस पर वह मीनी पोशाक, पिना प्रेम की चिमटीदार पैतरु, मस्तिष्क के सब बिम्ब मीमूँ थे ।

नाथ की आर देखकर मैंने पूछा—‘प्रेम तरंग (Love Wave) का आर हा रहा है ?’

गंभार मुद्रा से उसने उत्तर दिया—‘रूप रही ।

व्याख्यान समाप्त होने पर जब वह रमणिया में भ्रष्ट रमणी, ललित उपेक्षा में आधे सिर पर अंचल छिद्रये, जिना घोड़ का प्याइज पहिरे नाक पर चिमटीदार ऐनक को सँभालते हुए खला ता नाथ सचमुच मंत्रमुग्ध की भौति उसकी ओर देख रहा था ।

उपस्थित जनता में हम लोगों के परिचित भीषुत विष्णु आर भीमती विष्णु थे । पूछने पर पता लगा, हम भव्य रमणी रतन का नाम था—नुमाती क्या मेहता ।

विष्णु ने नाथ ने पूछा ‘क्या इनसे परिचय नहीं हो सकता ?’

विष्णु ने परिषय की इच्छा का कारण जानना चाहा। मैंने समझया कि नाथ पर प्रेम था वह बल गया है और वह भी प्रथम दृष्टि में।

विष्णु ने निरुत्साह की हँसी हँसकर कहा—'असम्भव। वह देखने में जैसे संगमरमर की मूर्ति है भीतर से भी वैसे ही ठंडी और उर्ध्व गूथ्य।'

श्रीमती विष्णु ने अभिमान से जरा सिर ऊँचा कर कहा—'उमने विवाह न करने की प्रतिज्ञा कर ली है। कितनी ही जगह यह इनकार भी कर चुकी है।'

विष्णु ने विद्रुप से कहा—'वह कामिनी का आधुनिक सम्स्करण है। पुराने जमाने के काम के पौषों याएँ उस पर व्यर्थ है।'

श्रीमती विष्णु ने नारी जाति के सम्मान की रक्षा के अभिप्राय में विरोध में कहा—'श्री समाज की सेवा को उमने अपने जीवन का व्रत बना लिया है। उसी में वह अपनी आयु लगा देना चाहती है। इसमें पुराई क्या है?'—और भी अधिक उम्माह से उम्होंने कहा—'भाई विवाह यह कभी नहीं कर सपती। विवाह विम लिपि लिखा जाता है, यह वह जानती ही नहीं।'

सहानुभूति से मैंने नाथ की ओर देखा, यह पक्ष की भाँति शपथ था। उसने कहा—'आप एक बूके उँहें अपने यहाँ निर्मात्रित कीजिए, शेष देखा जायगा।'

निमंत्रण किस यद्दाने दिया जाय ? यही बड़ी भापी समस्या हो गई। नाथ को कभी कभी ऐसी सूझ जाती है कि जिस पर किसी राष्ट्र का धनना विगड़ना निमर हो सकता है। विष्णु के कंधे पर हाथ रख उमने कहा—'क्यों नहीं तुम मेरे विदेश से लौटने के उपमस में एक पार्ति दे देते ?'

क क क क

निमंत्रितों की संख्या परिमित थी। मिस मैहता समय से कुछ देर बाद एक मोटर पर उपस्थित हुईं। नाथ पहिले ही मामूस कर चुका था कि मिस मैहता के यहाँ अपनी कार नहीं है। इससे धँदाजा यह दृष्य कि कार मँगनी की है। मिस मैहता के हाथ में कैमरी का यह ग्लाजहिक था जो शायद ही कोई गंभीर पाठक पढ़ता हो। इसका बुझारी जी की साहित्यिकता का भी अनुमान हो गया।

बुझारी जी ने आपी कैमरी और पंचबी में कहा—'So sorry मैं भेट हो गई—और उपस्थित लोगों का मुककर अभिवादन किया। श्रीमती विष्णु ने परिषय बताया—'मिस इस मैहता, जनविद्।' और फिर नाथ की ओर देगकर कहा—'मि० प्रमादनाय दुःख, आप दण्डित होषों में ए माम धमए करके जाये है।'

नाथ की प्रराग्न गंभीरता का र भङ्गा की सीमा न थी। उसने विनय से कैत्र

तक मुकन्दर परिधाय प्रहस्य क्रिया और सब तक मिस मेहता बतल की गर्दन की तरह लटक कर बैठ नहीं गईं सब तक खड़ा ही रहा।

नाय की पहिली प्याली समाप्त होते न होते गोष्ठी में प्रसंग पल पड़ा दक्षिण द्वीपों पर। नाय ने कहा—'योरप की अपेक्षा इसकी सहानुभूति परिाया की संरक्षित से ही अधिक है, इसीलिए उसने यूरोप न जाकर प्राचीन सभ्यता के इतिहास के 'असमम' इन द्वीपों की ही यात्रा की, और जो कुछ बसने इन महत्त्वपूर्ण द्वीपों में देख पाया वह संसार के किसी भी अन्य देश में अप्राप्य है। बसने-बोक्तने बोलते इन द्वीपों की स्वाभाविक समस्याओं से विरोध जानकरही प्रकट की।

मिस मेहता ने अत्यंत गंभीरता से प्रश्न किया—Indian Women (भारतीय स्त्रियों) की अपेक्षा आपने वहाँ की Women (स्त्रियों में) क्या फरक देखा ?

कतार में निहायत वाकपटुता से नाय ने योरप और अमेरिका की सभी स्त्री संस्थाओं का बर्णन शुरू किया। मजा यह कि किसी गधे ने न पूछा कि तुम योरप या अमेरिका क्या गये और उसका यहाँ के प्रसंग से क्या सम्बन्ध है ?

नाय ने मौख्य देश मिस मेहता को कई दके 'मिस ऊपा' और 'ऊपा जी' कह कर सम्बोधन किया और फिर के फिर के अंग्रेजी में बोस कर यह प्रकट कर दिया कि इन यात्रा के बाद से अंग्रेजी में बोलना ही उसके लिए अधिक स्वाभाविक है। वह यदि पंजाबी बोलता है तो केवल बूझों की सुविधा के लिये।

नाय ने कहा—'जितना धन और भ्रम देश में राजनैतिक आन्दोलन और दूरी समसामयों पर व्यय हो रहा है यदि उसका आपा भी स्त्रियों की उन्नति पर हो तो फल भागुने से अधिक ही सकता है।' मिस मेहता मुकन्दर फड़क उठी। नाय ने कहा—'सुविधा होते ही वह इन विषय पर एक पुस्तक लिखने वाला है। लेकिन यह भ्रम दरअसल स्वयं स्त्रियों के करने का है। पुरुषों का अधिकार केवल सहायता करने का है।'

नाय की यह वक्तव्यता मिस ऊपा को देपवाणी के समान जान पड़ी। नाय ने कहा—'इस कार्य के लिए देशभगी आंदोलन और संगठन की आवश्यकता है। भीमती विष्णु को सम्बोधन कर मिस मेहता के अभिप्राय से उसने कहा—'स्त्रियों केवल पुरुषों की सेवा का ही साधन क्यों बनी रहें, उनका अपना स्वतंत्र जीवन क्यों न हो ? इस आन्दोलन की घुरी शेर आप लोगों को पढ़ना पारिये।'

नाय के इस व्याख्यान से भीमती विष्णु भी बहुत प्रभावित हुईं। मिस मेहता ने अंशमत् स्वर में कहा—'मैं भी कुछ निरा रही हूँ। यदि आपको समय हो तो कुछ मेरी सहायता कीजियेगा।'

में नाथ के समीप ही था। त्वांसने का पहाना कर कमाल मुँह के सामन पर मैने धीरे मे उसके फान में कहा—‘मान गये गुरु।’

नाथ को उत्तर देने की वृत्त नही थी। मिन मेहता क उत्तर में नाथ ने जा कुछ कहा उसने मालूम हुआ कि हमने अपना जीवन समाजिक क्रान्ति के लिए अर्पण कर दिया है। हम प्रकार के किसी भी कार्य में सहयोग देने के लिए यह ‘सयत्ता’मायन तत्पर है।

गांधी समाज हूँ। आमंत्रित लोग चलने को तैयार हुए। नाथ ने मिस मेहता की ओर देखकर कहा—‘आपकी ओर तो आइ नही अभी तक।’

मिस मेहता ने बड़ेसा से उत्तर दिया ‘कैसी क्या जरूरत है, धूप तो पनी ही गई है, मुझे समीप ही एक प्रेन्च के यहाँ होते हुए जाना है।’

नाथ यह तो जान ही चुका था कि मिस मेहता पुरानी आगरफली में रहती हैं। उसने अपने सोने की शिष्टयाप की ओर देख कर कहा - समय वा अधिक है नही, मुझे ही एक जगह जाना है, चाँचुकी भी जाना है। एक ब्रह्मी मगया हो।

यह अचरामी का काम मेरे सिर पड़ा। हम कोम्ती हुए समीप के मसान से प्येन कर एक टैक्सी मंगा कर मैने टाडिर कर दी। मेरी अनुपस्थिति में ही उन दानों के गाड़ी में एक साथ जाने की बात तय हो गई।

× × × × ×

गाड़ी की आवाज आने ही मिस मेहता हाथ में लिखत लिए परामर्श में द्रष्ट हूँ। नाथ ने मुग्धराकर कहा—‘सय या सिर हा जाऊँगा परंतु गोबर समय पर मे ही आया।’

अपनी पत्नी के ऊपर उठाने हुए मिस मेहता ने कहा - ‘आप तो दिल्लीज ठीक समय पर ही आये हैं।’

नाथ ने उत्तर दिया—‘पिरेरा में समय का इतना त्याग करना पड़ना है कि मुझे अब उमठी आइत हो गई है। जरा भी अव्यवस्था होने स बड़ी अन्तर भी होने लगती है।’

समय के पदवात मौसम का पर्ना पना। नाथ ने बताया साहीर की अर्पण सदारानपुर का मामल पटी अर्पण है।

तब काम की बात शुरू हुई। नाथ ने आपन ४ स्त्री-समाज स भारत के स्त्री समाज की गुपना कर कह तउचीजें मुबार की पैरा की। हिन्दू समाज के परिपरिष्ट त पन की आवापना हूँ। इत गभीर विवेचना की मिस मेहता ने डिहामु भाप मे गुना। सतपीन का बीश बगल दुमला लाइन आइ।

नाथ ने चाय की प्याली की ओर देखकर कहा—'यह देखिये, छोटी-छोटी बातों से जीवन का कितना घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। यह प्याली कितनी मामूली चीज है परन्तु इसका भी हम पर कितना प्रभाव पड़ता है। किसनी दूर से मैं इसे देख रहा हूँ और इसे चुननेवाले की क्या सूझ और परस्य की सहायना कर रहा हूँ। इससे चाय पीने में एक प्रकार का विशेष संतोष होता है। एक भैया जीवन है जिसमें सब काम मशीन की तरह होता है कला और मौख्य की घसमें पचा नहीं। कष्टी है शायद भावश्यकता से कुछ बढ़ी है परन्तु मेरे रहने लायक चार कमरे भी डंग के नहीं। बढ़रे को मतलब है अपनी तनख्वाह से। बंगले के चारों ओर मासी पूल न थोकर तरकारी घोवा है, शायद इससे कुछ आमदनी उसे हो जाती हो। इस वक्रे यह निश्चय करके आया था कि घर को घर बनाऊँगा परन्तु सोचता यह हूँ कि अपनी परस्य से जो कुछ चुनकर लूँगा उसे स्वयम् भी पसन्द कर सकूँगा या नहीं। भैया हिमाय तो यह है कि दुकानदार ने जो कुछ सबसे अच्छा बतवा दिया ले लिया। लेकिन दुकानदार को मतलब रहता है मयसे पहिले मरी चीज निकाल देने से।'

'भाय कुछ फर्नीचर खरीदने गया था। शौक जरूर है परस्य हो न हो। आपके यह ठग और सिस्टम देखकर ईर्ष्या होती है। कबरा मेरी भी जगह ऐसी ही होती। इस कालीन को ही देखिये क्या सूझ टेस्ट है। ओर फिर जिस बजह ने पिछाया गया है ?

मैंने भी एक कालीन खरीदा है, जब से बिल निष्कलते हुए— यह देखिये दुकानदार ने बसली ईरानी बतवाया है भागे उसका ईमान जाने—मिस मेहता ने बिल की ओर देखा उनही आँखें पड़ गई—फर्नीचर के बारे में भी मुझे दुकानदार की ही मान लेनी पड़ी। यह देखिये, ओफ ! वह शायद गाड़ी है, हाँ यह देखिये—अच्छा आप गाड़ी कौन सी पसन्द करती हैं ?

मिस मेहता की फनपटियों पर खून का धेग पड़ गया। उम्मी एक सट्टेली के यहाँ 'ओवर लैण्ड' गाड़ी थी और दूसरी के यहाँ 'यूइक'। मोंपते हुए उमने कहा—'ओवर लैण्ड भी कुछ घुरी नहीं बस यूइक सस्ती रह सकती है।'

नाथ ने कहा—'ठीक परन्तु मेरी हालत देखिये ! पिता जी ने एक फोर्ड खरीदी थी। उमी छुट्टे पर सताप किये घंटा था। अब एक आम्बिन और एक यूइक मीलन ले चला हूँ। आम्बिन घूमने फिरने के लिये और यूइक संतून मरठ रहनी चार देहटादून आने जाने के लिये। यह नहीं कि मैं निरा जड़ हूँ परन्तु केवल अपनी एक जान के लिये बूढ़ करते म्यानि मी होती है।

इस मरलता म मिस मेहता की ममबदना पिपल पड़ी। उगदोंने एक दीप निदयाम दीड़ कर कहा—'अपेला जीवन बाम्ब में नीरम होता है।'

उगदोंने पुफारा—'माया।

नाकर हाविर हुआ। उन्होंने कहा—‘यह पाय ठही हो गइ नये मिरे म बना लाओ। लडा मे नाथ ने कहा—‘यही देख लीजिये, यही मेरा हाल है। सभी काम इस ढंग म होते हैं। यहाँ आपकी समवेदना ने मुझ बचा लिया। पर्ना दा ही राख धे। या तो टखी पी जाता या, फिर बिना पिये ही रइ जाता।

एक विपिग्र अनुभूति स मिस मेहता क घोड़े की स्वया मममत्ता उनी आर आँगे उन्मीलित प्राय हा गइ।

सौपा था—‘सुदे पाँच तक नाथ साँठ आण्गा परन्तु जाकर पही लगमग दम बडे के आप आये। पूछा—‘गुरु इनकी देख फर्रौ धे?’

उत्तर मिला—‘मिस मेहता के साथ सिनेमा चला गया था।

तीन दिन तक नाथ प्राय गायब—मा रहा। चौथे रोज गठारनपुर जाने मे पदमे इन्ने अत्यंत गंभीरता मे कहा—‘कम म कम जाकर मुझ छोटी का रग रूप ती टीक फरना है। तुम कपहरी खुलने ही मेरी दग्गान मिबिल सैरिज के लिये दे देना।

मने बिसमय मे पूछा—‘क्या?’ उमने गंभीर भाव मे कहा—‘यही।’

इस समाचार मे मेरे पैर का पानी उबलने लगा। दौड़ा दौड़ा भीमती विष्णु के यहाँ पहुँचा और गबर मुनाकर कहा—‘देख लिया भावी? उन्होंने अपनी भूल खोजार न कर कहा—‘तो इसमें दर्ज ही क्या? दोनों मिलकर ग्यु समाज सेवा करेंगे?’

— समाज सेवा यशपान

इस बहानी में पटना की प्रत्येक घात पात्रों मे इस प्रकार ध्रु मर्कंध रखनी है कि उनका अभिन्न कृतिब ही जान पड़ता है और घातक में यही पटना की घधा वगु की मकलता एवं उदृष्टता का लक्षण भी है।

साथ ही बयानक का प्रवाद सुंदर आर स्वाभाविक रूप म आगे बढ़ना चाहिए गया घटनाओं में इस प्रकार का तारतम्य रह बि ये दिग्गी दुइ न जान पड़े आर न बयान दुबेसी गइ प्रतीत हो। बहानीकार के लिए यह आवश्यक मरी है कि यह प्रदेर पटना का प्रमश उपस्थित करे अतएव मनोवैगों को तरंगित करने क लिए कर बहानी को बलाग्नक रूप देने के लेनु यह बयानक के प्रारम, मध्य या अन्त की सिमी भी पटना को मरप्रथम अक्षिण पर रखना है क्योंकि पटनाओं के इम विषयक द्वारा बयावगु में आमुस्यता और कौतूहलता की अमिष्टि डानी है अन्वधा बहानी नीम और आदर्शहीन हो प्रतीत होगी। यदपि विपारकों ने वस्तुविन्यास की दृष्टि में बयावगु क आर/म मध्य आर अन्त नामक तीन मुख्य खंड माने हैं लेकिन बयानक पर विपार करने समय प्रारम में हमें बहानी के शोभक पर ही विपार करना चाहिए क्योंकि शोभक शरकर ही वस्तु म र्याष्टि

नाय ने चाय की प्याली की ओर देखकर कहा—'यह देखिये छोटी-छोटी बातों में जीवन का कितना पनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। यह प्याली कितनी मामूली चीज है परन्तु इसका भी हम पर कितना प्रभाव पड़ता है। कितनी देर से मैं देख रहा हूँ और इसे चुननेवाले की कला सूक्ष्म और परस्म की सराहना कर रहा। इससे चाय पीने में एक प्रकार का विशेष संतोष होता है। एक मेरा जीवन है जिस सप काम मरगिन की तरह होता है कला और सौंदर्य की बसमें चर्चा नहीं। ओर है शायद आवश्यकता से कुछ पक्की है परन्तु मेरे रहने लायक चार कमरे भी बंग ब नहीं। बहरे को मतलब है अपनी जनकवाद से। बंगले के चारों ओर माली पूल न ओकर तरकारी बोता है, शायद इससे कुछ धामदनी उसे हो जाती हो। इस वक्रे यह निश्चय करके आया था कि घर को घर बनाऊंगा परन्तु सोचता यह हूँ कि अपनी परस से जो कुछ चुनकर लूंगा उसे स्वयम भी पसन्द कर सऊँगा या नहीं। मे दिसाय तो यह है कि दुश्मनवार ने जो कुछ सबसे अच्छा वता दिया ले लिया लेकिन दुश्मनवार को मतलब रहता है सबसे पहिले मदी चीज निकाल देने से।'

'आज कुछ फर्नीचर खरीदने गया था। शाक जकर है परन्व हो न हो। आपके यह वग चार सिस्टम देखकर ईर्ष्या होती है। चारा मेरी भी जगह वैसी ही होती। इस फालीन को ही देखिये क्या लूप टेस्ट है। और फिर जिस वजह से विद्यया गया है ?

मैंने भी एक फालीन खरीदा है, जेब से पिल निकलते हुए— यह है। दुश्मनवार ने इसनी ईर्ष्या बताया है आगे उसका ईमान जाने—मिस मेहता बिय की ओर देखा उनकी आँखें यह गई—फर्नीचर के बारे में भी मुझे दुश्मनव की ही मान लेनी पड़ी। यह देखिये, ओफ। यह शायद गाड़ी है, हाँ यह देखिये—अच्छा आप गाड़ी कौन सी पसन्द करती हैं ?

मिस मेहता को फनपट्टियों पर स्नू का वेग बढ़ गया। उनकी एक महसी के यहाँ 'ओवर लैण्ड' गाड़ी थी और घूमरी के यहाँ 'मूरक'। खेपते हुए उसने कहा— 'ओवर लैण्ड भी कुछ घुरी नहीं बस मूडक मन्ती रह सखती है।'

नाय ने कहा—'ओफ परन्तु मेरी हालत देखिये। पिता जी ने एक फोर्ड खरीई थी। उसी छुट्टे पर सताप किये पीठा था। अब एक आम्बिन और एक मूडक मीमून ले बसा हूँ। आम्बिन घूमने फिरने के लिये और मूडक मखून मेरठ, बीहली और देहरादून आने जाने के लिये। यह नहीं कि मैं निर जड़ हूँ परन्तु केवल अपनी एक जान के लिये कुद करते म्बानि सी होती है।

इस सरलता म मिस मेहता की सम्बेदना विफल पड़ी। उन्होंने एक दीप निदयाम छोड़ कर कहा— 'अपेक्षा जीवन आम्बन में नीरम हाता है।'

उन्होंने पुकारा—'माया।

नीकर हाजिर हुआ। उन्होंने कहा—‘यह पाय ठंडी हो गई नये मिरे स बना लाओ। लग्ना में नाथ ने कहा—यही देख लीजिये, यही मेरा हाल है। सभी काम इस ठग स होते हैं। यहाँ आपकी समवेदना ने मुझे बचा लिया। पर्ना दो ही रातें थे। या तो टक्की पी जाता या, फिर बिना पिये ही रह जाता।

एक विषिग्र अनुभूति से मिस मेहता क चहरे की त्वचा मजममा उठी और शौंने इन्मीलित प्राय हा गई।

मोषा था—मादे पाँच तक नाथ लीज आण्गा परन्तु जाकर पही लगभग दस घंटे के आप आये। पूछा—‘गुरु इतनी देर क्यों थे?’

उत्तर मिला—‘मिस मेहता के साथ सिनेमा चला गया था।

तीन दिन तक नाथ प्राय गायब-स्य रहा। चौथे रोज मठारनपुर जाने से पहले इतने अत्यंत गंभीरता से कहा—‘कम स कम जाकर मुझे कोठी का रंग रूप तो ठीक करना है। तुम कचदरी मुझसे ही मेरी इग्यात्म मिथिल मैरिज के लिये दे देना।

मने विरमय स पूछा—‘क्या ? उसने गंभीर भाव स कहा—‘यही।’

इस समाचार स भिरे पैर का पानी उड़लने लगा। दौड़ा दौड़ा भीमनी विष्णु के यहाँ पहुँचा और खपर मुनाकर फटा—‘देख लिया माषी?’ उन्होंने अपनी शूल खीकार न कर फटा—‘ता इममें दर्ज़ ही क्या ? दोनों मिलकर गृह समाज सेवा करेंगे?’

— समाज सेवा यशपाथ

इस बदानी में घटना की प्रत्येक घात पात्रों स इस प्रकार स सम्बन्ध रखती है कि उनपर क्रमिक क्रमिक ही जान पड़ता है और वास्तव में यही बदानी की सघातानु की सततता एवं उरकृतता का सफल भी है।

साथ ही कथानक का प्रयाद सुन्दर और स्वाभाविक रूप स आगे बढ़ना चाहिए तथा घटनाओं में इस प्रकार का तारतम्य रह कि वे दिग्गदी दुइ न जान पड़े कर न बनान् शकसी गह प्रतीत हों। बदानीशर के लिए यह आवश्यक नहीं है कि इ प्रत्येक घटना का प्रसारा उपस्थित करे अतएव मनोवेगों की तरफिन करने के लिए य र बदानी को कलात्मक रूप देने के हेतु वह कथानक के प्रारम्भिक स घातों की शिमी भी घटना को मध्यमम अंशिन पर सजता है क्योंकि घटना के लिए विषयव द्वारा सपात्रानु में आनुभवता और वास्तव्य की कल्पना है कि घटना घटना नीरम और आकर्षक ही प्रतीत हों। यही विचारों के सतुविन्द्यम की दृष्टि स कथासु के अंत, नाथ कर स घटना के अंत में घात माने हैं ऐतिहासिक कथानक पर विचार करते हैं कि घटना के अंत में घात पर ही विचार करना चाहिए क्योंकि घटना के अंत में घात के लिए

कहानी की सुन्दरता का अनुमान कर लेते हैं। कहानी पर शीर्षक सुन्दर, मोहक और आकर्षक होना चाहिए तथा उसमें न केवल कथावस्तु का ही कोई उद्देश्य साधन हो अपितु साथ ही विशिष्टता भी अपेक्षित है। कहा जाता है कि जिस प्रकार किन्हीं बड़ी वृक्षों में वातायनों तक को समाना पड़ता है उसी प्रकार कहानियों में भी शीर्षक का आकर्षक होना परमावश्यक है।^१ कहानी का शीर्षक कितने राष्ट्रों का हो इसके संबंध में कोई भी निश्चित नियम नहीं है और एक राष्ट्र से लेकर कभी-कभी दुखिया में फामे करूँ मोरी सजनी, गंगा गंगदत्त और गांगी, कुछ समझ न सका पन्द्रह रुपये पारह आने जैसे बड़े शीर्षक भी कहानियों के रहते हैं। किसी भी कहानी का शीर्षक कहानी के मुख्य पात्र के नाम पर या प्रधान विषय भाव या रस के आधार पर, अथवा प्रधान घटना या मुख्य वस्तु अथवा दरयावली के अनुसार रखा जा सकता है। कभी कभी वह किसी स्थान विशेष का भी चोख होता है और कभी-कभी किसी प्रचलित वहावत या लोकोक्ति पर ही कहानीकार शीर्षक के रूप में चुन लेते हैं जैसे कि 'चूँट के पट खोखरी' तथा 'कीयज्ञा भई न राख'। स्मरण रहे केवल इतना ही आवश्यक नहीं है कि शीर्षक आकर्षक रोचक और कर्तृहृत्प्रद हो अपितु उसका कथावस्तु के साथ सामंजस्य भी अपेक्षित है। साथ ही शीर्षक और कहानी का अत्योन्य सम्बन्ध आवश्यक है तथा कहानी के कथानक के अनुरूप ही शीर्षक होना चाहिए और शीर्षक के अनुसार विषय वस्तु का प्रसार भी होना चाहिए।^२

वस्तुतः शीर्षक के पश्चात् कहानी आरंभ कर दी जाती है और यों तो कहानियों पर आरंभ करने की प्रणालियाँ पाँच प्रकार की मानी जाती हैं जिन पर कि हम शीघ्र तत्त्व पर विचार करते समय विस्तार से प्रवेश करेंगे परन्तु

१ A good title is apt, specific, attractive, new and short.

—Short Story Writing By Charles Barret, pp 67

२ While a good title is essential, it is a great mistake to have a startling or sensational title followed by a quiet little character sketch. Keep the title in its proper proportion to the nature and interest of the story.

—The Craft of the Short Story By D Maconochie pp. 25

३ कहानी आरंभ करने की पाँच प्रणालियाँ इस प्रकार हैं—

- (१) किसी दृश्य विषय को चित्रित करत हुए।
- (२) घटनाओं को संक्षिप्त करते हुए।
- (३) पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप द्वारा।
- (४) किसी निश्चित विषय का अनुकरण।
- (५) किसी पात्र विषय के जीवन का परिचय देने हुए।

यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि एडगर एलन पो (Edgar Allan Poe) ने—

If his very initial sentence is not to the out-bringing of this effect then he has failed in his first step' नामक उक्ति के अनुसार एडगर पो ने कहा है कि यदि कहानी का प्रथम वाक्य ही उसके प्रभाव की ओर संकेत करने वाला नहीं है तो फिर कहानीकार का अपने प्रथम प्रयास में ही असफल समझना चाहिए। यस्तु कहानी का आरंभ ही उसका प्रवेश द्वार है तथा उसमें हमारी पकड़वलाता को आपस करने की प्रथम क्षमता होनी चाहिए जिससे कि वह ऐसा आकर्षण प्रस्थित कर सके कि हमारा मानस उसको पढ़ने के लिए स्वाभाविक ही उत्प्रेरित हो उठे। जैसा कि कहा जाता है 'The first few lines of a story have been well described as the author's letter of introduction to the reader अर्थात् कहानी का यह भाग पाठकों का उसका परिचय देता है अतः परिचय ऐसा होना चाहिए कि पाठकों पर कहानी का प्रभाव पड़ सके इसलिए आरंभ की कुरान अभिव्यक्ति पर ही कहानीकार का धन लापय निभर रहता है। डॉ० मूयसात शास्त्री के शब्दों में "जिस प्रकार टोल के अग्रभाग पर प्रहार होते ही उसका मारा पोल मुगुरित हो उठता है इसी प्रकार कहानी की नाक पर आंग पड़ने ही उसकी समग्र शैल्यक्ति पड़कड़ा उठती पाहिये।'

कहानी का यह अंग कथापत्र का प्रस्तावना भाग भी कहा जाता है अतः उसमें कहानिका के प्रायः समस्त धीव निहित रहते हैं तथा साथ ही मुख्य पात्रों का परिचय और परिस्थितियों का चित्रण भी किया जाता है। विचारपूर्वक देखने पर हमें वास्तविक समझना या संकेत भी इसी प्रस्तावना भाग में मिल जाता है। स्मरण रह कहानी का आरंभ के लिए यह आवश्यक नहीं है कि यही वास्तविक आरंभ हो अपितु कहानी की कथापत्र के आरंभिक भाग में आकर्षण की प्रतिष्ठा हो उसकी प्राथमिक आकर्षकता बही जानी है क्योंकि उसी की प्रेरणा से पाठक संशुद्ध मा हार संतुष्ट कहानी का पढ़ने के लिए उत्सुक हो उठता है। जैसा कि हमें पत्र पुर ह कहानी का आरंभ पाठे इसी विवेक विधि, चरना, वातावरण, परिचय विवेक का ध्यान द्याय हो ता फिर किसी गहनतम कथोपकथा द्वारा सिद्धि उम्में बुद्धि ऐसा वास्तविक अर्थ होना चाहिए कि हममें कहानी को पढ़ने की उत्सुकता उत्पन्न हो कर रहस्योद्घाटन की आरांभ में हम उन अर्थों पर पड़े। इस प्रकार कहानी का यह भाग कथापत्र हस्ति में कहानीकार की कुरानता की हस्ति का जानक है। कहानियों के आरंभ करने की प्रकृति के बुद्धि उपाहारा देना यही कथामगिक न गणा।

पणन के साथ आरंभ होने वाली कहानियों में किसी भी दृश्य, व्यक्ति या वस्तु के वर्णन से क्या आरंभ की जाती है। प्रसाद जी ने अपनी कई कहानियों के प्रारंभिक भाग में आकर्षक वातवरण प्रस्तुत कर शनैः शनैः कहानी के विषय से पाठकों को परिचित करा दिया है जिससे कि पाठक मंत्रमुग्ध भाव होकर कहानी के अध्ययन के लिए प्रस्तुत हो बैठता है। एक उदाहरण देखिए—

—“आर्द्रा नक्षत्र, आकरा में धरले धरले बादलों की घुमड़, जिनमें देव दुदु भि का गंभीर घोष। प्राची के एक निरभ्र कोने से स्पष्ट पुरुष मूर्ति बने लगा था—देखने लगा महाराज की सवारी। शीतमाला के अंगक में, समतल उर्वर भूमि से सोंपी बास उठ रही थी। नगर तोरण से अथपोप हुआ, भीड़ में गजराज का घामरघारी शुद्ध उभर दिखाने पड़ा। हर्ष और ब्रह्माह्वय समुद्र किनारे मारवा हुआ भारी बहने लगा।”

—पुरन्धर जयराज ‘प्रमद’

प्रसाद जी की यह परम्परा नई कहानियों में भी विद्यमान है और वातावरण का आकर्षक चित्र प्रस्तुत कर कहानी प्रारंभ करने की प्रवृत्ति कई अभुनातन कहानीकारों में पाई जाती है। एक उदाहरण देखिए—

“उत हो गई। महल की मध्य छाया में अनगिनत दीपक जल उठे। उनकी ला अंधेरे से लड़ने लगी। मुसाम लड़कियों ने उन पर शीसे के बच्चों को लगा दिया। उनके हाथ उठते ही पूरे पूरे बहान्याल दिखने लगे और हाथों में धँसे सोने के गहने पहने लगे जिससे महल में घूमती हुई लौदधान से सुगंधित वायु फैलती ही उठी। पारो और नृत्य करती अभिनयियों के नूपुरों का रव सुस्पष्ट हो उठा। उनकी सुबोत मासक जंघाँ रेशम के झलझल लहंगों में से घूमने लगी। यावन के उस उन्मत्त भादक बिलास में युवतियों के नयन अनेक दीपकों की भाँति जगमग करने लगे और वे कामातुर सी बादशाह के आने की प्रतीक्षा करने लगी।

इसो समय ही अर्द्धनन्दा युवतियों के कंधे पर हाथ रखे बादशाह ने धीरे धीरे प्रवेश किया। भूमि उनके ऊपरी ऊपरी पग-पगैप से प्रतापित होकर गूँज उठी और बादशाह के मदिरा प्याली की तरह छायाओं से आजात होकर खँपने लगी।”

—पद्मपू का चित्रा रंगीत शय्य

प्रमद जी की भाँति प्रेमचन्द आदि कई कहानीकारों की कहानियों के प्रारंभिक भाग में प्राकृतिक चित्रण का दृश्यों का वर्णन प्रायः उन्नीस शताब्दी के

इनमें सम्पूर्ण कहानी के सभी तथ्य प्रीतिपूर्ण में विद्यमान रहते हैं और कहानी की मुख्य समस्या भी प्रायः स्पष्ट हो जाती है।' विधिपुता -

"हरिधन ब्रेड की दुपहरी में ऊँच में पानी इफर आया और बाहर बैठा रहा। पर में मे घुँआ उठना नजर आता था। पन घन की आवाज भी आ रही थी। उसके दानों सले उसके पाद आये और घर में चले गये। दोनों सालों के लड़के भी आये और उमी तरह अंदर दारिद्र्य हो गये पर हरिधन अंदर न जा सका। इपर एक महीने में उसके माथ यहाँ ना यथाव ही रहा था और विशेषकर कम उमे जैसी फटकार मुननी पड़ी थी बट उसके पीछ में बेदियाँ ही लाले हुई थी। फल उमकी सास ही ने तो कहा था, मेरा जी तुम में भर गया, मैं तुम्हारी जिंदगी भर का टीका लिये घँटी हूँ क्या और समय पढ़कर अपनी स्त्री की निष्ठुरता ने उसके हृदय क टुकड़े कर दिये थे। यह घटी यह फटकार मुननी रही, एक बार भी उसके मुँह में न निकाला, अम्मा तुम क्यों इनका अपमान कर रही हो ?

—परब्रमाइ प्रमथन्द

१. इतर कई कहानियों में तो प्राकृतिक विनाश या हृदय क्षम और भी भरोप में लिया जाता है तथा कभी-कभी तो एक ही पक्षियों में ही वातावरण का उत्पन्न कर कहानी प्रारंभ कर दी जाती है। दगिण

"ठंडी नीर थी हवा के साथ एक बार की बोझार आई। तीरुड़ी क द्वार का टार उगडकर दूर जा पड़ा। बिहारी एतदय में में निरत गया और चिन्ताया - 'अरी अम्मा' साथ ही नहीं न उसके दाँत कि बिना उन।

बिदिया भी सोई हुई न थी। साथ महीने की इस भापी पानी में उग टनकता गररन के ठगे नीनी पत्राम में लट हुए अमा बन की नीर किसे आ गबडी है निम पर उगक साथ पीन के उबर न बरिगा हुआ बिहारी भी ना या जिसे उड़ाने और गरमी पड़वाने की बिगा में उसको एरो मरी नी' भी उड़ा हो वो।"

—पगनी व पुन चन्निबिन मौनविषमा

और भी -

गाम के प्रानु में पार के बिनाये गला एक मात्र नाम का लड़का दाता हाथों में लड़ना करने आना पेश कहा गया था। बुद्धता एका मरुति न कर रही थी और उमर के दिनाके में बाँटी बगल उमर घमट रही था। महका वेक कहाकर मरुती घरे घर में आ रहा था—मेरे कूबे में बरदानों की दुनिया लदे आता हूँ—-—-रबिबार का और एतर के बाजार बरब। हमनीब राद् करने जाने एक घरे प बरी एक और मरवा मरनाद कर वेक पर नाम देना। बाक का टारा में गिर टके अंगे मुँके लार या गरा था—बरा मु टेग में आहर—-—-

—मुन बोर दादी [६३] साथ विधिपुता

और भी—

“संभमित्रा ने लण भर के लिए भी अपनी दुर्बलता को आरोक के सामने प्रकट नहीं होने दिया, तब भी नहीं जब अपने स्वभाव के अनुस्वार आरोक ने क्षत्रिगुण्युमार को सूर्योदय से पूब प्राणुदंड दिये जाने की आशा दी लेकिन एक बात वह स्पष्ट रूप से देख रही थी कि कई दिन से आरोक के स्वभाव में परिवर्तन होता आ रहा है। रक्त-विपासु भय रक्त से कुछ भय खाने लगा है। अपने हाथों की रक्त स सता है रक्त वह रह रह कर पीक उठता है। विरोपकर क्षत्रिगुण्युमार को सूत्युदंड देने के बाद तो उसके मस्तिष्क की अवस्था बहुत विचित्र हो गई है।

—जीवन दीप : विष्णु प्रभाकर

और भी—

“कुहरे की बजह से लिङ्गियों के शीरो घुँघसे पड़ गये थे। गाड़ी वाली म मील की रफतार से सुनसान बंधेरे को बीरती चली आ रही थी। लिङ्गिकी ने सिर हटाकर भी याहर कुछ दिखाइ नहीं देता था, फिर भी मैं आँसू गड़ाकर दृश्य के प्रयत्न कर रहा था। कभी किसी पैर की हलकी गहरी रेखा ही पास से गुजर जाती थी कुछ बेस लेने पर संतोष होया। मन को उलमघण रग्यने के लिए इतना ही फासी था।”

—अपरिचित : मोहन राकेरा

प्रायः वातालाप से आरंभ होनेवाली कथानियों में साधारण्य घातालाप म ही फ़्तानी पर प्रारंभ किया जा सकता है और यदि हम विचारपूर्वक देखें तो यह प्रयत्नी अन्वयिक कथात्मक है तथा इसमें नाटकीयता की प्रधानता रहती है और कथानक स्वयं कथोपकथन के साथ साथ बढ़ता चला जाता है। कुछ उदाहरण देखिए—

“अमी ता पहना गई हो।”

“बड़ जी बहुत अच्छी बुद्धियाँ हैं भीधे यम्बई से पारम्भ मंगाया है। सरकार पर हुकूम है, इसलिये नई बुद्धियाँ आते ही चली जाती हैं।”

“ता आभा सरकार को ही पहनाभा मैं नहीं पहनती।”

“बड़ जी जय देख तो लीजिये।”

—बुद्धिवाली : अवशर ‘प्रसाद’

और भी—

“पाहर शार गुल मया। डोकी ने पुत्ररा—‘कॉन है?’

कोई उत्तर नहीं मिला। आयाज आयी—‘हस्तारिन तुके फल कर दूंगा।’

स्त्री पर स्वर आया—‘करके तो देर। तैरे बुनके को टायन घनकर न रग गयो, निपूते।’

डोकी बैग न रद सका। पाहर आया।

—'क्या करता है, क्या करता है निहाल ?'—टाढ़ी बढ़कर चिल्लाया—

—'आगिर तेरी मैया है ?'

—'मैया है ?—कहकर निहाल हट गया।

'—अरे तू हाथ उठा क वा देख।—स्त्री ने चुरचुराए—'कड़ी माये। तेरी सीक पर धिनियाँ पनयो हूँ। समझ रथियो। मत जान रथिया, टो तेरी आमरत नही हूँ।

'—माभी।'—टाढ़ी ने कहा—'क्या बकती है। होरा में आ।

वह आगे बढ़ा। उसने मुड़कर कहा—'शाओ सय। तुम सय लाग जाओ।'

—गद्म गंगय रापय

ओर भी—

“अरे अभी तू आग ही गूष रही है ?

सहसा यह सुनकर वह अचकचा उठी। परा पीछ की ओर मुड़कर जा देखा, वही वह। उसका बिस्मय उल्लाम में बदल गया। स्वर्जित हास्य स वह धाप उठी—'क्यों आज इतनी जल्दी कैम आना हुआ ? थोड़ा आड़े का अम निपट गया क्या ? सोफ़ा हुआ नहीं कि पेट में चूरे शौकने लगे।' फिर उसने एक पार अरनी निनीह भरी आँगों स उसकी ओर देख लिया।

'तुम्हें मामू म नही क्या ?' उसी उत्रापलेपन में उसने पूछा।

'क्या ?' स्त्री ने पूछा। उसकी आँगों में उमुकता झपक पड़ी।

'याह मारे गाँव में कोषालन मथा है और तुम्हें " "

'अरे, दोसो भी ना क्या हुआ ?

आज फिर शोषक जल रता है ?

'पीपन क उमी गायने में में ?'

'दा, हाँ।

'मथ ?'—उसकी आँगे ह्यानिरक स धमर उठी।

—महात मंगीत धैरयप्रमाद गुज

यह स कजानीका अरनी कजानी का प्रारभ किभी कजना के पित्रग द्वारा कर देते ह और इस प्रकार उसमें प्रारभ में ही पाठकों की उमुकता तामन कर ही जाती है। हेरिण—

शाम्भिन ने ऊपकर बागत क दुबड़े दुबड़े कर दिये और ऊपर अममनी भी बमरे में पूमने लगी। उसका मन व्यग्य नहीं था किन किनने हमरा ध्यान देर जाता था। कपल पार पंक्तिर्षी बह विगना पादनी धी पर आ बुद पर विगना पादनी धी उमम विगन न जाता था।

—विजरा उरउनाथ आक

भार भी—

“परेरा बाबू ने दफ्तर में आकर नीकर की गुलाकर पूछा, एक बार दो बार पर उसने वही बात कही, छोटे सरकार जल्दी-जल्दी किताने पटक कर एक भीड़ के साथ चले गये। परेरा बाबू की कुछ ममक में नहीं आया कि मामला क्या है ?”

—देशभक्त का अंत मन्मथनाथ गुप्त

भार भी—

“बाबू श्यामचरण के भाई, ५० लोकमण्डि की स्त्री का जिस दिन स्वर्गवास हुआ सो पर जैसे फड़ नाने को दीड़ने लगा। यद्यपि इतनी बात तो बड़ लोग भी जानते ही थे कि जीवन और मरण यह दो बातें विभाता के हाथ में हैं, मनुष्य हाथ मसकर केवल चुप देखते रह जाने की ही सामर्थ्य रखता है और कुछ नहीं। किन्तु फिर भी खूँटी खूँटी पर स्वर्गता के कपड़े और आले आले में उसके हाथ की रक्खी हुई बीजों को अब लोकमण्डि देखते तो जैसे उनका हृदय अन्दर ही अन्दर घुट-घुट कर मस होने लगता।”

—कदनी का फल हीमवती

स्मरण रहे कि कहानी के प्रारम्भिक भाग की भाँति इसका मध्य भाग भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है क्योंकि आरम्भ तो परिचयमात्र ही होता है तथा उस परिचय की विस्तारपूर्वक व्याख्या मध्य भाग में ही संभव होती है और इसमें समस्या का परम विस्तार तथा अन्तर्द्वन्द्व का आरोहाबरोह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है।^१ जैसा कि डा० लक्ष्मीनारायण शाल का विचार है “इसी अंग में कहानी की वास्तविक आरम्भ प्रस्तुतित होती है और कहानी के लक्ष्य की पूर्ण वृष्टमूमि तैयार हो जाती है क्योंकि रचना-विधान की दृष्टि से वस्तु बिक्रस का मध्य भाग ही कहानी का विद्यमान भाग है और बिक्रस भाग कहानी का मूल शरीर है।”^२ इस प्रकार कहानीकार के लिए बिक्रस का सुचारु रूप में निर्वाह करना एक दुर्गर हृदय ममका जाता है परंतु यदि वह कुछ आवश्यक बातों की ओर ध्यान दे तो उसकी बहुत सी कठिनाइयों सहज ही दूर हो सकती हैं। कहानीकार को पलात्मक दृष्टि में विषय का विस्तार आवश्यकता से अधिक बर्दाप न करना चाहिए और उसका विस्तार-बढ़ी तक सीमित होना चाहिए जहाँ तक कि वह पात्रों एवं घटनाओं का आगे बढ़ाने में सहायक हो तथा पारस्परिक संघर्ष उत्पन्न होने के परधान् इसका एक जाना ही आवश्यक है अर्थात् न प्रथम बर्दापम्पु की स्वाभाविकता मत् हो जाणी अपितु कहानी का स्वरूप ही विकृत हो जाएगा। साथ ही बिक्रस का

१ The Craft of the Short Story by D. Machonochie pp-20

२ हिरो बर्दापिका को निम्नलिखित का विधान—३१० लक्ष्मीनारायण शाल (पृष्ठ ३५)

विस्तार करत समय कहानी लेखक का चतुरस्र वक्र के प्रयोगों के लिए अपनी पृष्ठभूमि भी तैयार कर रखनी चाहिए जिससे कि कहानी का विकास स्वाभाविक गति में हो सके। जैसा कि डा० रामकुमार वर्मा का मत है—'प्राग्भूतो षष्ठ कश्चन की मौखिक रहता है। इतनी घटनाएँ—इन पात्र—ऐसा वातावरण—इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं। उस कहानक का मञ्जीष भाग में कथया मन्थन के समान घमेल तथा स मुमञ्जित करन में विश्राम का ही विशेष भाग रहता है। ऐस विश्राम का नियाह कितने सुन्दर रूप में होना चाहिये यह कहन की आवश्यकता नहीं। कह लेखक विकास का विस्तार आवश्यकता से अधिक कर बैठे है। उस कहानक का अधिक मास्त्र कथया स्थूल बना देते है। य सुन्दरता (?) लान के लिए विश्राम के रास्ते पर लेखनी दाढ़ते चले ही जाते है। फिर उन्हें यह ध्यान नहीं रह जाता कि कहानी का कलियर बेग्या हो रहा है।' इस प्रकार की स्थिति ने न तो कहानीकार चतुरस्र वक्र के घटनाओं की सृष्टि ही कर पाता है और न चरम सीमा की तथा कभी-कभी कहानी का अन्त एक निर्यथ के समान हो जाता है। कहानी के विकास का सुन्दर उदाहरण निम्नांकित कहानी में देखते ही बनता है। प्रवेश के बाद विश्राम कितनी सुन्दरता से सम्पन्न है—

(प्रवेश)

'जीवन भर अभावों और वैधैतियों से लड़ते-लड़ते एक दिन रामदीन ने देखा कि उसके जीर्ण नष्टप्राय म्थेपड़ के सामने का तालाब भी मृत पया है।

यह तालाब रामदीन का पड़ा पुराना म्थेपे सन्धा हमदर्द था। एक दुःखद घु घलेपन के म्थेपे उसे याद आया कि इसी तालाब के किनारे पषपन में उसने दिन भर मग्नी के म्थेपे समय बिताया है। उठ बैशाख की उदलकी षापहरियों में मावन-भादों की उनड़ती ददनी और घुआंधार पारिसा में शरद के प्रभातों की पिन्दी रोराती में आर हेमन्त की दौन दत्रानेवाली नम ठिट्टुरन में इसी तालाब में उसने अपने अले पक्ष-मूरिन शरीर को जी-मग डुवोया है। इसी तालाब के किनारे पषपन में उसकी मौ घैठकर चलन मौआ परती थी। इसी तालाब के किनारे नित्य बनन मौआने मौआते म्थेपेकी आरव मरी। जबानी में एक अषमरा-सा मासिपिण्ड प्रमव परके अपने भगवान के पर चली गयी। आज भी उसकी वैवा प्थेपे वदु पिदिद्या इसी तालाब के किनारे घैठकर मूठ मन्थर-संषारहीन यंत्रमी जीवन के निर्जोय संस्मरणों की पमकावा परती है। रामदीन ने ये दिन भी देखे है, जब इसी तालाब के पारों आर मिषाड़े की देनों का संसार ढाया रहता था। बुद्ध नीमा बुद्ध सफद पानी माक दड़ी-मड़ी पृ षों में पारों आर डुकुर डुकुर निहास करता था।

और भी—

‘परेश वायू ने दफतर से बाहर नौकर को बुलाकर पूछा, एक बार दो बार पर उसने वही बात कही, छोटे सरकार अन्दी-जन्दी फिठाबै पटक कर एक मीड़ के साथ चले गये। परेश वायू की कुछ समझ में नहीं आया कि मामला क्या है ?’

—देशभक्त का अंत मन्मथनाथ गुप्त

और भी—

‘बाबू दयामकरण के माइ, पं० लोचमणि की स्त्री का जिस दिन स्वर्गवास हुआ तो पर जैसे फाइ न्याने को ढौड़ने लगा। यद्यपि इतनी घात तो वह क्षण भी जानते ही थे कि जीवन और मरण यह दो बातें विधाता के हाथ में हैं, मनुष्य हाथ मलकर केवल चुप देखते रह जाने की ही सामर्थ्य रखता है और कुछ नहीं। किन्तु फिर भी खूँटी खूँटी पर स्वर्गता के कपड़े और आले आले में उसके हाथ फी रक्खी हुई चीजों को भय लोचमणि देखते तो जैसे उनका हृदय अन्दर ही अन्दर घुट-घुट कर भस्म होने लगता।’

—करनी का फल होमबती

स्मरण रहे कि कहानी के शारम्भिक भाग की भौति इसका मध्य भाग भी अप्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि आरम्भ तो परिचयमात्र ही होता है तथा उस परिचय की विस्तारपत्रक व्याख्या मध्य भाग में ही संभव होती है और उसमें समस्या का परम विस्तार तथा अन्तर्द्वन्द्व का आरोहाबरोह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है।^१ जैसा कि डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल का बिचार है “इसी अंग में कहानी की वास्तविक आत्मा प्रकृति होती है और कहानी के लक्ष्य की पूर्ण वृष्टभूमि तैयार हो जाती है क्योंकि रचना-विधान की दृष्टि से वस्तु विद्यमान का मध्य भाग ही कहानी का विद्यमान भाग है और विकास भाग कहानी का मूल शरीर है।”^२ इस प्रकार कहानीकार के लिए विद्यमान का सुचारु रूप में निवाह करना एक दुम्बर कृत्य समझा जाता है परंतु यदि वह कुछ आवश्यक बातों की ओर ध्यान दे तो इसकी बहुत मो कठिनाइयाँ सन्नद्ध ही दूर हो सकती हैं। कहानीकार को कलात्मक दृष्टि में विद्यमान का विस्तार आदर्शवत्ता से अधिक बहापि न करना चाहिए और इसका ध्यानार-वही तर्क मीमित होना चाहिए जहाँ तक कि वह पात्रों एवं घटनाओं का भागी बनाने में सहायक हो तथा पारस्परिक संपर्क उत्पन्न होने के परभाव उसका एक जाना ही आवश्यक है या यथा न केवल बधापस्तु की ग्यामाधिकता नष्ट हो जाएगी अपितु कहानी का स्वरूप ही विकृत हो जाएगा। साथ ही विद्यमान का

१ The Craft of the Short Story by D. Machonochie, pp. 20

२ ज्ञान विद्यापीठ के विद्यार्थियों का विचार—१९०७ लक्ष्मीनारायण लाल (पृष्ठ १२६)

विस्तार करते समय कहानी लेखक को चौसूइल वद्ध के प्रसंगों के लिए अपनी पृष्ठभूमि भी तैयार कर रखनी चाहिए जिसमें कि कहानी का विकास स्वभाविक गति से हो सके। जैसा कि डा० रामकृष्ण वर्मा का मत है प्रारम्भ तो एक काल की भाँति रहता है। इतनी घटनाएँ—इतने पात्र—ऐसा वातावरण—इसके अनिश्चित और कुछ नहीं। उस काल को सजीव मांस से अथवा मसूमल के समान कोमल त्वचा से सुसज्जित करने में विवास का ही विशेष भाग रहता है। ऐसे विकास का निर्वाह कितने सुन्दर रूप से होना चाहिये यह कहने की आवश्यकता नहीं। कई लेखक विकास का विस्तार आवश्यकता से अधिक कर देते हैं। उस काल को अधिक मासूम अथवा स्थूल बना देते हैं। ये सुन्दरता (?) खाने के लिए विकास के रास्ते पर लेखनी दौड़ाते चले ही जाते हैं। फिर उन्हें यह ध्यान नहीं रह जाता कि कहानी का क्लेशर वेदगा हो रहा है।^१ इस प्रकार की स्थिति में न तो कहानीकार चौसूइलवद्ध के घटनाओं की सृष्टि ही कर पाता है और न धरम सीमा की तथा कभी-कभी कहानी पर अन्त एक निबंध के समान हो जाता है। कहानी के विकास का सुन्दर उदाहरण निम्नांकित कहानी में देखते ही बनता है। प्रवेश के बाद विकास कितनी सुन्दरता से सम्बद्ध है—

(प्रवेश)

“जीवन भर अमावों और बैचैतियों में खड़ते-खड़ते एक दिन रामदीन ने देखा कि उसके जीर्ण तपत्राय भोजक के सामने का तालाब भी सूख चला है।

यह तालाब रामदीन का बड़ा पुराना साथी सच्चा हमदर्द था। एक दुःखद धु धलेपन के मध्य उस रात आया कि इसी तालाब के किनारे घषपन में उसने दिन भर मस्ती के साथ समय बिताया है। जेठ बैशाख की बपहती दोपहरियों में मायन-भारों की उमड़ती ददली और घुर्घोधार यारिशा में शरद के प्रभातों की विश्वरी रोशनी में आर हेमन्त की दौत बजानेवाली नम्र ठिठुरन में इसी तालाब में उसने अपने पहले एक-मूरित शरीर को जी-भर डुबोया है। इसी तालाब के किनारे घषपन में उसकी मौँ बैठकर घर्तन मौँजा करती थी। इसी तालाब के किनारे नित्य घषन मौँजते मौँजते उमकी आरत मरी। जयानी में एक अघमरा-सा मांसपिह्व प्रसव परदे घषने भगवान के पर चली गयी। आज़ भी उसकी वेवा आँधी वट्टु यिदिया इसी तालाब के किनारे बैठकर मूफ मन्यर-संघारहीन यंत्र सी जीषा के निर्माप मंस्मरणों को घमकया करती है। रामदीन ने धे दिन भी देखे हैं, जय इसी तालाब के चारों आर मिपाड़े धे वेसों का मंमार ज्ञाया रहता था। कुछ नीला कुद् सहेद पानी माक घड़ी-धड़ी धूँधों में चारों आर दुधुर दुधुर निघारा करता था।

आज रामदीन ने मजे ही जीवन और प्रतिष्ठण घटित होनेवाले परिवर्तन पर विचार पा ली हो, भले ही वह इच्छित का दुनिया से निकलकर अंतर जड़वा, शेष जीवन-व्यापिनी पकरसता का दुखता श्रुत्य भग बन गया हो, पर यह सत्याय तो जीवित रहने के लिए नहीं जी रहा था। भले ही रामदीन के मामले उमका हाथी-मा जवान लड़का मेंडफ की तरह दम-नोड़कर उसकी छाती पर अपनी बहान रखकर मूले प्यासों की इस वैदिया समी से दूर निकल गया हो, और रामदीन का अपने दैनिक कार्यक्रम में एक नियामक ककराता, एक टीसभरी टंघर के अतिरिक्त अथ और कुछ अयदीप न हा, पर ऐसी शीतल छाती वाले इस मुक्त जग-कनसोहा प्रवाह में कौन सी आँच पड़ूँ गयी।'

(विकास)

“शाम को जब रामदीन लाटा विदिया और उसका तीन साल का यथा आकर दरबाजे पर थड़े हो गये। यहा वह स्थल होता है जब एक मिथारी भी पादराह हो जाता है। उम प्रतीत होता है, उममें भी पुद्द शक्ति, यन और समता है। यह भी वो को खिलाकर म्नाता है। पर आज तो रामदीन दिनभर में एक पैसे की दीही उचार लेकर पी गया था कभी भी बुद्द काम न मिला। घर में पुद्द था ही नहीं। विदिया उसकी उद्द मान पथर बेचटा देखकर समझकर जान गयी—आज की रात कालरात्रि होनेवाली है। यह उमके जीवन में पहला माँघ्र नहीं था। जीवन की कितनी ही रातें उमने उमी मात उसी ठंडी निराशा में मिगो वाली है और मारी रात इसी के गीनेपन में अगने हृष्टिहीन आसों की मरी को एकाकार करती रही है। वह मूची रह सकती थी। रामदीन भी यदि आँसु लगाया जाये तो करीब करीब आपो ही अिन्दगी मूया रहा होगा। पर तीन साल का दीपू नहा और जीवन के मरक से अगपिपित।

विदिया फाँप उठा। पर में एक पमा नहीं है। आमसाम दूर-दूर तक कोई मोंपड़ी मफान भी नहीं है। रात में उमने महुँ पीम थि। मजदूरी के पम पहले ही मिल चुके थे। यदि शात होता तो इतमें से पाय आथ मर आता निम्नल लेनी। अपने निते नहीं, अपने इम सजीब माँमपिण के निते जिस उमने पान माल अपने अयमूये पंहर में पाना था। रातभर मोंपड़ी क अन्दर एक तरफ रामदीन पहा ग्रीसता रहा, और दूमरी और विदिया अपने तीन मात के मूये वरूप हो मनेने यों की त्यो पड़ी रही। रात को पाथ पहर उम हाहाकर धुगार बड़ आया। उमरी अराहो में मामूम वरुपा भी जगकर-पथरापर से उठा।

रामदीन ने उर मुषा उठकर मोंपड़ी का परर एक और हटाया तो मानाव की अर देखने ही का फिर उदास हा गया। उम रह उद्दर यही मामूम होगा,

वैसे यह कोई बहुत बड़ी आग है, जो धरती के भीतर-ही-भीतर सुलग रही है। अगर इतना बड़ा और इतना पुराना घालाव उसके अगोचर, अविज्ञानित अँध में सूख जा सकता है तो इस यन्त्री, इन मकानों, मंदिरों के जलाने में भी अब डर नहीं है। वह समयभीत भी हीन लगा।

रोज की तरह वह फिर अपना गोकुल समाप्त कर काम की तलारा में निकला। एक मजदूर की जिन्दगी ही क्या! न घर में आटा था न पास में पैसा। बिटिया घर में पीसकर कुछ पैसे पा सकती थी। आज वह अपनी ही चंभणा में फुलसी ला रही थी। बलिये के कई रुपये हाँ गये थे, जो रोज सक्का करता था-मारने की घमकी के साथ साथ। सोचा खर्च जाते ही तो कुछ मिलेगा, उसे घर में लाकर पहले टीपू को खिला दूँगा फिर बोम्ब डोकर शाम को अपने और बिटिया के लिये पकाऊँगा।

मगर पूरा दिन उमी तरह बीत गया। उमी सरलता और मद्दबना से। दिन भर तलारा में रहा। न जाने कितनों से घबराती भीन्स मँगी। मगर एक पैसा भी न मिला। एक-एक घण्टा आग का तिनका ही रहा था। आत्मा और फलेने को बलाता हुआ पैग के साथ चला जाता। शाम को भूखा, निराश, थका हुआ घर लौटा। टीपू मूख से व्याकुल होकर बिटिया से रोटी माँग रहा था और रो रहा था। उमका मुँह सूँडकर झट्टा-सा हो गया था। अँधों में मूख चण्डा। मगर रोटी वहाँ कहाँ? वह गरीब ता ख्यर रो रही थी। अपनी पीड़ा भूख से नहीं धरल अपने फलेने के टुकड़े को विलसरी देखकर। वह अन्धी थी। दुनियाँ को तो न देख सकती थी, पर उसके शरीर का कोई भाग-मल्ल ही अब वह स्वतंत्र अस्तित्व बन गया है-भी तो उसने क्षिपा न था।

उसके रोम-रोम से धुँधौ निकल रहा था। रामदीन को देखते ही टीपू उसमें लिपट गया और फुत्ता उठकर अपना धंसा हुआ सिकुड़ा पेट दिखाने लगा। रामदीन ता उस समय बेहीरा था। उसे यह भी न मालूम हुआ कि कब उसके सीने में लिपटा हुआ बधा सो गया जिमके गालों पर औँसुओं की नाली रेखायें अपनी दुःख प्रगति छोड़ गयी थी।

माफर उठते ही फिर सुबह काम की गोज में निकला। टीपू को माने में खगाने की दिम्नत नहीं पड़ी। अगर उसने रोने मँगी, तो क्या दूँगा? मगर क्या होनेवाला था। उस दिन भी कोई काम नहीं मिला। वह पागल की तरह सड़कों पर घूमता रहा। किसी न उमकी ओर नहीं देखा। एक यादू माहय अपने पक्षे पक्ष लिये जा रहे थे। उसके हाथ में चिम्बुट थे। यहाँ पर दबे का पक्ष चिम्बुट गिर पड़ा। रामदीन ने मगटकर उम उठा लिया और तेजी से घर की ओर भागा।

तीपू मूल्य में तड़पकर मो गया था। विद्विया पड़ी थी। अँधेरे बरमाही नाले-सी बस रही थी। तीन दिन से महीनों की-सी बीमारी घेरे थी जैसे टूट गयी हो। मुँह से पोल नहीं निकलता था। बच्चे बचे जगाया। विस्कुट खाने को दिया। दो दिन की मूसी रोगिणी और मूसी रामदीन गम खाकर बैठ गये।

तीसरे दिन मूल्य की धाला में स्वल्प सुतागता हुआ अब रामदीन पर लाटा तो उसके पैर काँप रहे थे। अँगों से शाले निकल रहे थे। लड़खड़ाता हुआ वह पर में घुसा। बच्चा अमीन पर पड़ा था-अँधेरे गहरे में घुस गयी थी। खान पर पड़ी विद्विया शिखर फातर थी। अन्धी थी पर बच्चे की तरफ ही देख रही थी। बीच बीच में टीपू आर्तनाद करता हुआ उमकी ओर देख लेता था। विद्विया ने रामदीन की मूक बापसी में कुछ जान लिया।

टीपू रामदीन को देखते ही मटपट उठा— वाधा, रोटी लाये ? वो-अभी दो। कभी ही दो।

निरीह मरीपड़ी की गोद। रात काली और भयानक। आकारा में तारे खिसक रहे थे। नीचे हाहाजारमयी यंत्रणा में ये प्राणी। कुत्ता इतनी थी कि भोपड़ी की छत से टकराकर उनका आतनाद भीतर ही भीतर उममकर रह जाता था। बाहर नहीं निकल पाता था। नहीं तो जाने भी दो।

रामदीन का स्वतः प्रकाश भी रुक-सा रहा था। भोपड़ी की छत की सौम्य स जी आस्मान दिग्गामी हैता था बह भी धरपरा रहा था। तीपू उसके पास ही बैठा था। रामदीन की पूरी विन्वगी अपनी मारी तम्बीरे लेकर इसकी अँधेरी में घूम घसी। बीच-बीच में अब टीपू धीरे से हीलप्राय फरक से 'रो-टी' कह उठता उस समय रामदीन के सामने बलचित्रों का मिश्रितिषा म्प से टूट जाता। 'तीन दिन का मूग टीपू' रामदीन आगे न मोष सफा। मूग में फुला हुआ अशोष शिखर और दुमरी और अन्धी घर की अस्पष्ट वेदना। रामदीन टीपू के शरीर पर हाथ फैलने लगता। टीपू ने कुम्हनाकर आगे गयी। उस मूगै तात्प्रावभी ही अड़वा धार मियरता उनमें भी आ पसी थी। पुनलियों अयङ्ग-ग्याङ्ग मिट्टी की पेंटी अकड़ी दरारों की मोति ही मयायह हो रही थी।

रामदीन का शरीर हुआ जैसे वह हाथर के उरी में है। अशेठत, अकमाङ्गुर्ण अमार। अपने शरीर, हाथ, अँधेरे, दिन छिमी पर उमम अधिकार नहीं। सप उमक हाथ में पादर निषमे जा रहे हैं। टीपू ने फिर एक बार अशिरा करके रोनी मंगी। रामदीन के दुबल, गनिदीन हाथ टीपू के गले पर बाँधे। उमरी यह नि सत्ब गनिवों ककन का ताना पाना मूष पसी।

कह मिनित्र यह ऐमे ही म्प्य आर पत्थरवत् गङ्गा रहा। नरा अभी राम — ११। तीन दिन पर मूसी तीपू का अरनी मंत्रिय की ओर चल पड़ा था।

नरा बखड़ा, सपना टूटा । और बेतना में मूखोल ध्याया । रामदीन तीर की तरह उठ बैठा और विद्विष के पास चला गया । आधी बैहोरा और आधी सोयी हुई वह तीन दिन की मूखी आधी मानों सपने में टीपू को भर पेट मिटाई खिला रही थी । रामदीन ने पास आकर उसे झकझोर डाला, परन्तु फिर भी कदाचित्त उसका यह सर्मा न टूटा । लेकिन रामदीन ने अब मत्वालेपन की-सी मादकता में उसका गला घोंटा तब तो वह उसी प्रकार कें कें कर उठी, जैसे सड़क पर कुत्ते ऊपर से खारी निकल जाने पर चीख उठते हैं ।

— हत्थारा रामेश्वर दुक्कल अंचाल !

वस्तुतः कहानी के विकास में कौतूहलता का महत्त्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इसी विद्यम भाग से चरमसीमा भी पूर्णरूप से सम्पन्न रहती है और कुशल कहानीकार का यह उत्तरदायित्व है कि वह अपने पाठकों को वहाँ तक सहजगति से पहुँचा दे । विकास का विस्तार करते समय कहानीकार को प्रत्येक शब्द और वाक्य का प्रसंगा मुक्त ही प्रयोग करना चाहिए तथा शब्दों का माय विशेष की अभिव्यञ्जना और मीदर्यवृद्धि में महत्त्वपूर्ण स्थान रहता है वृत्ति प्रत्येक मकर कहानी में कौतूहलता अपेक्षित है तथा उसी के द्वारा कथावस्तु में चमत्कार और रोचकता का प्रादुर्भाव भी होता है अतः कौतूहल सृष्टि किन्तु रूप और किस स्तर से हो यह भी एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है । विचारकों की दृष्टि में कौतूहलता का प्रभाव स्वाभाविक और शांत होना चाहिए क्योंकि शीघ्रता करने में उसका समूचा सीदर्य विनिष्ट हो सकता है अतः कौतूहलता जामत करने के लिये कुशल कहानीकार किसी एक या अनेक ऐसी घटनाओं का भयन करता है जो न केवल महत्त्वपूर्ण हों अपितु जिनमें एक विशिष्ट प्रकार का आकर्षण भी हो । माय ही पात्रों का विग्रह इन्हीं प्रकार करना चाहिए कि वे स्वाभाविक प्रतीत हों तथा कौतूहलता नष्ट न करें और कौतूहल की सृष्टि इस रूप में हो कि पाठकों को आगे होने वाली घटनाएँ पहले ही से न झट हो जायँ अन्यथा हमें कथा से पूर्णतः आनन्द प्राप्त न हो सकेगा । स्मरण रहे चरित्र प्रधान कथानक में तो कौतूहलता की सृष्टि महज ही संभव हो सकती है क्योंकि हममें पात्र विशेष के चरित्रांकन को ही महत्त्व दिया जाता है अतः उसके अन्तर्द्वारा और मानसिक पात प्रतिघातों के विग्रह में कौतूहलता का समावेश स्वाभाविक ही हो जाता है परन्तु घटना प्रधान कथावस्तु में धम, विपत्ति और उत्तजनाजनक परिस्थितियों की अंकित करते समय कभी कभी कौतूहलता का आयोग दृष्टगति में बढ़ने लगता है अतः कहानी लेखक द्वारा उत्तम संतुलन करना निस्संदेह आवश्यक है अन्यथा कथागत मीदर्य अक्षुण्ण न रह सकेगा । वस्तुतः कौतूहलता न आगे बढ़ने पर ही कहानी में चरम सीमा—अन्त—की अवस्था आती है अतः कहानी लेखक द्वारा उपयुक्त घाता पर ध्यान रखत हुए ही कौतूहल सृष्टि करने चाहिए और

पाठकों की उत्सुकता को बढ़ाने में सतकता के साथ ध्यान देना चाहिए अन्यथा चरम सीमा की अवस्था में कथानक का एकत्रिक प्रभाव नष्ट हो सकता है। डॉ० रामकुमार वर्मा के शब्दों में 'अच्छी कहानियों में कुतूहल का आधिभाव अनेक बार होता है। पर प्रत्येक बार यह कुतूहलता वैनी होती जाती है। यदि पहला कुतूहल एक भावना को आमंत्रित करता है तो दूसरा चार तीसरा अनेक भावनाओं को। प्रत्येक बार भावना तीव्र भी होती जाती है। यदि ऐसा न हो तो कहानी का विकास नहीं हो सकता और उसकी चरम सीमा में तीव्रता नहीं हो सकती। पहला कुतूहल प्रारंभ में उत्सुकता की सृष्टि करता हुआ कहानीको चरम सीमा की ओर बढ़ाता है। चरम सीमा तक पहुँचने के पूर्व उसकी गति को हीन करने के लिये दूसरे और तीसरे कुतूहल की सृष्टि करने की आवश्यकता पड़ती है जिससे चरमसीमा में आने की स्थिति तक कहानी अनेक प्रकार की भावनाओं के संपर्क से इतनी मारी और बिस्तृत बन जाती है जैसे वर्षा को काली बारिशमाला जिसमें अपरिमित जलक्षण छिपे रहते हैं। फिर केवल चरमसीमा की विशुद्ध के समकक्ष और प्रचंड शब्द करने ही की देर रह जाती है। जैसे ही इस उत्सुकता से परिपूर्ण भावनाओं की संपर्क पूर्ण स्थिति में चरम सीमा का विद्युत् संचार हुआ जैसे ही मारी कहानी का सर्वथा एक क्षण भर में एक अनुपम आनन्द के व्यक्तिक से प्रकाशित हो उठता है।"

जैसा कि राय कृष्णदास ने लिखा है "मत्र पूर्विए ती आधुनिक कहानी की मयसे बड़ी मरुतता उसके अन्त में है। प्रारंभ बाहे थोड़ा शिथिल और दूर हो तो किमी प्रकार चल भी मरुता है किन्तु उसकी समाप्ति तो दुयल होनी ही न चाहिए क्योंकि कलाकार इसे ठेठ अंत तक तो पहुँचाना नहीं, केवल एक पराघटना (क्लाइमैक्स) तक पहुँचाकर छोड़ देता है। वम बह पराघटना न बन पड़ी कि कहानी पैल होगई।" १^२ इसी प्रकार पादशात्य विचारधर्म ने भी आधुनिक कहानी कला में कहानो के आदि और अंत माग पर ही विशेष ध्यान देना आवश्यक समझा है^३ तथा भा गुलाब राय की के शब्दों में भी कहानी के अंत की महति जितनी देर तक हमारे मानस गगन में गूँजे उतना ही हम कहानी को महल समझेंगे।^४ वस्तुतः कुतूहलता के अन्त में चरम सीमा की अवस्था आती है और इस प्रकार चरम सीमा की स्थिति में पहुँचने पर कहानी का कार्य संतुल्य हो जाता है अतः कहानीकार को उसका निर्वाह भी पर्याप्त सावधानी और सतकता के साथ करना चाहिए अन्यथा जिस प्रकार ऊँचे पहाड़ की शिखर पर पहुँच कर मावजानी स चरण न रखने पर किमत्तय नीचे आ

१ माशिय मनावाचना— डॉ० रामकुमार वर्मा (पृष्ठ ७३)

२ नवीन कहानियों— श्री राय कृष्णदास और श्री बाबुराज पाठक (आमृग पृ० ३)

३ Mr. Billery Seljeweich held that A story is like a horse race It is the start and finish that count most."

४ कथय कथा— श्री गुलाबराय (पृष्ठ २००-२)

गिर पड़ने का मय रहता है उसी प्रकार कहानीकार के समस्त परिश्रम पर पांती फिर सकता है। कहानी लेखक पात्रों की भावनाओं को उत्तेजना देकर उन्हें एक निश्चित स्वप्न पर पहुँचा देता है और क्यावस्तु की सारी सुन्दरता को पूर्णरूप से स्पष्ट करते हुए परम सीमा के हेतु कहानी से मूलतः संबन्धित एक ऐसी घटना की उद्भावना करता है जो कि परम सीमा की अवस्था का उचित रूप से निर्वाह कर सके।^१ स्मरण रहूँ घटनाप्रधान क्यावस्तु की परम सीमा पूर्ण कि घटनात्मक ही होती है और उसमें संयोग या अप्रत्याशित क्रय व्यापार की अवतारणा स्वाभाविक रूप से ही होगी अतः घटनाप्रधान कहानी-लेखक को अपनी कहानियों की परम सीमाओं पर पहुँचने में जितनी अधिक कठिनाई नहीं होती जितनी कि भावप्रधान कहानियों के प्रणेतृ को होती है। भावप्रधान कहानियों के लिए यह आवश्यक समझ गया है कि उनका अंत वहीं कर दिया जाए जहाँ कि परम सीमा की अवस्था आई हो क्योंकि इस प्रकार पाठकों के मानस पर एक विशिष्ट प्रभाव पड़ता है तथा कहानी को पढ़ने के पश्चात् भी उसके विषय में कुछ मोचने के लिए उन्हें मामूली प्राप्त हो जाती है। भावप्रधान कहानियों के अंत को किसी भी प्रकार आगे न बढ़ाना चाहिए तथा केवल कुछ गोपनीय इंगुल आशय की ओर संकेत मात्र कर देने से उसका सौन्दर्य बढ़ जाता है और यदि कहानीकार ने व्यर्थ ही उसे आगे बढ़ाकर व्याख्या करन की चेष्टा की तो उसका स्वरूप विच्छन्न और असंगत ही प्रतीत होगा। किमी भी भावप्रधान कहानी को पढ़कर यह कहना कि उसका अंत ठीक नहीं हुआ तथा उसके आगे कुछ और होना चाहिए या उचित नहीं है क्योंकि प्रायः मवमाबारण तो भावप्रधान कहानी के अंत की फलात्मक सुन्दरता को समझ ही नहीं पाते। यदि विचारपूर्वक देखा जाए तो इस भेद्यी की कहानियों का अंत अन्य प्रकार की कहानियों से कुछ कम सुन्दर और अध्यापूर्ण नहीं होता।^२ यहाँ यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि बहुत सी कहानियों की परम सीमाओं के उपरान्त छोटे-छोटे

१ ऐसी पराकाष्ठा के लिए कभी-कभी कहानी गरी के प्रवाह की भाँति अतन्त्रित प्रवाह बूम जाती है जिसके कारण हमारे सामने एक बिलकुल नई दुनिया आ लड़ी जाती है। बिना हमारा हृदय अंत में जिस यन्त्र परिराम को आशंका न पड़कता रहता है उसके विपरीत एक बिलकुल हृदय परिणाम में कभी कभी तो एक मजाक में कहानी की प्रति हासो है मानों पहाड़ पान्न पर बुद्धिवा निकल पड़ती है और उससे हमें विद्यप्य बमरझा जाता है।”

—इरमोम कहानियाँ राय कृष्णदाम (मामुल पृष्ठ ४)

२ इस प्रकार के कुछ सुन्दर उदाहरण देखिए—

“बिमाती अपना मामान छोड़ गया फिर मीन कर नहीं आया। धीरे न बोम ता उगा मिया पर राम नहीं दिया।

—बिमाती जयपकर प्रसाद

उपसंहार और उपदेशात्मक वाक्य भी जुड़े मिलते हैं परन्तु उत्कृष्ट कहानियों की शरम सीमाएँ मनाबैज्ञानिक अनुभूति के सत्य पर ही प्रतिष्ठित रहती हैं और इस प्रकार उन्हें कलात्मक ही कहा जाता है। प्रेमचन्द की कुछ कहानियों की शरम सीमाओं का आधार न तो कोई पटना है और न संयोग अपितु ये और भी—

“गायत्री की ओर बही उदास रमता सीम । साजन बका हुआ बटा बा । भाव उसक मन म आँसु म न जाने कहीं का स्नेह उमड़ा पड़ता बा । प्रसन्न रमता में एक कमकीता जून द्विमन लगा साजन ने आँस उठाकर दया—पूझाई की बातों पर एक ठारिका रमता के उदास बाप पर सीमाय बिहूँ सी बमक उठी बी । देखते-देखत रमता बा बध नरकों क शा' स मुनोमिठ हो उठा । साजन ने पुकारा—‘राती ।’

—रमता जयसंकर ‘प्रसाद’

और भी—

मात में एक बार आँसु मजूरियों की आड़ से साँसकर माया मुझ रहत बती है । उससे कहता हूँ माया ।

बच सज्जित हो जाती है और पत्तों के घुँघट को अचिन चीब लेती है । मैं कहता हूँ—‘क्या माया इतनी मजबूत बयो ।

बह कहती है—“जब मेरा विवाह हा गया ।”

—बूठा जय पाबिदबन्धन पंत

और भी—

‘जय मन का मुझ का गस्ता नहीं मिलता तो बधनी में बरब ठेक हो जाते हैं । उनी हापन में नाक ऊपर उठाएँ राहू बसता से ठोकर खाता मैं बला पा रहा बा यह साबता हभा—‘गाऊ बनने क लिए मम मनाने क लिए भी सहनियत बाहिएँ और दुगी हान का भी मूठ अधिबान हाता है’----- ।

—दु'त का अचिबान मपपान

१ देगिन

“घुँघट क भाग्य जहाँ अलिं होनी बाहिएँ बहाँ मुझ गीसापन रिला ।

येता मैं मगारे प्रम के बिना बी मही मकनो । मेरा उम दिन बा लगपान जीर जकनीपन भूत बाबा । तुम मेरे प्राण हो मेरा कौटा निजान दी ।

रपमाय ने एक हाव उमड़ी कमर पर डानकर उमे अगनी आर सीबना बाहू । मायुम पडा कि मडा ने जिगारे का जिना मीब के गम जाने म बीर-बीरे पंग रहा है । भायकनी का बधबाज गरीर बिरमार होकर रपुमाय क बध पर सग मया । क्या आँसुभा ग सीवा हा मया ।

‘मग कनू—मग बंधागपन—मैं उमहुँ—मेरा अरराय—मेरा पाप—मैंन क्या क्या कहूँ हा ग आ पिगधी बंध बनी ।

उगना मूह बर करने का एक उगाय बा । रपुमाय न बही रिया ।”

—दु'त का कौटा बगबत उर्मा मुनेरी’

ननोवैज्ञानिक सत्य पर ही आधारित हैं अतएव इस प्रकार की परम सीमाओं का विस्तार कौन सा प्रतीत होता है, अन्यथा एक पंक्ति में ही परम सीमा प्रतिष्ठित हो जाती। वस्तुतः इस प्रकार की परम सीमाएँ निरान्त कलात्मक ही हैं और प्रेमबंध की कफत नामक कहानी की परम सीमा हमारे इस कथन का सुन्दर उदाहरण है। देखिए—

तय दोनों न जाने किस देवी प्रेरणा से एक मधुराला के सामने आ पहुँचे। और जैसे किमी पूव निश्चित व्यवस्था से अन्दर चले गये। वहाँ अग वीर तक दोनों अमनत्रस में खड़े रहे। फिर घीमू ने गद्दी के सामने आकर कहा—‘साहू जी एक योवक हमें भी देना।’

इसके बाद कुछ चिखौना आया, तली हुई मछलियाँ आईं और दोनों बरामदे में बैठकर शांतिपूर्वक पीने लगे। कई कुलियाँ चायइतोड़ पीने के बाद दोनों मकूर में आ गये।

घीमू बोला—‘कफत लगाने से क्या मिलता ? आधिर जल ही था जाता। कुछ यद् के साथ सो न जाता। माघव आसमान की तरफ देखकर बोला, मानों देवताओं को अपनी निष्पकता का सचो घना रहा हो—‘दुनिया का दम्भूर है नहीं तो लोग कामनों को हजारों रुपये क्यों दे देते हैं ? कान देवता है परलोक में मिलता है या नहीं।’

वड़े आदमियों के पास धन है, पूँके। हमारे पास फूँकने को क्या है ?

लेकिन लोगों को जवाब क्या दीगे ? लोग पूछेंगे नहीं, कफत कहाँ है ?

घीमू हँसा—‘अबे कह देंगे कि रुपये कमर से छिपक गये। बहुत डंडा, मिले नहीं। लोगों का विश्वास न आवेगा लेकिन फिर यही रुपये देंगे।’

माघव भी हँसा—‘इस अनपेक्षित सामाग्य पर। बोला—‘यही अन्धरी थी

जो भी

प्रातः काल ही जाता था। सबक जानाकू पूँ रहा था। मम्मूज एक एक का पुनिस की मूर्तियाँ दूर से जाती दीख रही थीं।

अहित ममस गया कि यह अहित मिलन बना है। विराव करता अर्थ का। उमन मरत में बहा—‘तो लने दो।’

भीर बाप ही बाप दूर गई। स्वप्न भग हा गया। मारठी न अहित की आग प्रणय भरी दृष्टि में देखा और उन निपाहियाँ उ कहा—‘मैं तया हूँ।’

..... ‘जम के पाने में टम टम कर ग्यारह बजाए। अहित चौक उग उपर देखा जैसे पर बना मरहा मका एक मग मका रण जोर फिर ऊपर हा गया।’

—स्वप्नभग पापत्री बर्मा

धरारी। मरी ता लुप तिला पिशाकर। आधी बोटल से ब्यादा उड़ गई। पीसू ने दो सर पूड़ियों मंगाई। फटनी, अचार, फलेजियो। शराबखाने के सामने ही दुकान थी। माधव सफरकर दो पचलों में मारे सामान ले आया। पूरा डेढ़ रुपया खर्च हो गया। सिरक बोझ-मे घेमे बच रहे।

दोनों इस वकत इस शान में घैटे पूड़ियों खा रहे थे जैसे जंगल में कोई शेर अपना शिपार उड़ा रहा हो। न अबावदेही या खौफ था न बदनामी की किंकर। इन मय माबनाओं को उन्होंने बहुत पहल ही जीत लिया था।

पीसू दार्शनिक भाव से बोला—'हमारी आरमा प्रमत्त हो रही है, तो क्या उसे पुत्र न होगा ?'

माधव ने भ्रडा से मिर मुझकर तसदीक की—'जतर मे जतर होगा। भगवान, तुम अंतर्धामी हो। उसे वीकूठ से जाना। हम दोनों हृदय में आशीर्वाद दे रह हैं। आज जो भोजन मिखा वह कभी उन्न भर न मिला था।

एक क्षण के बाद माधव के मन में शंका जागी। बोला—'क्यों दादा हम लोग भी ता एक न एक दिन वहाँ जायेंगे ही ?

पीसू ने इस भोले-भाले सवाल पर कुछ उत्तर न दिया। वह परलोक की घाते सोचकर इस ध्यानरु में घाघा न डालना चाहता था।

'जा यहाँ हम लागो में पूछें कि तुमने हमें कपन क्यों नहीं दिया तो क्या कहोगे ?'

'कहेंगे सुशारा मिर ।'

'पूछेंगी तो जहर ।'

'तू कैसे जानता है कि उसे कपन न मिलेगा ? तू मुझे ऐसा गधा समझता है ? साठ साल क्या दुनिया में घाम ग्योवता रहा हूँ ? उमक्रे कपन मिलेगा और इसमे बहुत अप्यदा मिलेगा ।

माधव का विश्वास न आया। बोला—'धैन रेगा ? रुपये तो तुमने बटकर दिये। वह ता मुझमे पूछेंगी। उसकी मांग में ता सेंदूर मैंने डाला था ।

पीसू गम होकर बोला—'मैं कहता हूँ उम कपन मिलेगा, तू मानता क्यों नहीं ? 'धैन रेगा, घताते क्यों नहीं ?

वही लाग देंगे जिहोंने कि कपकी दिया। हाँ, कपकी रुपये हमारे हाथ न आयेंगे ।

भयो ग्यों अंधेरा बड़ता था और मितारों की अमक तैज दाती थी, मपुराणा की रौनक भी बढ़नी जागी थी। कोई गाता था कोई हींग मारता था, पौड़ अपने मंगी के गमे मियन जाता था। कोई अपने शीम के मुँह में कुल्लहड़ मगाये देता था ।

वहाँ के वातावरण में सस्तर या हवा में नशा। कितने तो यहाँ आकर एक वृक्ष में मस्त हो जाते थे। राधा से क्या या यहाँ की हवा उन पर नशा करती थी। जीवन की बाधाएँ यहाँ खींच जाती थी और कुछ देर के लिए यह मूल आते थे कि वे जीते हैं या मरते हैं। या न जीते हैं, न मरते हैं।

और यह दोनों पाप-पेटे अथ भी मझे लै-लैकर पुस्तकियाँ ले रहे थे। सबकी निगाहें इनकी ओर जमी हुई थीं। दोनों कितने माय्य के बली हैं। पूरी चौकल बीच में है।

भर पैट खाकर माधव ने बची हुई पूँजियों का पत्तल उठाकर एक भिखारी को दे दिया जो खड़ा इनकी ओर मूखी आँसों से देख रहा था। और 'बने' के गौरव आनन्द और अस्लाम का अपने जीवन में पहली बार अनुभव किया।

पीसू ने कहा—'ले जा, खूब खा और भारीवाँच दे। तिमकी कमाई है, वह तो मर गई। मगर तेरा भारीवाँच उसे अन्न पहुँचेगा। रोयें रोयें से भारीवाँच दो, बड़ी गाड़ी कमाई के पैसे हैं।'

माधव ने फिर आसमान की तरफ देखकर कहा—'वह वैकुण्ठ में जायगी दादा, वैकुण्ठ की रानी बनेगी।'

पीसू स्वप्न हो गया और जैसे उल्लास की लहरों में तैरता हुआ घोला—'हाँ बेटा वैकुण्ठ में जायगी। किस्ती को मताया नहीं, किस्ती को दयाया नहीं। मरते-मरते हमारी सिन्दगी की सचमे बड़ी लालसा पूरी कर गई। वह न वैकुण्ठ में जायगी तो क्या ये मोटे-मोटे लोग खाएँगे जो गरीबों को दोनों हाथ से छूटते हैं और अपने पाप को धोने के लिए गंगा में नहाते हैं और मंदिरों में अन्न चढ़ाते हैं।'

अद्यालुता अब यह रंग तुरंत ही बदल गया। अस्थिरता नशे की स्वासियत है। दुःख और निरपरा का दौर हुआ।

माधव घोला—'मगर दादा, बेचारी ने सिन्दगी में बड़ा दुःख मीगा। कितना दुःख भेलकर मरी।'

यह आँसुओं पर हाथ रखकर रोने लगा, बीसों मार-मार कर।

पीसू ने समझाया—'क्यों रोता है बेटा, मुझ ही कि वह माया-आल से मुक्त हो गई। जंजाल से छूट गई बड़ी भाग्यवान थी जो इतनी जल्दी माया-मोह के पंचन साड़ दिये।'

और दोनों लड़के होकर गाने लगे—

ठगिनी क्यों नैना ममकाये । ठगिनी० ।

पियङ्गों की आँसुं इनकी आर लगी हुई थी और यह दोनों अपने दिल में

मस्त गये जाते थे। फिर दोनों नाचने लगे। उड़ते भी, बूढ़े भी, गिरे भी, मरके भी। भाव भी बनाये अभिनय भी किये। और आम्बिर नशे से बहमस्त होकर यही गिर भी पड़े।'

—कफन प्रमचन्द्र

स्मरण रह फयानक का घत करते समय यह भी आवश्यक है कि स्वप्न में भी न मोची जाने वाली बात अकस्मान् सामने रखकर कुतूहलता बढ़ा दी जाय तथा पाठक पाठ कुछ और ही सोच रहा हो लेकिन बुराम खानीकार यही मनोहरता म सामने एक ऐसी बात रख दे कि आश्चर्य एवं कुतूहल में पाठक का धित फड़क उठे। श्रीमती पहानीकारों में जो इनरी की कहानियों का अंत इसी प्रकार हुआ है। अनेक हास्य में भी एक छोटी सी पहानी How it happened (यह कैसे हुआ ?) लिखी है जिसमें कि मोटर टूटने की घटना एक मीडियम द्वारा फइलाई गई है। देखिए -

Going at fifty miles on hour my right front wheel struck full on right hand pillar of my own gate I heard the crash I was conscious of flying through the air and then — and then—

When I became aware of my own existence once more I was among some brush wood in the shadow of the oaks upon the lodge side of the drive A man was standing beside me I imagined at first that it was Perkins but when I looked again I saw that it was Stanely a man whom I had known at college some years before and for whom I had a really genuine affection

"No pain of Course ?" said he

None said I

There never is said he

And then suddenly a wave of amazement passed over me Stanely ! Why Stanely had surely died of enteric at Bloerfontain in the Bore war ! "Stanely! I cried and the words seemed to choke my throat—"Stanely you are dead

He looked at me with the same old gentle wishful smile

So are you , he answered.

स्टेनली द्वारा कहे गए अंतिम वाक्य ने कहानी में इस प्रकार के कौतूहल और आनन्द की सृष्टि की है कि पाठक मंत्रमुग्ध सा हो जाता है। हिंदी कहानियों में भी इस प्रकार के कई उदाहरण उपलब्ध होते हैं जैसे—

‘इसके पूर्व कई बार हारिम अपनी आँसों से देख चुका था कि जमींदार के हथरी जमादार फ़िस बेरहमी से बंदिब गुलामों पर चोड़े फटकारते हैं। ५-७ चोड़ों की मार से ही आवमी की पीठ का मांस भीयड़े भीयड़े होकर उड़ने लगता है। अगर उसके बाद ? हारिम उसके बाद कुछ सोच न सका ! केवल दो एक घटे की समाप्ति पर ही वह स्वयं प्रत्यक्ष कर लेगा कि उसके बाद क्या होता है।

हारिम सिर मुझकर यही बातें सोच रहा था कि चंचल गुलरान उसके द्वार के सीकणों के पास आकर खड़ा हो गया। हारिम के चिंतित आर उदास चेहरे को देखकर बालक का ध्यान स्वयं उसकी तरफ अच्युत हो गया। आदृष्ट सुनकर हारिम ने जो सिर चढ़ाया तो उसकी नजर गुलरान पर पड़ी। आज गुलरान को देखकर मयसे पहले उसके दिल में यही भाव आया—यही है वह बचल बालक, जिसकी एक शीम्य के कारण आज योड़ी ही देर में यही निद्रयता स मेरे प्राण ले लिये जायेंगे।

हारिम अभागा और वृद्ध हारिम यहाँ की तरह स फुफकार कर रो उठा।

हारिम को रोता हुआ देखकर शायद बालक का दिल भी मसोस चढ़ा। उसने यही सहानुभूति के स्वर में पूछा—क्यों रोत क्या हों ? क्या भूल लगी है ?

हारिम ने कोई जवाब नहीं दिया, केवल उसके रोने का वेग और भी अधिष्ठ बढ़ गया। गुलरान के खेव में पिस्ते भरे हुए थे। एक मुट्ठी पिस्ते हारिम के सामने दालकर त्रिसली के समान चंचल वह बालक यहाँ स माग गया।

इसके योड़ी देर के बाद यम के दूत के समान भयंकर एक हथरी ने हारिम की फोठरी का दरयाजा खोलकर कहा—‘बला बच्छ हो गया।’

गुलरान के कँके हुए पिस्ते फोठरी के सीकणों के पास भय भी उसी तरह फिन्धरे हुए पड़े थे।

उन दिनों गुलामों को इस तरह यड़ी-यड़ी सजाएँ देने का काम बड़े समारोहों के साथ किया जाता था—जैसे वह भी चोर्डे खोहार हो। समझा जाता कि इमम अन्य गुलामों के हथ्यों पर बड़े उच्चम मनोवैज्ञानिक मरकार पड़ते हैं। आज भी आपतापत्यान के सम्पूर्ण गुलाम काड़े लगाने की टिकठी को पैर कर कतारों में खड़े किये गये थे। टिकठी से कुछ दूरी पर गुलामों की कमारों के बीच में एक अना चयूतरा था। इस चयूतरे पर कालीन दिदाकर एक शाही डग की बुर्खी रखी गई थी। इस पर भूमपति आपतापत्यान बड़े रोष के साथ बैठा था।

हारिम को नगा करके टिकठी में बाँध दिया गया था। पास ही मिट्टी के एक बड़े घर्तन में तैल से मोगे हुए घोंट रखे थे। एक हटा कटा हथरी इन वेतों की बाँध पड़ताम कर रहा था। सहसा जमींदार का हुक्म हुआ—होरियार।

हथरी जमादार ने कोड़ा सेमाल लिया और बूढ़ा हारिम आँसों में आँसु भर कर खुदा की इबादत करने लगा।

जमींदार अगली आशा देने ही बाला या कि बालक गुलरान कहीं से भागा हुआ था पहुँचा। यह सीधा अपने पिता के पास चला आया। बालक की ओर ध्यान घट जाने के कारण आफताब स्थान को अगला फरमान देने में कुछ बिलम्ब हो गया। कोड़ों का जमादार अभी तक अपना कोड़ा आसमान में ऊँचा किये खड़ा था।

खुदा से इबादत करते हुए भी हारिम की दृष्टि इस बंचल बालक पर पड़ ही गई। उस बेचारे की आँसुओं से दो आँसु, उसके सत्य कपोलों को भिगोते हुए नीचे की ओर खिसक गये। हारिम के हाथ पीछे की ओर बंधे थे। अतः वह इन्हें पोंछ नहीं सका। ठीक इसी समय बालक गुलरान की नजर इस बूढ़े गुलाम पर पड़ी। बालक सहसा मचल पड़ा—'इस आदमी को क्यों बाँधा है ? इसे छोड़ दो। ॐ ! ॐ !

परन्तु यह समय लाड़ प्यार का नहीं था। यह समय या सँकड़ों गुलामों के मामिक आफताबस्थान के रोष की परीक्षा का। जमींदार ने बालक की परवाह नहीं की। बाँधे हाथ से गुलरान का पकड़कर, दायी हाथ ऊँचा उठाकर वह थोड़ा को मार शुरू करने का आदेश देने ही बाला या कि बालक और भी अधिक ऊँच स्वर में मचल उठा—'ॐ ! ॐ ! छोड़ दो नहीं मानता। छोड़ दो। ॐ ! ॐ !'

पिता ने अब भी अपने लाड़ले पुत्र की तरफ ध्यान नहीं दिया। उसने अपना दाँया हाथ उठा ही दिया। अमागे हारिम की पीठ पर पड़ला कोड़ा पड़ने ही बाला या कि बालक गुलरान जमीन पर लोट-लोट कर ऊँचे स्वर में रोने लगा—'ॐ ! ॐ ! ॐ !'

जमींदार का उठा हुआ हाथ स्वयं नीचे मुड़ गया। उसने कहा—'बड़ा विरही लड़का है। अगले ही कुछ आफताबस्थान ने गुलरान को अपनी गोदी में उठा लिया। इसके बाद हारिम की आर मुग्धाविव होकर कहा—'मुग्धारे छोटे आपा के हुक्म से मुग्धे इस बार माफ़ किया जाता है।

दोनों दरवाजे जमादारों ने शीघ्रता से हारिम को टिकठी में खाम दिया।

बालक गुलरान अपने पिता की गोद से उतर कर भागा हुआ हारिम के पास पहुँचा। अशोक बालक ने अन्याधिक सरल मुग्धराष्ट के साथ पूछा—'मुग्धे ! तुने पिसे ग्या लिसे थे या नहीं ?'

यहाँ यह भी स्मरणीय है कि प्रारम्भिक कहानियों की अपेक्षा आधुनिक कहानियों के वस्तु-विन्यास में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुए हैं और आज की कहानी केवल ममस्यारों ही प्रस्तुत करती है तथा उनके समाधान के विषय में वह पाठकों को सोचने के लिये बाध्य करती है। यों तो आज की कहानियों में भी कथानक घटनाएँ, सघर्ष उसी प्रकार हैं और विक्रम में भी तत्सुक्यता तथा तीव्र जिज्ञासा भी विद्यमान है परन्तु उनका स्तर अब पिछली मायुक्तता से हटकर बौद्धिक हो गया है अतः उनमें कौतूहलता के साथ-साथ स्वामाधिक्यता और परम सीमा भी है परन्तु आधुनिक कहानियों की परम सीमा रम, घटना या संयोग पर अभिव्यक्त नहीं होती कि कोई स्त्री अपने गुमे हुए अर्ध-आकार किसी हेट वाक्स से अथवा एक पा ले अपितु उसमें उस नारी की मनोदशा की परम सीमा को यह स्वरूप दिया जाता है कि वह अथवा उसकी ही अपनी स्मृति में विगत आनन्द और शक्ति को प्राप्त कर लेती है। इस प्रकार आधुनिक कहानियों में मानव मंषों और अन्तर्-द्वों की स्वामाधिक्य अभिव्यक्ति की आती है जिससे कि पाठकों के हृदय में बार बार उनको पढ़ने की इच्छा जाग्रत होती है। इस प्रकार की परम सीमाओं का कुछ उदाहरण देखिए—

“कभी कभी रात के घोर सन्नाटे में खप्पाविष्ट मा मैं बुद्ध अस्पष्ट ध्वनियों सुनने लगता हूँ। कोई खिलखिल हँस रही है। कोई धमकी देकर चढ़ रही है—गारी पत्ती और बूरियों स्वक उठती है, घन बुटने लगती है और एक कोमल, अत्यन्त श्रेमल गायन-स्वर फूट पड़ता है—निद्रिया लगी—”

और उसके हाथों में जो छाले पड़ गये हैं, वे वहाँ से उठकर मेरे हृदय से बाहर चिपक गये हैं।

—निद्रिया लगी भगवतीप्रसाद वाजपेयी

और भी—

“नींव नहीं आ रही और मुँची ओंछों के सामने अभी बुद्ध दिन पहले की फल्पना दिग्गह है रही—दोटे से वंगले के सामने खान पर दो हल्की आराम कुर्सियाँ और खेलाता हुआ छोटा बालक।.....”

और वह शिबिल राधिर, नवप्रमूना एक नवजात शिशु को छाती से लगाए

1. “The Modern story tellers have changed their nature. There is still adventure but it is now an adventure of the mind. There is suspense but it is less a nervous suspense than an emotional or intellectual suspense. There is a climax, but it is not the climax of a woman who discovers her last jewels in the hat box, but the climax of the woman who discovers her last happiness in a memory

—The Short Story—Sean O Faolain (Page 164)

जिपने के लिए माग रही है। पीड़ा करनेवाले लोग चिन्ता रहे हैं..... यह किसका है ? उसे क्या अधिकार है ? प्योन जिम्मेदार है ?
इस घीमस रूपना का उत्तर था —“अपनी अपनी जिम्मेदारी !”
—जिम्मेवारी : यशपाल

धीर भी—

“एक अंचल उठा। वे मिल गये—नदी मिलने के लिये प्रस्तुत हुए।

दिल्लारा के मुख से मदिरा की तीव्र दुर्गन्ध आ रही थी। मखिपर घब उठा था। उसे प्रतीत होता था कि अँसे किसी हडिबियों के मयंकर ढाँच ने उसे दबोच लिया है। सहस्रों मयंकर घीमारियों के जंशु उसके शरीर में प्रविष्ट होने के लिए, उसकी ओर बढ़े चले आ रहे हैं।

महसा मखिपर उसके घादु-पारा से छिन्नक पड़ा। पृष्ठा के उदर में वह मुदमुदाया-क्या इसी को आनन्द कहते हैं ?
मूर्छित होती दिलास ने देखा—मखिपर अपने पहन भागा फसा जा रहा है।”
—प्रणय पिपासा अमृतलाल नागर

कहानी में पात्र और चरित्र-चित्रण

३:

जैसा कि Seon O' Faolain का कथन है One of the best definitions ever given of the technique of fiction is that action reveals character and that character demonstrates itself in action and action is only another word for incidents वस्तुतः पात्र कथानक के सजीव संचालक ही हैं तथा उनके द्वारा न केवल कथापस्तु का आरम्भ, विकास और अन्त होता है अपितु साथ ही हम उनके द्वारा न केवल की अपेक्षा फलाकार की अनुभूति ही अधिक सजग रहती है और वे अतीत, वर्तमान या भविष्य किसी भी युग के क्यों न हों लेकिन उनका सर्वथा सजीव और स्वाभाविक होना आवश्यक है। वृत्ति कहानी अपनी लघुनीमा में बहुसंख्यक पात्रों के चरित्र को स्पष्ट करने में असमर्थ रहती है अतः उत्कृष्ट कहानियों में कम से कम पात्र ही रहने हैं और कथानक के प्रारम्भ में वे दृश्य रहते हुए भी अदृश्य प्रस्तुत करते हुए भी अप्रस्तुत प्रतीत होते हैं जिसमें कि कहानी में हीतुहल की सृष्टि होती है जो कि अचरोक्षर पाठकों को आनंद प्रदान करती हुई पात्रों की चरित्रिक विशेषताओं को स्पष्ट कर देती है। पात्र अतीत वर्तमान, भविष्य तथा स्वदेश-मौलिक का संदेह न होना चाहिए तथा उनमें व्यक्तिगत भाव, संपर्क और मानवीय शौर्यत्व प्रणों की गृहस्था अवश्य रहनी चाहिए जिन्में कि पाठकों के मानस में उनके विषय स्थान प्राप्त हो सके। कुशल कहानीकार यह जानता है कि एक ही परिस्थिति और घटना समान श्रेणी के व्यक्तियों के जीवन में भिन्न भिन्न परिणतन उपस्थित कर सकती है और उनकी भावनाओं में वैसा विरिष्ट अन्तर डाल देती है जिसका कि मूलम अध्ययन आवश्यक है अतः वह पात्रों का चयन कर उनके जीवन को गति देने वाली या उनमें परिवर्तन लाने वाली घटनाओं को ही कथात्मक रूप प्रदान करता है। कहानियों के पात्र भी लोकतर और सामान्य नामक दो प्रकार के होते हैं परन्तु वृत्ति आधुनिक युग वैदिक युग है तथा अ-व्यवस्थात्मक अन्तः और निष्ठा

की अपेक्षा कम हमारी आस्था तक, विवेक और विद्वेषण में ही विशेष रूप से समती है अथवा आधुनिक कहानियों में उन सामान्य पात्रों को ही अंकित किया जाता है जो कि मानवीय संपर्कों और युग जीवन के प्रतीक होते हैं। सामान्य पात्र के भी दो प्रकार हैं, जिनमें से प्रथम में तो वे स्वयं ही अपना प्रतिनिधित्व करते हैं अथवा उनका निजी व्यक्तित्व ही प्रधान होता है तथा दूसरे में उनका कोई व्यक्तिगत परित्र नहीं रहता और वे सर्वथा परित्रों के प्रतिनिधि स्वरूप ही जान पड़ते हैं और एक समुदाय विशेष की वस्तु बनकर एक निश्चित परिधि में ही रह जाते हैं। यद्यपि डा० श्रीकृष्णलाल के कथनानुसार "कहानी में उपन्यास की भाँति किसी परित्र का अनेक कार्यो और प्रसंगों के बीच यथाविधि विस्तृत चित्रण संभव ही नहीं है इसीलिये कहानी का के अर्थिदु परित्र चित्रण नहीं हो सकता" तथा डा० देवराज उपाध्याय की दृष्टि में भी "वास्तव में कहानियों का काम परित्र चित्रण है ही नहीं" परन्तु विचार पूर्वक देखा जाए तो उपन्यास की भाँति कहानियों में भी परित्र-चित्रण का महत्वपूर्ण स्थान है। यह हम स्वीकार करते हैं कि अपनी संक्षिप्त सीमा के कारण कहानी में पारित्रिक विधास अथवा चित्र करने के लिए बहुत ही कम अवसर कहानीकार को मिल पाता है क्योंकि उसमें पात्र की व्यक्त्या रूप रंग आह्वति-प्रकृति धैर्यमूपा और सामाजिक परिस्थिति आदि का विस्तृत विवरण अंकित करने के लिए उसे पर्याप्त स्थान प्राप्त नहीं होता और साथ ही परित्र-चित्रण की सौमिल सम्भावनाओं के फलस्वरूप उसमें परित्र को स्पष्ट करना महज सम्भाव्य भी नहीं है लेकिन पात्रों के परित्र-चित्रण के अभाव में कहानी अधूरी ही समझी जाती है तथा रूप, रंग, स्वास्थ्य आदि गुणों में युक्त मूक व्यक्ति में किस प्रकार हमें लुभाने की क्षमता नहीं होती वही प्रकार कहानी में चाहे कितने ही गुणों का समावेश क्यों न हो पर जब तक पात्रों का परित्र चित्रण नहीं होता कहानी का प्रभाव पाठकों पर स्थायी रूपमें नहीं पड़ता। अतः परित्र चित्रण द्वारा ही कहानियों के पात्र अमरत्व प्राप्त करते हैं और आरभीय में प्रवीण होते हैं अतः श्री मोहनलाल 'विज्ञान' का यह विचार कि 'कहानी कपी वर्णन में परित्र की दृष्टि धारण हमें अमरत्व प्रदान करती है' पणुत उचित है। चूँकि उपन्यासकार की भाँति कहानीकार को पात्रों के परित्र-चित्रण की पूर्ण सुविधा और स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं रहती अतः कुरान कहानी-लेखक कुछ नियमों का पालन करते हुए ही परित्राचन में सफलता प्राप्त कर पाता है। सत्यप्रथम तो कहानी के पात्र विशेष का

१ आधुनिक हिंदी साहित्य का विकास—पृ० श्रीकृष्णलाल (पृष्ठ १२८)

२ कहानी में अर्थिदु चित्रण (विषय)—डा० देवराज उपाध्याय कहानी साहित्य पृ० ३४३ अथवा १०

३ कहानी और कहानीकार— श्री मोहनलाल विद्यागु (पृष्ठ १०)

चरित्र घटनाओं के समुच्चय ही चित्रित होना चाहिए और उसमें जीवन की शक्तियों का विद्यमान रहना अपेक्षित है जिससे कि वह सुख-दुःख, हर्ष-विषाद विरह मिलान आदि शारद्वत मनोभावों में डूबा हुआ एक सफ़ल बिजली की बॉत्ति प्रतीत हो। कहानीकार की बर्णन शैली स्पष्ट हो और उसमें सूक्ष्मातिसूक्ष्म वस्तुओं का भी चित्राकन करने की क्षमता होनी चाहिए क्योंकि नाटककार को पात्र का साकार रूप ही हमारे समक्ष प्रस्तुत कर देता है लेकिन कहानी-लेखक को कल्पना का अवलम्ब लेकर ही उसका चित्र अंकित कर पाता है। अतः कहानीकार को अपने मन की विशेष दशाओं और मानसिक सूक्ष्म भावनाओं से परिचित रहना चाहिए जिससे कि वह अपनी कहानी के पात्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर सके अन्यथा बिना अपनी हृद्यगत भावनाओं को जाने वह दूसरे की भावनाओं का चित्रण न कर सकेगा परन्तु साथ ही विक्षिप्त मन के शब्दों में 'मेरे पात्र मेरे वश में नहीं रहते वरन् मेरी लेखनी उन पात्रों के वश में हो जाती है' अतः पात्रों के स्वाभाविक और मजबूत चित्रण के लिए कहानीकार को सर्वदा ही अपना व्यक्तित्व अपने पात्रों पर आरोपित भी न करना चाहिए और इस प्रकार उसको अपने निजी व्यक्तित्व के साथ साथ अन्य व्यक्तियों के स्वभाव, आचरण और व्यवहार आदि का भी सूक्ष्म पर्यवेक्षण करना चाहिए तथा उसके लिए विश्व की अन्य सभी वस्तुओं का भी अनुशीलन आवश्यक है क्योंकि इस प्रकार के अभ्ययन द्वारा वह कुछ ऐसी उपयोगी तत्वों को भी प्राप्त कर लेगा जो कि पात्र के चरित्र को चित्रित करते समय उपयोगी सिद्ध होंगे। स्मरण रहे कि कभी-कभी ऐसे पात्र भी कहानी में चित्रित होते हैं जिनकी कि दिनचर्या हम प्रतिदिन देखते हैं और इस प्रकार सफलता पूर्वक चरित्र-चित्रण के लिए लेखक को मनोविज्ञान का अभ्ययन होना भी आवश्यक कहा जाता है। संक्षेप में कुशल कहानीकार चरित्र चित्रण में सुपरता और मजबूतता खाने के लिए किसी चरित्र की कल्पना कर इस प्रकार की छोटी-छोटी घटनाओं का चयन करता है जो कि उस पात्र की चरित्रिक विशेषताओं को स्पष्ट कर सके और इसी प्रसंग में वह सहायक प्रतीत होने वाली पात्र की आयु, मुन्दरता, मुखकृति, वैदिक संस्कार, परंपरागत रीतियों के प्रति उमकी विचारधारा, दिनचर्या कार्य, जीवन की घटनाएँ आदि बातों का विवरण भी दे देता है परन्तु उम इस बात पर भी ध्यान देना पड़ता है कि कोई भी घटना या घर्लत पात्र-विशेष के चरित्रिक विकास में कदां तक सिद्ध होता है। आयुनिष्ठ द्विती कहानियों में तो पात्र विशेष के मजबूत एवं ममस्पर्शी चरित्र चित्रण के बहादरण प्रचुरता के साथ उपलब्ध होते हैं।^१ यहाँ यह भी ध्यान में रखना चाहिए

१ देखिए—

“इमिमा उमकी पत्नी का नाम था। वह अनुपम मुखरी की कल्पना न बनी हुई कोमलता की प्रतिमा और मीन मारुत स्वर की मूरत में विधि न उसे जादू के डाला था।

कि कहानीकार द्वारा पात्रों के चरित्र-चित्रण के लिए ध्वनि, संकेत, कथोपकथन तथा घटनाएँ नामक चार साधनों का उपयोग किया जाता है और इनके उदाहरण हिंदी कथा साहित्य में बहुत अधिक संख्या में दृष्टिगोचर होते हैं अतः यहाँ चरित्र-चित्रण की इन विभिन्न प्रणालियों के उदाहरण देना भी आवश्यक है।

ध्वनि द्वारा पात्र विशेष का चरित्र चित्रण करना कहानीकार के लिए अत्यधिक मूल्यवान् कार्य है क्योंकि इस प्रणाली द्वारा जो चरित्र चित्रण किया जाता है वह प्रत्यक्ष या पिरलेपणात्मक कहलाता है और चूंकि लेखक स्वयं ही विस्लेषणात्मक ढंग से पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालता है अतः उसे इस बात की पूर्ण सविया रहती है कि वह अपने पात्रों के सम्यन्व में जो कथन चाहे लिखे। हिंदी कथा साहित्य में इसी प्रकार के चरित्र चित्रण की संख्या अधिक है। देखिए—

“धेड़ों घाम में महारिष सुनार एक सुबिख्यात आदमी था। अपने म्यायबान में प्रातः स सखा सरु अगीठी के पास बिठा हुआ खटरग किया करता था। यह लगातार ध्वनि सुनने के लिए लोग इतने अभ्यस्त हो गए थे कि जब किसी

मनीष कला में उसका विशेष क्षमता प्राप्त कर लेता था और वह मनुष्य होने में मुहाणा का काम कर रहा था। जब कभी वह अपनी कोमल अनुसियों का सितार के परखों पर रखती और कान उभेठकर तारों का खोजती तो खोज हुए उद्गार जाग उठत और कानों के गलत मिटास और मस्तो का एक समुद्र सुननबाध की नम नम में ध्याप्त होकर रह जाता।

—नाथी उपेक्षाय मरक

और भी—

“माटे बिठ्ठे मरकत काठी संभोला बर चहरे पर मुताहासो का मूर, मास पर केसरिया बरन का रूपे के बराबर मोम का टीका मुह में पात रखा हुआ कूने पर गुनाबी गाम निहायत बायीं आरी की बोटी और कुरता आँगों पर मुनहरी टहो का परमा कलाई पर बघबीमती मुनहरी घड़ी जब में पाकर २१ का मुनहरा मेर पैर में मुनहरे काय क अल्पम दाहिने हाथ की अनामिका में एक बड़ा ना मीनक जो उन्हें राज आ गया था यही पंडित मुकटपर त्रिपान्ति थे।”

मंगा मादमी मंगा अरुम अमृतगव

और भी

बरना मेरा हगबाहा है। तारकीत-अमा कामा-अनटा मारी नरकम बोहरा बरन हासी की आँसों का माग करके बानी बिबाता को कड़ुमी की गबाह तनिक-ननिक भर की आँसों सरगोण के बानो-अंके गड़े मुरेर हग कान गया कामत आवि की नामधयता का माधव देन बानी मरा बहार अननितत मामों की अनबारी-हाथ पैर के तनबा को छार लोण का बोई काम ऐसा नहीं जहाँ दुहरे निहरे मुकट के मुकट रावें न उभे ह, -यही है बरन बीबरो की दुनिया। आवि का कामो है। उमर पचान के मगमग।

—बिपन की मां माधव विर

कारण से यह बंद हो जाती थी जान पड़ता था कोई चीज गायब हो गई है। वह नित्य प्रति एक बार प्रातःकाल अपने छोटे ब्र पिनडा लिए कोई मजन गाता हुआ तालाब की ओर जाता था। इस धु धले प्रकार में बमका जर्जर शरीर पोपला मुँह, और मुकी हुई कमर देखकर किसी भी अपरिचित मनुष्य को उसके पिशाच होने का भ्रम हो सकता था। क्यों ही लोगों के कानों में आयाज आती—‘सत्त गुरुदत्त शिव दत्त दादा’ लोग समझ जाते कि मोर हो गया।”

—आत्माराम प्रेमर्षद

और भी—

“प्रोफेसर श्योतिरिन्द्र वसु एकाकी जीव थे। जिस प्रकार किसी विशाल पर्वत को किसी एक ओर, देखकर उसके सम्पूर्ण रूप का अंदाज लगाना कठिन है उसी प्रकार उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की जानकारी भी कठिन थी। अपने घरे में वे कभी किसी ने कुछ कहते ही न थे। यिथाह उन्होंने क्यों नहीं किया और विश्व विद्यालय से मिलने वाला साठ धेतन निर्बन छात्र-छात्राओं में दौटकर वे अपनी गुजर बमर कैसे करते थे उस घरे में लाल पूँछने पर भी उन्होंने कभी कुछ नहीं बताया। पर नीरस वे विलकुल नहीं थे और जरा सा इनके हृदय में प्रवेश पा जाने पर ता न भिन्न ज्ञान का अपूर्व खजाना ही हाथ लग जाता था यन्कि एक ऐसे उज्ज्वल व्यक्तित्व के दर्शन भी हाते थे जो आज के मानव-समाज में दुर्लभ ही सम्मिल्य। उनके व्यक्तित्व के पारम स्तरों से न जाने कितने व्यक्ति सुवर्ण बन चुके थे।”

—अर्धी के आँसू मोहनसिंह मेगर

वस्तुतः वर्णनात्मक प्रणाली की अपेक्षा संकेतात्मक प्रणाली को ही चरित्र-चित्रण के लिए अधिक उपयुक्त और कलारमक समझा जाता है क्योंकि इसमें क्षेत्रक अन्य चित्रों का अवलम्ब लेते हुए पात्रों के मनोमायों पर मफलता के साथ प्रवेशा क्षमता है। संकेतात्मक चरित्र-चित्रण में लेखक पात्रों के चरित्र-चित्रण के विषय में अपनी ओर से कुछ न कहकर सम्पूर्ण परिणाम में अयगत होने का उच्चरदायित्व पाठकों पर ही रहने देता है तथा स्वयं ता वह पात्रों की केवल पारिथ्रिक वृत्तियों का ही चित्रण करता है। संकेतात्मक प्रणाली को न केवल वर्तमान युग के हिंदी कहानीकारों ने अपनाया है अपितु प्रेमर्षद और प्रसाद की कहानियों में भी इसके सुन्दर उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं। देखिए—

“समीप ही सदैव घटानों पर जलपाय के सहरीले प्रवाह में कितना संगीत था। चौदनी में यह कितना सुन्दर हो जाता। जैसे इस पृथ्वी का दाया पय। मेरी उम म्पोपकी से बसका सप रूप विरताइ पड़ता था न। मैं उसे देखकर संतोष का जीवन विमान लगा। यह मेरे जीवन के सब रहस्यों की प्रतिमा थी। कभी उमे में आँसू की धारा समझता, जिस निराश प्रेमी अपने अपने आराध्य को कटोरता पर

स्वयं हलकता हो, कभी उसे अपने जीवन की तरह निम्न संसार की फटोरता पर छटपटाते हुए देखता। दूसरे का दुःख देखकर मनुष्य को संतोष हाता ही है।”

—चित्रवाले पत्थर प्रसाद

और भी—

“बीस बाइस वर्ष की अवस्था में मनुष्य की आकांक्षाएँ स्वप्न होती हैं उनको परिवारिया मिले तो वह पनपें नहीं तो सूखकर मुरझ जाती हैं और जीवन बीतते बीतते आदमी अपने को कुछ हुआ अनुभव करता है। वे आकांक्षाएँ स्नेह माँगती हैं। स्नेह अनुपलब्ध समय पर और यथानुपात मिले तो हरी भरी होकर कैमै कैमै पृथ्वी न थिरक आगे फटा नहीं जा सकता नहीं तो अपने को त्यागी चुनवी है। मूल जिनके हृदय हैं ऐसी प्रकृतियाँ विरोध में से इसे भी सींचती हैं, अवश्य और वे मानो चुनौतीपूर्वक बढ़ती रहती हैं पर इस शक्ति को प्रतिभा कहा जाता है, और प्रतिभा सरल नहीं है, वह तो बिरल ही है। कहना कठिन है कि राजीव में प्रतिभा की शक्ति कितनी थी किन्तु जय इसमें अतीव भ्रम भी कि कोई उसे पूरे तप वह अकेला अपने को पाता था।”

—राजीव और भाभी जैनेन्द्रकुमार

विचारकों ने परिश्रम चित्रण के लिए कथोपकथन प्रणाली को सबसे उत्कृष्ट माना है क्योंकि इसमें लेखक सर्वथा परेश रहकर वातालाप द्वारा किसी पात्र विरोध का परिश्रम अंकित करता है। कथोपकथन प्रणाली में पात्र न केवल एक दूसरे के परिश्रम को स्पष्ट करते हैं अपितु वे अपनी कथन शैली, भाव भंगी और भाषा द्वारा अपने परिश्रम की व्याख्या भी कर देते हैं। इस प्रणाली में लेखक को अपनी ओर से कुछ कहने की तनिक भी आवश्यकता नहीं रहती क्योंकि पात्रों द्वारा स्वयं ही एक दूसरे का वर्णन स्पष्ट हो जाता है और कथोपकथन द्वारा मानव-जीवन तथा उसके मनोमात्रों की अभिव्यक्ति को सुन्दरता और सरलता के साथ ही जा मदर्शी है। साथ ही पात्रों को न केवल अपने परिश्रम-विश्लेषण की पूर्ण स्वतंत्रता रहती है अपितु दूसरे पात्रों के प्रति सांकेतिक शब्द पढ़कर उनकी व्याख्या करने का अवसर भी मिलता है। परन्तु कथोपकथनारम्भ प्रणाली में इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि संवाद शब्दों के व्यवहार, निर्जीव शब्द और योमिल न हों। चूंकि कहानी का आधार लौटा होता है अतः वातालाप भी संक्षिप्त ही होने चाहिए और परिश्रम के प्रति जीवन मात्र संकेत ही रहने चाहिए, तथा कहाना की घटना को पढ़ने के लिए भी संवादों का प्रयोग अनुपयुक्त है क्योंकि इस प्रकार कहानी की रोचकता मिट सी जाती है। हिंदी में इस प्रकार की कहानियों की संख्या सीमित ही है जिनमें कि कथोपकथनारम्भ प्रणाली को प्रारंभ पर पात्रों का परिश्रम-विश्लेषण सरलता के साथ किया गया हो। चरारा है हमारी नई पीढ़ी के कहानीकार इस प्रणाली को सरलता के साथ अपनाएँगे। कथोपकथनारम्भ प्रणाली के कुछ सुन्दर उदाहरण दिए—

‘मैकू ने बाहर आकर देखा कि मूरे और गोली में लड़ाई हो रही थी। मैकू के कर्करा स्वर से दोनों भयभीत हो गये। गोली ने कहा - ‘मैं बैठा था, मूरे ने मुझको गालियाँ दीं। फिर भी मैं न बोला। इस पर उमने मुझे पैर स ठोकर खगा दी।’

‘और समझता है कि मेरी बांसुरी के बिना कैला गा ही नहीं सकती। मुझसे कहने लगा कि आज तुम बोलक वेताल बजा रहे थे।’ मूरे का कठ क्रोध से भरपरा हुआ चिह्न था।

मैकू हँस पड़ा। वह जानता था कि गोली युवक होने पर भी सुझुमार और अपने प्रेम की माधुरी में विह्वल, लजीला और निरिह था। अपने को प्रमाणित करने की चेष्टा उममें भी ही नहीं। वह आज जो कड़ उप हो गया, इसका कारण है केवल मूरे की प्रतिद्वन्द्विता।

कैला भी वहीं आ गई थी। उसने पूणा से मूरे की ओर देखकर कहा ‘तो क्या तुम सचमुच वेताल नहीं बजा रहे थे।’

‘मैं वेताल न बजाऊँगा तो दूसरा कौन बजावेगा। अब तो तुमको नये पार न मिले हैं। कैला। तुमको माझम नहीं कि तेरा पाप मुझसे तेरा क्याह ठीक करके मरा है। इसी बात पर मैंने उसे अपना नेपाली का दोगला टट्टू दे दिया था जिस पर अब भी तू चढ़कर चलती है। मूरे का मुँह श्रेय के मद्यग में भर गया था। वह और भी कुछ बकता किन्तु मैकू की बोट पड़ी। सब चुप हो गये।’

—इन्द्रकाश प्रसाद

उपयुक्त अवतरण में कथोपकथन द्वारा चरित्र चित्रण का प्रयास किया गया है और इसमें कोई संदेह नहीं कि कहानीकार को पात्रों के चरित्र-चित्रण में बातालाप से सहायता भी मिली है परन्तु इससे भी सुन्दर ब्याकरण निम्नांकित है जिसमें कि संवादों द्वारा कथक ने अन्तर्द्वन्द्व एवं मानसिक उत्कर्ष का सजीव चित्रण किया है। देखिए—

‘घर में जाते ही शारदा ने पूछा—‘फिसलिय बुझाया था वही देर हो गई। फलहरपंद ने चारपाई पर फेटते हुए कहा—‘नझे की सनक थी और क्या ? शीतान ने मुझे गालियों दीं, जलील किया बस यही रट लगाये हुए था कि देर क्यों को। निर्दया ने चपरासी म मेरा कान पकड़ने को कहा।’

शारदा ने गुस्से में आकर कहा—‘तुमने एक झूठा उतारकर दिया नहीं सुभर को ?’

फलहरपंद—‘चपरासी बहुत शरीफ है। उसनेसाफ कह दिया -‘दुखूर मुझसे यह काम न होगा। मैंने भय आदमियों की इज्जत उतारने के लिए नोकरी नहीं की थी। वह उमी बकत मलाम करके चला गया।’

शारदा—‘यह बरादुरी है। तुमने इस माहब को क्यों नहीं फटकरा ?’

कठानी-कठना की आधार शिवाय

फतहबंद—फटकार क्यों नहीं—मैंने भी खूब सुनाई। वह छड़ी लेकर दौड़ा
मैंने भी जूता सँभाला। उसने मुझे कई छड़ियाँ जमाई—मैंने भी कई जूते लगाए।
शारदा ने खुरा होकर कहा—‘सब ? इतना सा मुँह हो गया होगा बसब्र।’

फतहबंद—‘बेहरे पर मगडू सी फिरी हुई थी।
शारदा—‘यह क्या किया तुमने, और मारना चाहिये था। मैं होती, तो
बिना जान लिए न छोड़ती।’

फतहबंद—‘मार तो आया हूँ लेकिन अब खैरियत नहीं है। देखो क्या
नतीजा होता है ! नौचरी तो जायगी ही, शायद सजा भी फटनी पड़े।’

शारदा—‘सजा क्यों फटनी पड़ेगी। क्या कोई ईसाफ करने वाला नहीं है,
बसने क्यों छड़ी जमाई ?’

फतहबंद—‘उसके मामले मेरी ख़ौन सुनेगा। अशकत भी उम्मी की तरह
हो जायगी।’

शारदा—‘हो जायगी, हो जाय, मगर देख लेना अब किसी साहब की यह
हिम्मत न होगी कि किसी पापू को गालियाँ दे बैठे। तुम्हें चाहिये था, कि ज्योंही
मुँह न गालियाँ निच्छली, लपककर एक जूता रसीद करते।’

—इलीफ़ प्रेमचंद

बीर भी—

‘किसी तरह दिन बट रहे थे।
रात्रि का समय था। त्रिवेणी तो गढ़ थी, लज्जा वैठी थी।
शैलता हूँ इस नीचरी का भी कोई ठिक्कना नहीं है।’—गंभीर आहूति बन
हुए पित्रयच्छु ने कहा।

‘क्यों ! क्या कोई नई बात है ?—लज्जापती ने अपनी मुथी ओंठों
उखर कर पार पित्रय की और देखते हुए पूछा।
‘यह साहब मुझसे अप्रमत्त रहता है। मेरे प्रति उमकी ओंठें सदैव
रखती हैं।’

‘बिनामिथे’

‘ही सज्जा है मेरी निरीहता ही इमकत कारण है।’

लज्जा चुप थी।

‘पन्द्रह रुपये मानिक पर दिन भर परिभ्रम करना पड़ता है। इतने पर भी—
‘बोह यहा मयातक समय आ गया है।—लज्जापती ने दुःख की एक सौम
नीपने हुए कहा।

‘मदानबाले का दो मास का चिठया था है इस पार वह नहीं मानेगा।
इस पार न मिलने मे वह यही आकत सफायेगा।—लज्जा ने मयभीन होकर
कहा।

क्या करे ? जान देखर मी इस जीवन से छुटकारा होता ... ।
 ऐसा सोचना व्यर्थ है । घबड़ाने से क्या काम ? कमी दिन फिरेंगे ही ।”

— विधाता यिनोदराकर व्यास

कहानी का कथानक किसी भी प्रकार का क्यों न हो लेकिन उसमें कोई न कोई घटना अवश्य ही रहती है और इस प्रकार एक मुख्य घटना तथा शेष सहायक घटनाओं को लेकर ही कहानीकार अपनी कला का निर्माण करता है । स्मरण रहे सहायक घटनाएँ सामान्यतः छोटी ही होती हैं और वे मुख्य घटना के लिए पूर्ण रूप में कार्य करती हैं अतः उनका उस प्रमुख घटना के साथ पूर्ण स्यामजस्य आवश्यक है और इन्हीं छोटी छोटी घटनाओं द्वारा ही चरित्र-चित्रण भी होता है । इस प्रकार घटनाओं द्वारा किसी पात्र विशेष का चरित्र अंकित करते समय फुराक कहानीकार इस बात पर पूरा ध्यान देता है कि घेसी घटनाएँ छोटी हों तथा कहानी के मुख्य चरित्र से वे सम्बद्ध भी हों । घटनात्मक चरित्र-चित्रण के उदाहरण देखिए—

“धीरे धीरे दूरी पर पौंव रखता हुआ धंदन बढ़ा और लाकर दरवाजे के साथ पंजों के चल लड़ा हो गया । अन्दर छत में लाल रंग का चल्प लड़ा रहा था । उसके भीमे प्रकार में वह आँसू फाड़ फाड़कर देखने लगा किन्तु दूसरे ही क्षण वापस मुड़ा । उसके शरीर घर्म होन लगा था, अगों में तनाव आ गया था कंठ और धाँठ सूंघने लगे थे आर उसकी नसों में जैसे वृष उबलने लगा था । बसी तरह पंजों के चल भागता वह बाहर आया । धीरे से उसने दरवाजा लगाया और बाहर चौदनी में आ लड़ा हुआ । सामने अँधारेड का तना लड़ा था । उसके खी में आया कि अपने गुणवत् की एक शोन् से बह उन तने को गिरा दे ।”

—उयाल उपेन्द्रनाथ ‘अदक’

और भी—

इस उल्लासित आमोद के पीछों पीछ एक मुरझाया हुआ पुष्प, बुचली हुई पान को गिल्लीरी—वही वालिका—घट्टमूय्य धीरे स्थित बस्त्र पहने बादराह के मिलबुल अ क में लगमग मूर्धित और अस्तव्यवस्त पड़ी थी । रह रहकर शायम की प्याली उसके मुँह से लग रही थी और वह खाली कर रही थी । एक निर्जीव दुराले की तरह बादराह उसे अपने बदन से मनाये मानों अपनी तमाम इन्द्रियों को एक ही रस में सराबोर कर रहे थे । गर्भीर आधी रात बीत रही थी । सड़सा इसी आनन्द वर्षा में पिडली गिरी । कण के उमो गुणधार को विवर्ण करके क्षण भर में वही रूपा काले आम्पय से नम्य शिखर टुक बाहर निकल आई । दूसरे क्षण एक और मूर्ति वैम ही आयेणन में गुणधार से बाहर निकली । क्षण भर के बाद वानों ने अपने आयेणन उतार फेंके । पटी अग्निशिव्या अवसंत रूपा आर उसके साथ गीरांग कल्प ।”

—पानवाली चतुरसेन शास्त्री

सुन्दर सुपर शम्शावली भा कभी-कभी चरित्र-चित्रण में अत्यन्त सहायक होती है और कहानीकार पात्र विधाप की पारित्रिक विशेषताओं का उल्लेख करते समय प्रसिद्ध चरित्रों, दृश्यों या उपमाओं का भी अवलम्ब ग्रहण करता है जिसके फलस्वरूप कभी-कभी एक ही वाक्य में पात्र का सम्पूर्ण चरित्र हमारे लीचनों के सामने खिच सा जाता है और उसमें फाव्यात्मकता भी दृष्टिगोचर होती है तथा सर्वसाधारण के लिए वह कभी कभी बुद्धि-गम्य भी नहीं रह पाता।^१ इतना ही नहीं बुद्ध फहानीकारों ने पात्रों के चरित्र चित्रण में स्वामाबिकता ज्ञान के उद्देश्य में स्थान-विशेष के शब्दों का निस्संकोच प्रयोग किया है और इस प्रकार उनकी कहानियों में बहुत से अप्रफलिप्त शब्द भी दृष्टिगोचर होते हैं परन्तु विचारकों द्वारा पात्रों की मातृभाषा का प्रयोग उचित नहीं माना जाता क्योंकि इस प्रकार यदि किसी कहानी का जोड़ पात्र बंगाली, मद्रासी गुजराती या फिर विदेशी हुआ तो उसमें सम्बन्धित वातावरण में उसकी मातृभाषा का ही प्रयोग होगा और कहानी-कला में अस्वाभाविकता ही दृष्टिगोचर होगी। आधुनिक कहानी-कला में कहानीकारों ने पात्रों में व्यक्तित्व प्रतिष्ठा के हेतु चरित्र-भिरलेपण की पद्धति भी अपनाई है जिसके फलस्वरूप न केवल पात्र का निरिपत व्यक्तित्व पाठकों को प्रतीत होता है अपितु चरित्र-चित्रण में पूर्ण सजीवता वास्तविकता और अमरता आ जाती है।

१ कुछ उदाहरण देयिए -

‘जो हुआ दिन के जगत रहने को बरह है वह दिन को बुझा भी देनी है। माता के सस्नेह अक्षुण्ण प्राणों का पावन प्रदीप को पति की जिग निरचम समीर न मास भर बना रछा था, वह गाम भर से उगे बुझाकर, उगकी पृथ्वी से दूर, अतरिण की मातृ तिरार्हण हो गई है। मास हो भर में मुहाग का काजस उस दीप प्रजाप के ऊपर ररनार जाणों में प्रिय दयन के अंजन रूप नहीं रह गया। माता मात्र का धरन की तरह अपनी मारी रगीनियों को बोकर बुझ हो रही है—बबेठ देवामी की रंग प्रभात के रदिमान मात्र से ब लघुन—जसे बरस देवाचन के लिए बुझी हुई। पर प्राणों के बीच इतन में जो रग लगा हुआ है वह गगन का नहीं—बमन का है।’

— गद्यनता नृपचान विगायी निगना

और भा—

बतावत मे प्रवेत विद्या। पीग भी कानी मरुछती हुई धमकों पर अनाकपाती मे रगता हुआ उजगीव बूबि तर मूमना हुआ भीना रेगामी उलगीव बना हुआ पीग अचावरन और माकपाती मे बँधा हुआ अग्य कविग्यन। मास की पदक की भांति आकपक, विगात भाद मयन और मारंग भी अचापती जान।”

— निगविद की हँसो : पत्रकार ‘भारती’

इस पद्धति द्वारा कहानी-लेखकों को मानव-मस्तिष्क के समस्त संघर्षों, प्रश्नों एवं निर्वहताओं का पूर्ण चित्रण करने में सफ़लता प्राप्त होती है। स्मरण रहे चरित्र-चित्रण को इस पद्धति के निरपेक्ष विश्लेषण, आत्म-विश्लेषण और मानसिक ऊहापोह द्वारा विश्लेषण नामक तीन प्रकार होते हैं।

चरित्र-विश्लेषण की निरपेक्ष विश्लेषण वाली पद्धति में अन्य पुरुष का चरित्र विश्लेषण किया जाता है अर्थात् कहानी का एक पात्र दूसरे व्यक्ति की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालता है या फिर स्वयं ही कहानीकार पात्र विशेष का चरित्र-विश्लेषण परोक्ष रूप में करता है। *देलिया* —

“चिन्तन में उसे पीड़ा होती थी, किन्तु पीड़ा उसे चिन्तन का आधार देती थी और इसीलिए वह पागल नहीं हुआ, इसीलिए जब सुन्नन आकर उसे अशान्त करके चला जाता था तब वह उन्मत्त दानव की भाँति उस छोटी सी कोठरी में टहलने लगता था। एक सिरे से दूसरे तक, एक, दो, तीन चार, पाँच, छह फिर वापस, एक, दो तीन, चार, पाँच फिर लौटकर एक, दो, तीन और इसी तरह वह सारी रात बिताता तब उसकी टाँगें धक जातीं, वह पक्षपक मूमि पर बैठ जाता और चुपचाप मन ही मन रोने या कविता करने लगता। उमक़र एक राज्य भी बाहर नहीं निकलता एक छाया भी उसके मुख पर ब्यक्त नहीं होती। वह मानों किसी अदृश्य समुद्र के आँटे की भाँति धीरे धीरे उभर छाठी और निश्चल हो जाती उस समय तब जब तक कि दूरतः सुन्नन पुनः उसे न उठाये।”

—कोठरी की दात अज्ञेय

और भी—

“अपने शरीर के अंग अंग पर उसे मोह होता चला गया। जैसा भी उसका शरीर था, उससे ठीक चहाने का सवाल उसी से पूछ करना चाहिए। शरीर के अंग अंग में प्रकृत आग लगती जा रही थी। कभी वह अपने हाथ की उँगलियों खुद ही मसलने लगती, कभी उस नारी अंग से उधेजित हो वह अपने सारे शरीर को मम करना चाहती। शरीर की वह भूल उठती जाती थी। वह विचार धनकर मारे शरीर को भी देखती जा रही थी। वह कुछ भी सोच नहीं सकती थी। आपी रात तक उसे नींद नहीं आती।”

—रैनबमेरा पहाड़ी

आत्म-विश्लेषण वाली पद्धति में पात्र स्वयं ही अपनी मानसिक भावनाओं को प्रकट करता है अतः उसमें आत्मकथात्मक प्रणाली में अपना ही विश्लेषण किया जाता है। *देलिया* —

“मैं उन आश्चर्यों में से हूँ जो सभ्य समय केवल अपने ही अंतर की भावनाओं का लिए रहते हैं ठीक उसी तरह, जिन प्रकार मादा पृंगारु अपने नवजात

शिशु को हर पक्षी छाती में अकड़ते रहती है। बाहरी परिस्थितियों का प्रभाव ऐसे मयाली आदमी पर बहुत कम पड़ता है, बाहरी परिस्थितियों को वह अपनी सुदृढ़, सुस्थिर निश्चित आदमियों से पूरा भावुकता का रंग देता है न कि उनसे कुछ छेने की चेष्टा करता है। मैं इसी प्रकृति का आदमी हूँ। अर्थात् मैं आयुनिक मनोबशा निका का भाषा में 'इंट्रोवर्ट' हूँ। पर दूसरे 'इंट्रोवर्टों' से मुझमें एक विशेषता है। वह यह कि मैं इस अंततः स्वी मनोवृत्ति की परमसीमा तक पहुँच जाने के कारण ऐसा घोर स्वार्थी बन गया हूँ कि बाकीसौ प्रति सोते, जागते अथवा स्वप्नावस्था में जानकर या अनजान में केवल एक ही बात की चिन्ता में मग्न रहता हूँ—वह है मेरा अपनापन।"

—मैं : इलाचद्र जोशी

शुक्ति नारी और पुरुष दोनों की मनाभावनाएँ एक दूसरे में क्रांती प्रथक होती हैं अतः उनके आत्म विदलेपण में भी विभिन्नता भी रहती है। स्मरण रहे कि पारस्परिक विरोधी शक्ति ही नारी और पुरुष के पारस्परिक आकर्षण की वृद्धि करते हैं तथा विभिन्न सामाजिक धंधन और मयाचारों भी उन्हें एक दूसरे से प्रथक रखकर उन्हें एक दूसरे की ओर धार भी अधिक आकर्षित कर देते हैं। पुरुषपैरो में यदि कोई नारी राष्ट्र के सुनसान वातावरण में किसी ऐम पुरुष के साथ जो कि उसे पुरुष समझना हो लैटी हा ता उस समय उसके मानस की क्या दशा होगी इसका मया ही मुद्दर कनापूर्ण पियण निम्नांकित अवतरण में किया गया है। देखिए—

'चारों ओर समाना छाया हुआ था। कमरे का क्षीण प्रथरा सुदुबरा कर चुक गया। अंधकार की दीवार हम दोनों के बीच आ गई। लगा कि जैसे मय कुछ खो-गया है आर अने जीवन से भी जैसे मैं बेगाना हो गई हूँ। एक पार जी में आया कि उठ खड़ी होऊँ, लेकिन फिर तुरन्त ही हम प्रयत्न की व्यर्थता सामने आ गई और मंगुण अंगों का टाना छाड़कर लेट रही।

सोपी लेगी मैं बुद्ध मोचना बाहरी थी लेकिन बुद्ध भी मोच न पाती थी। इधर उधर धूमपाम कर यही मय सामने आ मया होता था कि पुरुष मय में मैं एक ही चिन्तरे पर लेगी हूँ। इस मयाल ने मुझे इनना पार लिया था कि आरांक्षित हा उनी, हृदय जमे मयन उठा एक पार जगाकर उम दिग्गते के लिए कि भं पुरुष नहीं पाती हू। मेरा हाय अनायाम ही आग पड़ा भी, लेकिन कपड़ों में उममय रह गया १।"

—पंडित प्रदेरा नगलमप्रमाद नागर

उमा कि एक पिचारक ने लिया है "परिस्थिति चिन्त में पत्रकर व्यक्ति की यही चिन्तित दशा हो जाती है। इसके अनुभावों का पियण इसके मन की स्थिति स्वयं पर मरना है। यही म दृष्ट की मृति हो जाती है। मानस-मन के उद्धारन

में कलात्मकता सभी आती है जब वह इन्द्र एवं संपर्प में पडा हो। यदि ऐसा न हुआ हो तो वह फीका रह जाता है। किसी भिखारी को देखकर मन में कठण भावना जागृत हो ही उठती है। गरीब होते हुए भी यदि मर्मव हुआ हो तो उसे कुछ न कुछ मोल दे दी जाती है। इसके चित्रण में कोई कला नहीं। किन्तु जब मनुष्य अन्तर्द्वन्द्वों में कङ्काल उठता है तब उसके चित्रण में कला है।” वस्तुतः इस प्रकार कहानियों में मानसिक उद्घापोह द्वारा चरित्र-विरलेपण की पद्धति का विशेष कलापूर्ण समन्वय जाता है क्योंकि इसमें कहानीकार मानव मस्तिष्क के ममस्त संघर्षों का विरलेपण चिन्तन और मनन द्वारा करता है। कुछ समीक्षकों का यह भी कहना है कि पयास सतर्कता के अभाव में कभी-कभी कहानी में चरित्र चित्रण की अपेक्षा शैक्षिक विवेचन ही दृष्टिगोचर होता है लेकिन हमारी दृष्टि में यह मत युक्तसंगत नहीं है और अधिकतर विचारकों ने मनोवैज्ञानिक चरित्र चित्रण तथा मनोवैज्ञानिक तथ्य निरूपण की महत्ता प्रतिपादित करते हुए यही आकांक्षा व्यक्त की है कि प्रत्येक पाठक यही चाहता है कि वह रचयिता को सृष्टि के भीतर आप हुए मानव के मनोसंघर्ष में प्रवेश कर उनके स्थाय तथा भौतिक संसार के मूल में निवास करने वाली मूल भावनाओं और विचारों का अलोडन करे।” इस प्रकार डा० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के शब्दों में आज के शैक्षिक युग का पाठक विशेष प्रकार के चरित्र में भरे चरित्र का स्वरूप समझना चाहता है। अंतजगत में भावों और विचारों के उदय, विकास और संपर्प की कहानी सुनने में उसे विशेष आनंद का अनुभव होता है। अतः डा० अधिक मनोवैज्ञानिक और इन्द्रप्रधान वृत्तियों का चित्रण

१ हिन्दो माहित्य (१९२३ १९६० ई०) - डा० मोनाताज (पृष्ठ २३९)

२ कुछ उदाहरण देखिए -

“अतमान आध्यात्मिक मनोवैज्ञानिक विरलेपण और जीवन के यथाय और स्वामा विक चित्रण को अपना ध्येय समझती है। उसमें कल्पना की मात्रा कम अनुवृत्तियों की मात्रा अधिक होती है इनका ही नहीं बल्कि अनुवृत्तियाँ ही रचनात्मक भावना में अनुवृत्तित होकर कहानी बन जाती है।”

—कुछ विचार प्रसंग (पृष्ठ २०)

जो भी—

“जब हम कहानी का मुख्य उद्देश्य बटना विद्या से नहीं मपाते इस कारण ही पात्रों की मनोवृत्ति स्वयं पटनाओं की सृष्टि की। पटनाओं का स्वर्ण कोई महत्त्व नहीं रहा। इनका महत्त्व केवल पात्रों के मनामात्रों को व्यक्त करने की दृष्टि में ही है।

—कुछ विचार प्रसंग (पृष्ठ २६)

होगा उतना ही अधिक आधुनिक अत्येता का बौद्धिक अमुरंजन होगा ।^१ मानसिक उच्चापोह के कुछ उदाहरण देखिए—

“उसके मन को स्थिरता नहीं थी। वह अपने को कहीं बाँधे। उस मन के भीतर पड़ाई भी है, प्रेम भी है लेकिन वह मन अपने को जैसे अस्वीकृत पाता है। किसने उसे ले लिया है। जिसके लिए इसका वह मन रहता है, तीनों लोकों में जो उसका अभीरवर है वह आदमी तो एकदम उसे स्तने में और परपथ में बुना देना चाहता है, वह उसे ऐसा प्यार करता है। पर उसके क्या वह योग्य है।”

—प्रामोफ्रेन का रिश्चर्ड जैनेन्द्र कुमार

और भी—

“पत्नी को नाराज होने का कारण न था। उन्हें तो एक प्रश्न का बेसा कुछ संतोष मिलता था जैसा बालक को बोलनेवाला खिलौने को पीट कर उन्हें बुलवाने में। अंतर यह था कि बालक को ज्ञात नहीं होता कि उसके बचाने और पत्नी के बोलने में क्या सम्बन्ध है और महिला ऐसी बातें सुनने के ही लिए ब्रेक रही थी। वह यह तो जानती ही थी कि अच पति के लिए साधु की मारना उतना संभव, अस्तान और प्रिय कार्य न होगा। जैसा पति का क्रोध पत्नी को शारीरिक प्रहार देकर तुष्ट होता था वैसे ही उसके पथज में, उसी का खगभग समकक्ष पत्नी में एक स्थिरचोषित भाव था, या यह कहिए कि अचला का क्रोध था जिसका जहर निकाल वाला गया।”

—माधु की हठ : जैनेन्द्र कुमार

इसमें कोई संदेह नहीं कि मानसिक उच्चापोह के इन उदाहरणों में कहानी का आकर्षण बढ़ जाता है और इसमें फलात्मकता भी आ जाती है। हिंदी पद्या साहित्य में कई ऐसी कहानियाँ भी लिखी गई हैं जिनमें कि पात्रों की आर्थिक पिशाचताओं का उद्घाटन करते समय पात्रों के मानसिक अस्तव्यस्त का बिलार के साथ अंकित किया जाता है। कभी कभी यह अस्तव्यस्त कहानी के अन्त तक पकता जाता है और यह पाठक को अपनी ओर इस प्रकार आकृष्ट कर लेता है कि सम्पूर्ण कहानी के समाप्त हो जाने पर भी पाठक उसके सम्बन्ध में काफी देर तक सोचना रहता है। उदाहरणार्थ—

‘मोटर की गिरफ्तियों की चपल से उड़ते जाते बिजली की धरानों में अज्ञेय मधुन और दूधाने उड़े दिग्गई न पड़ रही थी। उन्हें दिग्गई दे रहा था मिमेज सभेना के सम्बन्ध में शर्मा का रस लेपर बुपत्तापूर्ण बातें करना। और गारा की दगापार्की ‘—मालमादय के यहाँ में आयी है जरा उनके साथ जा रही है। और उन्हें पर से बाहर देर हो जाने पर उत्तम दमनापूर्ण निर्या परिय। उनके दौन होने में गड़े जा रहे थे।’

घोटी के अज्ञात में मोटर के पहुँच जाने पर उन्हें ख्याल आया—'क्यों वे यों ही पत्ते आये ? चाहिये वा यही उन हरामजादी की खुटिया पकड़ व हावों से उसकी जान निकाल देते ।' बाहर बपस्तर की कुर्सी पर बैठे, दोनों बाँहें सीने पर बाँध लूनी आँखों से वे गौरी के खँटने की प्रतीक्षा करने लगे ।

कानूनी पेशे की कुर्सी पर बैठे ही सूना—'नहीं वह गलती होती । लोगों के सामने उमारा बन जगा और कानूनन बात ठीक न होती । ऐसी इज्जत विगाड़ने वाली दगाबाज बदमारा औरत को कत्ल कर देने के सिवा और क्या सजा हो सकती है ? कानून की गिरफ्त को वे मूय समझते थे । औरत के कत्ल के ऐसे ही मुकद्दमे वे लड़ चुके थे ।

इनका दिमाग कानून की साइन पर चलने लगा—'औरत की वैध्याई में इशतहाल में आकर की गयी हरकत' — इतहाई इशतहाल पैदा करनेवाले हासत का मिस्तिसा वे वलील में बाँधने लगे—'एक शरीफ परान की परवानशीन औरत' — पति को एक सहेली के यहाँ जाने का विश्वास दिलाकर हमका वत्चलन लोगों की सीहदत में खाना— 'अहाँ औरतें केनकाष हों, राख पी जा रही हो ! उसकी बीबी के बारे में शर्मा सीसे मराहूक बालबलन के आदमी का मजाक' — ।

पति का यहाँ पहुँच जाना ।

पहुँच जाना किस सिलसिले में— ?

एक दोस्त के साथ ।

इस दोस्त की गवाही— ?

पति का मुद् ऐसी जगह बपस्तर जाना— ?

पति के अपने बाल बलन का मयाल बलहवा है, लेकिन उसे इशतहाल ता का सफ़टा है ।

दिमागी परेशानी के कारण वकील साहब के लिए कुर्सी पर बैठे रहना मुश्किल हो गया । पीठ पीछे हाथ पी उँगलियों को एक दूसरी में उलझाये व फर्श पर बपस्तर कटन लगे । झोप और बैचीनी घड़नी जा रही थी । गौरी क अभी तक न खँटने की बपद ? — 'उसकी इतनी मजाक ? वे चाहते थे मुकद्दम गौरी बन्क सामान ? । जाय और वे मुद्द में पिया बुद्ध बोले दोनों बायीं स उमका गला पोटें हैं ।

विचार और कल्पना क लिये मिले समय ने मन्नि'क का गहराई में उतार दिया । मन्नारा की उभेजना या आर उतार कर वे पँहरे न गौरी का मजा देने की बात सोचते हुए कर। पर आगे-पीछे बपब कदमी करने लगे ।

उसी समय माल साहब की मौज्जदगी में आई और छोटी के पिछवाड़े के दरवाजे के सामने रुकी। गाड़ी के दरवाजे के खुलकर बन्द होने का शब्द भी सुनायी दिया। भय से कौपती हुई गौरी और गन स अपने कमरे की ओर आती हुई भी सस्सेना साहब की रूपना में दिखाई दे रही थी।

श्रीधर और उच्चैजना ने उमफ्न गला घोंट देने के लिए बकील साहब की ओर फड़फ उठी —

फिन हालत में १ गवाही क्या होगी ! —

कानूनी दलील और गवाही की अदरय जंजीरों ने उन्हें दिकने न दिया — रूपना में ही ये गौरी का गला घोंटने का संतोप पा रहे थे। और सोच रहे थे— फाहरा भारत का पति कहमाने से यों गम खाना ही क्या बेहतर नहीं।”

—गवाही : यरापाल

अन्तर्द्वन्द्व के इन उदाहरणों में कभी-कभी कहानीकार पात्र विधेय की मनाभावनाओं का बिग्लेषण करते हुए तैमे चित्र भी अंकित करता है जब कि यह पात्र आत्मबिग्लेषण में रत हो विगत स्मृतियों की याद करने लगता है। कहानियों में इस प्रकार के चित्रों की अचमारणा कौई आसान कार्य नहीं है और कुराल कहानी कार ही इस प्रयास में सफल हो पाते हैं अन्यथा कभी-कभी घुग्ना एवं पीड़िका का वातावरण ही अंकित हो जाता है। प्रसन्न परपत्नी कहाना लेखकों में म र्नेन्ट्र, यरापाल, अश्वेय, अरक और इलाचन्ट जोशी की कहानियों में इसी प्रकार के सुन्दर मरस चित्रण अधिक मिलते हैं। एक उदाहरण देविए—

सैते सैते वह सोचने लगी कि उसके जीवन की गाड़ी कहीं न कहीं अफर टकराई और कहीं अफर हलदल में फँसकर रह गई। ठीक इन्ही शर्यों में स्वपने की पुदि इसमें नहीं थी। पर इसके बहुत बोट खाये हुए, पीड़ित और तपे हुए अंतर से भाप की तरह निकलने वाले भाषों की अरपट्ट करपेया बुद्ध इसी प्रकार थी। उस दिन की याद आ रही थी जब इसकी सलियों और गौय की दूरी शिश्या लखरनी हुई औरों से उसे और इसके पति की और बैरनी दुइ इसके मीमाय के प्रति इर्ष्या हो उठी थी। न जाने फिनत युग धीत गये उसे पदाइ को छोड़े। बलकत्ते के ऊँचे ऊँचे पागण से भी कटोर ईर्ष्या के घने भवनों और मनुष्य के अस्मित्य की तनिक भी परबाद न करनेवासी घड़ी-बड़ी मौज्जरी और टामों के दीप में दस बप रहने से इसका हृदय भी उँमे पयरा गया था और बह अपने अस्मित्य के उस ग्लोत को हो भुल गई थी, जिसमें इसका मारभिक जीवन सहलदाया हुआ था। यह ग्लोत भी उधानों फ तन् पर अज न अज न जाने किस भोरण रंगिगान के भीतर फँसकर, मृग्यकर, इससे कट पट रह गया। फनकन में लागों आदमी रहते हैं पर अपने दम बर्ष के जीवन में इमने करी किसी मनुष्य के सहृदय प्राण का खरा का

क्या, छाया तक नहीं पाई थी। वे सब मनुष्य उसके लिये जैसे किसी निराशे ही लोक के विनासीय जीव थे। वे प्रेत, पिशाच, मृत, वैताल यक्ष, दानव या इसी तरह की किसी और योनि के प्राणी भले ही हों, पर मनुष्य नहीं थे। वह उनसे धारों धोर से घिरी रहने पर भी किसी निर्मम आदगर के बिचित्र अभिराग के कारण उनके संपर्क से एकदम परे थी। उनकी साँस भी उसकी साँस से भाकर नहीं टकराती थी। और जिन लोगों ने, जिस ऊँची पहाड़ी धरती से उसके प्राण कभी एक रूप में जैसे थे, उनसे कितनी दूर वह पड़ गई थी। न जाने कितने असम्य योजनों से, कितने अतन्त युगों का व्यवधान उनके और उनके बीच में पड़ गया था। उसकी निद्रालु आँखें मगली पक्षी जा रही थी और साथ ही उसके अन्तर्लोक से उठनेवाली भाव-आधारों विचित्र से विचित्रतर, अस्पष्ट से अस्पष्टतर रूप धारण करके उसके सिर के भीतर चक्कर काटती हुई एक अनोखा, उग्राम और उच्छ्वसल नृत्य सी करने लगी थी।

सहसा उमने अनुभव किया कि उसका शरीर हककर होता चला जा रहा है। उसके ही वृत्त वह ठई से भी हलकी होकर आकारा में बढ़ने लगी और बहुत दूर तक उठने के बाद जब नीचे उतरी तो उसने अपने को एकदम पवला हुआ पाया। साड़ी और सम्पत्त की जगह उमका शरीर जहाँगा पिछोरी और औगिया में डका हुआ था। उमे आश्चर्य हो रहा था कि वह चौदह-पन्द्रह वर्ष की लड़की कैसे बन गई। उसके धारों धोर ऊँचे ऊँचे पहाड़ थे। वह स्वर्ण एक ऊँचे टीले पर खड़ी थी। बहुत दूर नीचे एक छोटी सी नदी के किनारे एक गाँव था। लगता था जैसे धारों धोर चौवनी झिन्की हुई हो। सर्वत्र समाटा छाया था। वह गला पककर किसी को हॉक लगाना चाहती थी पर आबाज निकलती ही नहीं थी। न जाने कहाँ से कोई एक चिड़िया बहुत ही धीमे स्वर में कुछ चरणों के अंतर से चाल रही थी। वह बोलना क्या था लगता था जैसे अपनी दो नन्ही सी चोंचों से सिसकारी भर रही हो। जैसे वह उस सारे समाटे के हृदय पर स्पन्दन हो। वह उम सारी पहाड़ी प्रकृति में सारे विरव में अपने अकेलेपन की अनुमति से धपप डठी। यह रोना ही चाहती थी कि सहसा उमके कान गड़े हुए। लगा कि उल्लास-भरे स्वर में गाने वाली स्त्रियों और पुरुषों की एक टोली नीचे किसी स्थान से ऊपर की ओर चली आ रही है। आनन्द राग में मख स्त्रियों और पुरुषों का वह दल निकट से निकटतर आता चला गया। कुछ ही समय बाद उमने देखा कि वे लोग उसके पितृकुल ही पास आ पहुँचे। मखके कपड़े होमी के विषय रगों में रंगे हुए थे। उसने अपने कपड़ों की ओर देखा उनमें भी लाल, हरे और बसंती रगों के छीटे जाने कहीं न पड़ गये थे। वह दौड़ती हुई नीचे उतरी और स्त्रियों की टोली में जा मिली और वन्दी के स्वर में स्वर मिलाती हुई पूरी तरह से गला थोसकर गाने लगी। उमे आश्चर्य हुआ कि उसका गला अचानक अपने आप कैसे खुल गया। वह टोली एक पमी जगह पहुँची

वहाँ मैदान था। वहाँ पहुँचकर स्त्रियों ने रास-मंछल की तरह एक गोल घोंघ लिया और पुरुषों ने भी अलग एक गोल घोंघ बना लिया। ये लोग घास और क्षय में नाचने और गाने लगे। रुक्मा के आनन्द और उल्लास की सीमा नहीं थी। वह मुक्त कंठ से गा रही थी और स्वच्छन्द गति से नाच रही थी और अपने अगल-बगल वह बिन बो लड़कियों का—संभवतः अपनी सहस्रियों का—हाथ पकड़कर कभी पाये और कभी दायें मुफकर नाच रही थी उनमें से एक ने कहा, अरी रुक्मा यहाँ क्यों आकर नाचने लगी? वैसी तो शादी हो गई है। तू तो 'अफसरइन' बन गई है। तेरा यह अफसर देखेगा तो क्या करेगा?"

—रुक्मा इलाचंद्र जोशी

यदि हम विचारपूर्वक देखें तो मानसिक ऊहापोह के उदाहरण हमें द्वितीय युग की कहानियों में भी दृष्टिगोचर होते हैं तथा प्रसाद और प्रेमचंद की कथाओं में भी हम कई ऐसे अवसर देखते हैं जिनमें कि पात्र विशेष की आंतरिक दशा का चित्रण इसी पद्धति द्वारा किया गया है। प्रसाद जी की प्रसिद्ध कहानी पुराधार में एक और ती मधूलिका का प्रिय पात्र अरण्य है और दूसरी और खवेश-रक्षा का प्रश्न है अतः स्वाभाविक ही में उनमें कर्तव्य और हृदय का द्वंद्व ना दृढ़ जाता है। मधूलिका की आंतरिक दशा का वर्णन प्रसाद जी ने हम प्रकार किया है—

"पथ अंधकारमय था और मधूलिका का हृदय भी निबिड़ तम में घिरा था। उसका मन सहसा विचलित हो उठा। मधुरसा नष्ट हो गई। जितनी मुख रूपना थी वह जैसे अंधकार में विलीन होने लगी। वह भयभीत थी, पटिला भय उसे अरण्य के लिए बरपन्न हुआ, यदि वह सफल न हुआ तो? फिर महसा सापने लगी, वह क्यों सफल हो? आबराही दुर्ग एक विदेशी के अधिभार में क्यों पला जाय? मगध पीराण का फिर शत्रु! ओह, उसकी विजय! अशाल नरेश ने क्या कहा था, 'सिंहमित्र की कथा।' सिंहमित्र अशाल का रक्षक और उसकी पत्न्या काज बना करने जा रही है। नहीं नहीं। 'मधूलिका।' 'मधूलिका' जैसे उसके पिता उसे अंधकार में पुकार रहे थे। वह पगली की तरह चिल्ला उठी। रातना मूल गई।"

—पुराधार प्रसाद

इसी प्रकार का चित्रण प्रेमचंद की कहानियों में भी दृष्टिगोचर होता है। एक उदाहरण देरिए—

"सुमन्या चित्तना ही पाटली थी कि इस समया पर शांतचित्त होकर विचार करे, पर हृदय में मान्ये ग्याला सी दहक रही थी। केराब के लिये वह अपने प्राणों का खेद मूल्य नहीं समझती थी। वही केराब उगे परों में दृष्टत रना दे। यह आपात इतना आकस्मिक, इतना पटौर था कि उमठी पतना की मार्ग बाममना मूर्च्छित हो गयी। उमका एक एक अणु प्रतिवार के लिये तड़पने लगा। अगर यही

समस्या इसके विपरीत होती, तो क्या सुमत्रा की गर्दन पर छुरी न फिर गयी होती ? केशव उसके खून का प्यासा न हो जाता ? क्या पुरुष हो जाने से ही सभी बातें अन्य और स्त्री हो जाने से सभी बातें अज्ञान्य हो जाती हैं ? नहीं, इस निर्णय को सुमत्रा की विद्रोही आत्मा इस समय स्वीकार नहीं कर सकती। उसे नारियों के ऊँचे आवरणों की परवाह नहीं है। उन स्त्रियों में आत्माभिमान न होगा ! ये पुरुष के पेटों की जूतियाँ बनकर रहने में ही अपना सीमाग्य समझती होंगी। सुमत्रा इसनी आत्माभिमान-शून्य नहीं है। वह अपने जीते जी यह नहीं देख सकती कि उसका पति उसके जीवन का सर्वनाश करके पैतृ की बरी बजाय। दुनिया उसे हत्यारिनी, पिशाचिनी कहगी, वह उसका परवा नहीं। रह रहकर उसके मन में भयंकर प्रेरणा होती थी कि इसी समय उसके पास पत्नी आय और इसके पहिले कि वह इस युवती के प्रेम का आनन्द उठाये उसके जीवन का अंत कर दे। वह केशव की निष्चुरता की याद करके अपने मन को उन्नेजित करती थी। अपने मन को धिक्कार धिक्कर कर नारी-सुलभ शंकाओं को दूर करती थी। क्या वह इतनी दुबल है ? क्या उसमें इतना साहस भी नहीं है ! इस वक्त यदि कोई दुष्ट उसके कमर में घुस आये और उसके सतीत्व का अपहरण करना चाहे, तो क्या वह उसका प्रतिहार न करेगी ? आखिर आत्मरक्षा ही के लिए तो उसने यह पिस्तीज ले रखी है। केशव ने उसके सत्य का अपहरण ही तो किया है। उसका प्रेम प्रवर्तन केवल प्रवंचना थी। वह केवल अपनी बामनाओं की दृष्टि के लिए सुमत्रा के साथ प्रेम स्वर्ग भरता था। फिर इसका बंध करना क्या सुमत्रा का कर्तव्य नहीं !”

—सौदाग का शव प्रेमचंद

चूँकि हिन्दी कहानियों के शिल्पविधान में दिन प्रतिदिन नए नए परिवर्तन होते जा रहे हैं अतः कहानीकार भी अपनी कहानियों में साधारण चरित्रों के स्थान में विशिष्ट चरित्रों की ही अवतारणा करते हैं और इस प्रकार वे चरित्र अपने में स्वयं व्यक्ति नहीं होते अपितु व्यक्ति के टाइप प्रतिनिधि होते हैं। साथ ही ये चरित्र प्रायः अंतमूर्खी ही अधिक होते हैं तथा ये किसी न किसी अंतर्द्वन्द्व या पात प्रतिपात से अनुप्राणित रहते हैं और ये किसी ऐसी रहस्यात्मक शक्ति से प्रेरित होते हैं कि उन्हें पूर्ण रूप से समझ पाना दुस्तर काम ही है लेकिन इतना हीट हुए भी यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि ये असाधारण न होकर पूर्ण मानव होते हैं। अभी अभी हमने चरित्र विद्वेषण की जिन पद्धतियों का बख्सेस किया था उनके उदाहरणों में भी हमें यही दृष्टिकोण ही हाँता है कि वर्तमान कहानीकारों ने मनो विज्ञान का आधार लेकर ही अपनी कहानियों में चरित्र अवतारणा की है अतः उनका चरित्र चित्रण का आकर्षण भी अपूर्व है। स्मरण रहे कि निरपेक्ष विद्वेषण, आत्म विद्वेषण और मानसिक उन्नापोह के अतिरिक्त चरित्रों की व्यक्तित्व प्रतिष्ठा तथा

व्यक्तित्व विशेषण के लिए कुछ कहानी लेखकों ने अवचेतन विज्ञप्ति को भी सामन माना है और जैनेन्द्र, अश्वेय, इलान्द्र जोशी तथा अरुण की कहानियों में इसके कई सुन्दर उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं ।^१

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि चूंकि आधुनिक कहानी का मूलाधार मनो विज्ञान है इस मनीविज्ञान का मूल केन्द्र चरित्र है। अतः स्वामायिक ही आधुनिक हिन्दी कहानियों में पात्र और चरित्र-चित्रण को ही सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है। साथ ही चरित्र-चित्रण में भी कहानीकारों का व्यक्तित्वादी दृष्टिकोण ही परिलक्षित होता है और उनमें बाह्य संपर्कों की अपेक्षा अन्तः संपर्कों की ओर बढ़ने तथा स्वप्न से सूक्ष्म की ओर उन्मुख होने की प्रवृत्ति ही पाई जाती है। अनेक ने स्वयं ही अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए कहा है— यह बात अच्छी तरह म समझ लेनी होगी कि शरीर से प्राणों की ओर बढ़ना घनाघट से स्वामायिकता की ओर बढ़ना होगा, सभ्रायण से रुचिरता की ओर और आहम्पर से प्रसाद की ओर बढ़ना होगा। स्थूल वासना के नीचे परातल पर इस प्रगतिशील जगत में टिकना नहीं हो सकेगा, सूक्ष्म की ओर अग्रसर ही होना होगा। इसी का नाम विकास है ।^२

१ अक्षयन विज्ञप्ति का एक सुन्दर उदाहरण देनाएँ—

अतः व दहनत दहनत वह मेरु पर आ बटा और पेन मे प्नाटिंग पेंड पर निता

—निगा बहें कि गीचा—

Swaraj

Love

x x x

Independence

Marriage

x x x

God made Love. Did God make marriage also? No the man did the making of it and I say a love is not chouse. It is never that. Never never! Ah! how slavish of me thus unwillingly to use English must write Hindi हिन्दी हिन्दी, हिन्दी हमारा देव हिन्दुनानी है हिन्दी हमारो भाषा हिन्दी हमारा बाबा भाइयो हरीपुर २३ मीन सरेरे की माड़ी में नही जा बचना ! Oh ! Damn it all ! why make a misery of it—Dear Jabra !

—०४ राम जंगलकुमार

२ एक रात— अनेकदुवार (सुमिका ५२ ३)

एक विचारक ने उचित ही शिक्षा है कि कथोपकथन तत्त्व कहानी-कला का सर्वोत्तम धारा है^१ और इसमें कोई संदेह नहीं कि कहानी में कथोपकथन अनिवार्य है क्योंकि वार्तालाप न केवल पात्रों के चरित्र चित्रण में सहायक होता है अपितु वह कथानक का ही एक गुण समझ लाता है तथा कथावस्तु की स्वाभाविकता के लिए भी ठमका समावेश आवश्यक है। कथोपकथन को स्वाभाविक रूप में उपस्थित करने से बड़ी सरलता के साथ हम सम्पूर्ण परिस्थिति से विज्ञ होकर पात्रों के दृष्टिकोण आधारों तथा उद्देश्य को भी जान सकते हैं। वार्तालाप द्वारा रसोद्भव होता है अतः पाठकों के मन में स्वाभाविक ही कीतूहल्ला की सृष्टि होती है जिससे कि उनके मानस में सम्पूर्ण कहानी को पढ़ने की उत्सुकता रहती है अतः कथोपकथन कथा का आकर्षण द्विगुणित कर देते हैं। केवल वर्णन द्वारा प्रस्तुत की गई कहानी में बाह्य शैली का व्यक्तित्व अवश्य उभर आता हो परन्तु उसकी प्रसविष्णुता और संवेदनशीलता तो नष्ट ही हो जाती है अतः घटनाओं की गति शील घनाने में कथोपकथन का उपयोग आवश्यक है परन्तु यहाँ यह भी ध्यान रखना चाहिए कि केवल मात्र संवादों के माध्यम से निर्मित कहानी कहानी न रहकर पढ़ाकी नाटक बन जाती है अतः कुशल कहानीकार अपनी सम्यक् प्रतिभा के बल पर कथोपकथन और वर्णन विधेयन में इस प्रकार का सुन्दर समन्वय और अनुपात रखता है कि कहानी का स्वरूप कलात्मक ही उठता है। कहानी में कथोपकथन की उत्कृष्टता के लिए कहानीकार को इस बात पर पूर्ण ध्यान देना चाहिए कि संवाद पात्रानुसूल और स्वाभाविक हों तथा उनमें शैलिकता भी हो, साथ ही भाषा भी प्रसंगानुसूल सरल, शिष्ट, लाक्षणिक और प्रभावपूर्ण होनी चाहिए। कथोपकथन का प्रधान कार्य परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से कथानक के प्रवाह में सहायता पहुँचाना ही है और यदि किसी वार्तालाप को पढ़कर कथानक का प्रवाह रुकता हुआ दृष्टिगोचर हो ता फिर समझ लेना चाहिए कि कहानीकार ने इसका उचित निवाह नहीं किया

१. हिंदी कहानियों की शिस्तविधि का विकास-डा० सहमानारायण साहू

चूँकि आधुनिक कथा-साहित्य में उपदेश देना सर्वथा अपवाहनीय समझा जाता है अतः कथापकथन में उपदेश या वर्णन की ओर विशेष ध्यान कहानी की कलात्मकता को नष्ट करना ही है। सामान्य संवादों से नीरसता और अस्पष्टता ही उत्पन्न होती है अतः पात्रांश में नवीनता और अस्वाकिकता होनी चाहिए जिससे कि उनमें पाठकों के मानस में मित्रात्मा उत्पन्न करने की शक्ति विद्यमान रहे। साथ ही यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि कथापकथन एक नाटकीय तत्त्व भी है अतः अभिनयारम्भता उसका अनिवार्य गुण है परन्तु नाटकीय संवादों और कहानी के पात्रांश में अत्यधिक विभिन्नता है क्योंकि नाटक में प्रयुक्त कथापकथन अभिनय की दृष्टि में लिखे जाते हैं तथा नाटकीय मीढर्य का अभिनय में ही रहता है और साथ ही कहानी अभिनेय नहीं है अतः कथापकथन इतने अधिक पूरा होने चाहिए कि वे किसी भी प्रकार के अभिनय एवम संकेत का अभाव न सूचित करें। इतना ही नहीं उपन्यास के कथापकथन की अपेक्षा कहानी के पात्रांश में विशेष संक्षम और निर्यत्रण की स्वावश्यकता पड़ती है। चूँकि कथापकथन से कहानी का मीढर्य बढ़ जाता है तथा इसमें सुपरता, मुकभिरता और मनोहरता आदि गुणों की अभिवृद्धि होती है अतएव कहानीकार किसी भी शैली में कहानी क्यों न लिखे लेकिन वह पात्रांश का उपयोग करने का लोभ संभरण नहीं कर पाता है चाहे फिर वह पात्रों के कथन को अप्रत्यक्ष रूप में ही क्यों न उपस्थित करे। यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि संवाद-लेखन पर विचार करते समय कतिपय समीपकों ने कुछ सामान्य सिद्धान्त भी निर्धारित किए हैं।^१

१. शेष—

(क) संवाद लघु और अभिनयारम्भ हों क्योंकि कथार्थ कीचन में जब दो या अधिक व्यक्तियों में बातचीत होना सकती है तो एक ही व्यक्ति बहुत देर तक नहीं बातें करता।

(ग) बोध बीज में, संवाद का गतीक बनाने का अभिप्राय से या तो बोधन वाला बोधना बोधता कुछ लक्षण के लिए कर जाएगा, अपवा परिस्थिति के अनुगुण पत्रम की बात को बाटकर दुसरा स्वयं बोध उठना। इस प्रकार के व्यवधान स्वाभाविकता का अभाव उत्साहपूर्ण उपस्थित करे।

(ग) कभी कभी ऐसा भी हो सकता है कि एक पात्र के उत्तर में जब तक दुसरा पात्र कुछ बोध उठके पत्रम ही पत्रम पात्र दुसरा पत्रम अपवा प्रथम उत्तराधिकार करे अपवा बात का चारा ही बनने दे।

(घ) ऐसा भी हो सकता है कि पहल पात्र की कुछ कही हुई बात का गुणन और बात का बोध की बात का बनना करके दुसरा पात्र बोध में ही बोध उठ और कहना का कुछ बात का प्रतिकार हो। उम्का भी अनुगुण करके बहु भाव का भी उत्तर जोड़ दे।^२

वस्तुतः कहानियों में कथोपकथन द्वारा इन तीन कथों—चरित्र-चित्रण, घटनाओं को गतिशील बनाने और भाषा शैली का निर्माण करने—में विशेष सहायता मिलती है अतः स्वभाविक ही कथोपकथन की विविध प्रणालियाँ भी दृष्टिगोचर होती हैं।

पात्र और चरित्र-चित्रण पर विचार करते समय हम स्पष्ट कर चुके हैं कि कथोपकथन किस प्रकार पात्र विशेष के चरित्र चित्रण में सहायक होते हैं। इतना ही नहीं उनके द्वारा घटनाओं को गतिशील बनाने में भी सहायता मिलती है और बहुत से कहानीकार संवादों द्वारा अपनी कहानियों की घटनाओं को गति प्रदान करते हैं।^१ कुछ ऐसी कहानियाँ भी दृष्टिगोचर होती हैं जिनके संवादों में स्वभाविकता की अपेक्षा कविता ही विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है और पर्याप्त सावधानी रखने पर वह कथा-मवाह में अनुपयुक्त भी नहीं प्रतीत होता लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि

१ एक उदाहरण देखिए—

‘उसका आकर उसका हाथ पकड़ लिया और टोकरी को उठाकर बोली तुमसे किसने पीसने को कहा है ? किमका अनाज पीस रही है ?

मिलिया ने निस्संक होकर कहा - ‘तुम आकर बागम से सोती क्यों नहीं। मैं पीगती हूँ तो तुम्हारा क्या बिगड़ता है। बकरी की घूमुर घूमुर भी नहीं सही जाती ? ताका टोकरी हो। बैठे बैठे क्या तक लाऊंगी हो महीने तो हा गण।

मैंने तो तुमसे कुछ नहीं कहा।

‘तुम क्यों चाह न कहो अपना बरम भी तो कुछ है।

‘तू अभी यहाँ क आबमिया को नहीं जानती। माटा पिमाते तो सबको भ्रष्टा मयता है पैस बन राने है। किमका गेटू है ? मैं सबरे उसके गिर पर पटक जाऊँगी।

मिलिया न रविमन के हाथ न टोकरी छीन नी भोर बोली—‘पीस क्यों न दोगे। कुछ बेगार करती हूँ।

‘तू न मासिगी।

‘तुम्हारी सोती बनकर न रहूँगी।

यह तबतक तुलना प्रयोग भी भा पहुँचा और रविमन ने बोला— काम बनने है तो बनने क्या नहीं बनी। जब क्या जन्म भर बहुरिया ही बनी रहेगी। हो तो गये हो महीने। तुम क्या जानो ? तारु तो मेरी बटमी।

मिलिया बाल उठी— तो क्या कोई बठ लियाठा है ? बोका बरतल साहू बहाक रोटी पानी पीगता कूटना यह कौन करता है। पानी सीजन नीअत मरे हाया मे घट्ट पड़ मये भुसो अब यह साण काम न होया।

अधिक भावुकतापूर्ण एवं कवित्वमय कथोपकथन से कहानी की स्वाभाविकता की प्रभाव में धाबा ही पड़ती है।

१ इस प्रकार के कथोपकथन का एक सुन्दर उदाहरण देखिए—

बीबर बाबा माकर लकी हो गई । बोली—'मुझ किमते पुकारा ।

मैंने ।

क्या कह कर पुकारा ?

'सुम्हरी ।

'क्यों मुझमें क्या मीरव है ? बीर है भी बुद्ध तो क्या तुमसे विद्वेप ?

'हां आज तक किसी को सुम्हरी कहकर नहीं पुकार मका था, क्योंकि यह मीरव विवेचना मझमें अब तक नहीं थी ।

आज अचसमात यह मीरव विवेक तुम्हारे हृदय में कहां से आया ?

'तुम्हें देखकर मेरी मोई हुई मीरव-गुणा आग गई ।

परन्तु भाषा म त्रिये गीरव कहते हैं वह तो तुम से पूर्व है

मैं यह नहीं मानता, क्योंकि फिर सब मूझी को चाहते, सब मेरे पीछे पागल हो प्रमत्त । यह तो नहीं हुआ । मैं राजकुमार हूँ मेरे बंधन का प्रभाव चाहे मीरव का मूझ प्रमत्त कर देता हो । पर मैं उनका स्वागत नहीं करता । उन प्रेम-निमग्नता में साम्प्रतिक बुद्ध नहीं ।

'हां तो तुम राजकुमार हो । इमी मे तुम्हारा मीरव मीरव है ।

तुम कौन हो ?

'बीबर बाबा ।

'क्या करती हो ?

मछली कंनारी हूँ । कटकर उमते आन को लहना दिया ।

'अब इस अर्थत एकाग्र में सूरियों के मिम प्रकृति अपनी हुंमी का बिन दत्तिका होकर बना नहीं है तब तुम इमी के अन्त में ठेके निष्ठुर बाव मरती हो ?

'निष्ठुर है तो, पर मैं बिबदा हूँ । हमारे द्वीप मे राजकुमार का परिणय होने बाव है । इमी उमव के लिए मूझनी मछलियाँ कंनारी हूँ । ठेमी ही आजा है ।

परन्तु वह इयात्र तो होगा नहीं ।

तुम कौन हो ?

'मैं भी राजकुमार हूँ । राजकुमारों को अपने बाव को बाव बिगिन रहनी है, इमं निग रहना हूँ ।

बीबर बाबा के एक बार मुदरान के मुग की ओर देखा फिर कहा—'तब तो मैं इ निरीह बीबों को छोड रती हू ।

मुदरान के मुदरान मे कहा देखा बाबाबा के अपने अर्थन मे मुदरानी मछलियों की मी हई मुग ममर के अर्थ मे बिमर दी" ... ।

स्मरण रहे कि आधुनिक कहानियों में कथोपकथन के विविध रूप प्रचलित और कुछ कहानीकार ऐसे हैं जिनकी कहानियों में चार्ताभाष का नागकीय रूप देख पड़ता है अर्थात् उनमें कार्य, घटना, स्थिति आदि के संकेत नहीं होते या केवलमात्र कथोपकथन ही रहते हैं

“तुम्हारा नाम क्या है ?”

‘भगवन्ती ।’

‘रहती कहाँ हो ?’

‘मामा के पास जिसन कुर्से पर पानी पिखाया था ।’

उस दिन का स्मरण आते ही रघुनाथ चुप हो गया फिर कुछ देर ठहरकर बोला ‘तुम मेरे पीछे क्यों पड़ी हो ?’

‘तुम्हें आशुमी बनाने की ओ तुम्हें धुरा लगा हो मी मैंने भी अपने किये का तह बहाकर फल पा लिया, एक मसाला दी जाती हूँ ।’

‘क्या ?’

‘कल में नदी में नहाने मत जाना ।’

‘क्यों ?’

‘गोते आशुमे तो कोई बचानवाला नहीं मिलेगा ।’

रघुनाथ मेंपा पर सँभलकर बोला—‘अब काह मरी जान बचायगा तो मैं पीजा नहीं करूँगा या गाली भी सुनूँगा ।’

‘इसलिए नहीं, मैं आज अपने पाप के यहाँ अभी साउ गी ।’

‘तुम्हारा घर कहाँ है ?’

‘यहाँ बनाइयों के इमने के लिए कोई नहीं नहीं है ।’

—पुद का बँटा : कम्पनर रार्मा ‘गुलेरी’

बीर भी—

‘है तो मुसलमान ।’

‘मेहतर होगा ।’

मही मेहतर अपने रामन से ‘सकई नहीं करता । कई पागल मासूम होता है ।’

‘ठपर बन भेदिया न हा ।’

‘नही बेहरे से बड़ा गरीब मासूम होता है ।’

‘हमन निजामी का बोई मुरीद होगा ।’

‘धत्री गोबर के हातप में मसाला पर रहा है । कोई भटियात होगा । (जामिद में) गोबर न ले जाना धे, समझ ? कहाँ रहता है ?’

‘परदेसी मुसाफिर हूँ साहब; मुझे गोबर लेकर क्या करना है। ठाकुर जी का मंदिर देखा वो आकर बैठ गया। बूड़ा पड़ा हुआ था। मैंने सोचा— घमांसा लोग भावें होंगे, सफाई करने लगा।’

‘तुम तो मुसलमान हो न ?’

‘ठाकुर जी तो सभके ठाकुर जी हैं—क्या हिन्दू क्या मुसलमान।’

‘तुम ठाकुर जी को मानते हो ?’

‘ठाकुर जी को कब्र न मानेगा साहब ? जिसने पैदा किया, उसे न मानूँगा तो किसे मानूँगा ?’

—हिमा परमी धम प्रेमचन्द

हिंदी कथा-साहित्य में कई ऐसे प्रसंग भी मिलते हैं जब कि कहानीकारों ने ज्योपकथन के माध्यम में ही पुरातन आदि शास्त्रों की गुस्तियाँ सुलझाने का प्रयास किया है। इस प्रकार के संवादों में कभी कभी पौरुष विवेचन ही दृष्टिगोचर होता है और कहानियों में दुर्योधता भी आ जाती है लेकिन बुरात कहानीकार मर्यादा और प्रवाह पूर्ण भाषा के साथ सफलता पूर्वक इस प्रकार का विवेचन करता है।
उदाहरणार्थ—

वि०— कर्तव्य शक्ति का प्रश्न तर्क है गौतमी, विरघाम नहीं। तर्क प्रकृति मान का वाचक है, विरघाम माधक।

गौ०—‘क्या ब्रह्मा का प्रतिफल विरघाम है ?’

वि०—‘हाँ विरघाम का प्रतिफल आरमीयता है और आरमीयता अमेर प्रतीति की प्रादिक्य है। विरघाम के मूल में ही सती शक्ति है। गौतमी तुम्हें योगदान का प्रथम मूत्र अभ्यस्त है।’

गौ०—‘हाँ भगवन् ! योगरिपत वृत्ति निरोध यह मूत्र मुझे कंटक्य है।’

वि०—‘बिच की किन प्रकृतियों के निरोध का आदेश शास्त्रकार ने दिया है ?’

गौ०—‘वैपायिणी सांगिणी और वीपायिणी।’

वि०—‘बिषयात्मिका प्रकृति क्या अनर्धकारो है ?’

गौ०—‘अपरम। बिषयों के ध्यान में आसक्ति का अभ्युदय होता है, और आसक्ति धामोदीपिष्य मानी गई है।’

वि०—‘काम भावना प्राणियर्ग की मूल प्रकृति है। उमदा विरोध करना, प्रकृति के विरुद्ध आधार उ करना है। क्या यह ठीक है ?’

—गौतमी प्रियेन्द्र भारतीय

कभी कभी कहानियों में कहानीकार ज्योपकथन के माध्यम प्रसंगानुसृत पात्रों की मुद्राओं और स्थितियों का भी चित्रण करता है तथा इस प्रकार इनकी

मुद्राओं के संकेतों के साथ-साथ उनका वार्तालाप भी आगे बढ़ता है जिससे कि संवादों में सरसता सी आ जाती है। देखिए

“ऊपा प्रणाम करके लौटने ही लगे थी कि बहुत धीरे से बलराज ने पुछा—
‘ऊपा !’

ऊपा घूम कर खड़ी हो गई। मुँह से उसने कुछ भी नहीं कहा, परंतु उसकी आँसों में एक बड़ा सा प्रश्नचिह्न चिन्ह साफ घोर स पड़ा जा सकता था।

बलराज ने बड़ी शिथिल भावाम में कहा—‘आपको देखकर न जाने मुझे क्या हो जाता है।’

ऊपा यह सुनने के लिये तैयार न थी फिर भी वह चुपचाप खड़ी रही।

घण भर रुककर बलराज ने कहा—‘आप सोचती होंगी, यह अजय केरूवा भावमी है। न हैसना जानता है, न बोलना जानता है मगर सब मानिए।’

धीप में ही वाचा देकर ऊपा ने कहा—‘मैं आपके बारे में कभी कुछ नहीं सोचती; मगर आपको यह होता क्या आ रहा है?’

बलराज के चहरे पर हवाइयों सी बढ़ने लगी। उस ऊपा के स्वर में कुछ कठोरता सी प्रतीत हुई। तो भी वह माहम के साथ उसने कहा—‘मैं अपने आतंरिक भाव व्यक्त नहीं कर सकता।’

ऊपा ने वादा कि वह इस गंभीरतम पाठ को हँसकर उड़ा दे मगर औरिरा करने पर भी हँस न सकी। वह कुछ मयभीत सी हो गई। उसने कहा—‘मैं जाती हूँ। आर वह घूम कर पल ही।’

—डॉक पन्द्रगुप्त विशालकर

इस प्रकार के संवादों में कभी कभी वार्तालाप की स्वाभाविकता बनाए रखने के लिए पात्रों की मुद्राओं और स्थितियों का मूर्तिमान रूप अंकित किया जाता है क्या यदाकदा चित्रण में विस्तार आ जाने पर भी वह वास्तविक और सजीव ही प्रतीत होता है। स्पष्ट ही इस प्रकार के अवतरण कथोपकथन और बहान विमोचन के सु दर एकप कलात्मक उदाहरण माने जा सकते हैं, जैसे—

“अनन्त पफाएक चुप हा गया। फिर बोला, “इक कैसी कहानी है यह ..
स्योति ने धीरे धीरे अपना हाथ सौंच लिया। दोनों फिर चुप हा गय।

मिनट भर बाद स्योति ने फिर पूछा—‘अब क्या सौंच रहे हो?’

वह अनन्त की ओर देखती थी, देख वह अपसक्त दृष्टि से ताज की ओर रही थी, फिर भी जाने कैस अनन्त प नारी स्पन्दन निरन्तर उसमें प्रतिध्वनित होता आ रहा था।

कृद्ध घुप रहकर अनन्त बोला—'बताओ क्या दिन क प्रकाश में प्यार भी उतना ही पट्टेर लगता है जितना कि पत्थर !'

ज्योति ने कृद्ध विस्मय से कहा—'क्यों क्या मतलब ? मैं 'जी समझी !'

'आज दोपहर को देखा था ताज कितना धेड़वा लग रहा था ' 'क्यों ? इस लिये कि पत्थर भी कटोर है दुपहर के घुप भी कटोर है और दोनों एक साथ तो—'सभी दोपहर को लग रहा था जैसे किसी ने निर्दय हाथों से ताज की मुन्दरता का अत्रगुण्डन उगार लिया हो उसे नंगा कर दिया हो। लेकिन अब चौदनी में—ऐसा लगता है कि जोस की तरह चौदनी ही अमकर इकट्ठी हो गई हो।'

नही मुम आर कइ मोच रहे थे—बताओ न ? पट्टेर ज्योति ने फिर अनन्त के हाथ पर अपना हाथ रख दिया।'

—ताज की छाया में अत्रेय

वस्तु भी कहानियों में पात्रों की मुद्राओं और स्थितियों का संकेत करते हुए इन कार्य व्यापारों और घटनाओं का भी उल्लेख किया जाता है या कि पात्रों के चार्तालाप और सम्बन्धीन स्थिति में परिवर्तन होती है, उदाहरणार्थ—

'एक दिन वह पत्थर ही होकर आया और उमने उस व्यक्ति को पृथक् अपने स्थान पर रखा। प्राण ने सीधे जाकर उसके कंधे पर हाथ रख दिया। वह व्यक्ति एकदम चौंके उठा, बोला— 'क्यों क्या है ?'

प्राण ने शांत भाव से कहा — 'यही तो मैं आपसे पूछने आया हूँ ?'

अपराध से वह व्यक्ति जिस तरह चौंका उसी तरह एकदम हड़ हीपर बोला— 'ता आप समझ गये। सुना करिये मैं स्वयं आपसे बात करने वाला था।'

अब तक क्यों नहीं कर मक ।

उमने उम्मी तरह कहा 'क्योंकि मैं पूरा विश्वास नहीं था और आप जानते हैं कि आज के युग में ऐसा वैसी बातें करना मौन का चुनाना है।'

प्राण उमही पाली से आरम्भ ता हुआ, पर उमका हृदय धर धक कर उठा। उमने कहा—'आप तो कहते हैं पर अब आप निर्ममकोप होकर जो बात कर मकते हैं।

वह बोला पाल पैसी ही है। आप युग न मानिए।'

'आप कहिये।

वह अनिष्ट स्थिति, फिर शीघ्रता के साथ बोला 'आपके साथ जो नहीं जाती है वह आपकी बात है।'

‘आपका मतसब ।

‘जी.....।’

प्राण सँभला बोला—‘बह मेरी सब कुछ है और कुछ भी नहीं है ।

‘जी मैं पूँछता था, क्या वे आपकी पत्नी हैं ?’

मेरी पत्नी.....?’

‘जी ।’

‘नहीं !’

‘नहीं ?’

‘जी हाँ ।

‘आप सब कह रहे हैं ?’ उसकी वाणी में अचरज ही नहीं हर्ष भी था ।

‘जी हाँ । मैं सब कह रहा हूँ । अग्नि को साक्षी करके मैंने उसने कभी विवाह

ही किया ।’

‘फिर ।

‘साहौर से जब मैं मागा था तब माग में एक शिशु के साथ उसे मैंने संज्ञाहीन

प्रवस्था में एक धेत में पाया था ।

‘तब आप उमे अपने साथ ले आये ।

‘जी हाँ ।’

‘फिर क्या हुआ ?’

‘होगा क्या । तब से बह मेरे साथ है ।’

‘लोग उमे आपकी पत्नी समझते हैं ।’

‘यह तो स्वाभाविक है । पुरुष के माय इस तरह जो नारी रहती है वह पत्नी ही होगी; इससे भागें भाज कर आदमी क्या सोच सकता है, पर आप ये सब पाते क्यों पूँछते हैं ? क्या आप उमे जानते हैं ?’

‘जी वह क्यों, बोला ‘बह.....बह मेरी पत्नी है ।’

‘आपकी पत्नी’—प्राण सिहर उठा ।

‘जी ।

‘और आप उमे पोरों की भौंति ताका करते हैं ।

जब उसका मुँह पीला पड़ गया और नेत्र मुक गये । पर दूसरे ही क्षण न जाने क्या हुआ । उसने एक मटके के साथ गरदन ऊँची की, बोला—‘इसका एक कारण है । मैं उमे छिपाऊँगा नहीं । इन मुसीबत के क्षणों में मैं उसकी रक्षा नहीं कर सका था ।

प्राण न जाने क्यों हैम पड़ा “छोड़कर भाग गये थे । अकसर ऐसा हुआ है ।”

—मैं जिन्दा रहूँगा विष्णु प्रभाकर

और भी-

किरीर न धीरे से फहा—'सुनती हो, यह पक्षी क्या पुछर रहा है ? यह फहता है, प्र-मीला, प्र-मीला !'

प्रमीला नि शब्द हैस थी ।

'सच तुम सुनकर देखो—वह देखा—प्र-मीला प्र-मीला—'

प्रमीला ने मानो फान बँकर सुना । अचक्री वह अरु ओर से हैम दी—'हाँ ठीक तो अगर मानकर अनुपूतवा से सुने तो मधमूष सीतर बसी का नाम पुछर रहे है, 'प्रमीला, प्रमीला ।

उसने धीरे म किरीर का हाथ अपने हाथ में लेकर ब्या दिया ।

और अभी अब चाँद निकलेगा, तप तुम देखना, वह जो घुंघनी मी भर्राय दीखती है न टूटी हुई, उनका आकार भी ठीक 'प्र' जैसा घन जायगा, मानो बादनी तुम्हारा नाम लिख रही हो, प्रमीला की बाँलें बमक उठी । उसने कहा—'हाँ और अब मान पुकारेगा ता मैं सुनूँगी यह फह रहा है 'किरीर, किरीर ।' और अब चाँद निकलेगा बादलों में कपहली मगहर अब जागी—

'हैसी फरती हो ?'

'नहीं—'हैसी क्यों फरती भला ? मैं सब कह रही हूँ—ये जो दूर दूर तक पलास के भूरमुट्ट है, इनकी पौपती पक्षियों न जाने किमके किमके नामों पर ताल देकर नापती है और वह कुड के पानी में बकर कात्ती टटीहरी शौक कर न जाने किमे बुबासी है—इम सारा इतिहास थोड़े ही जानते हैं ? केवल अपने नाम सुन मके, वह भी इसलिये कि—इमलिये कि—कहा न ?

इसलिये कि मैं—नहीं कहती—फहना नटी फाटिय ।'

'कहो भी न ?'

'इसलिये कि मैं—कि तुम—तुम मुझे— और प्रमीला ने पास आकर अपनी आवाज को किरीर के कंधे की ओर में फरते हुए कहा, 'तुम मुझे प्यार फरते हो ।'

—पछर का धीरज अक्षेय

पात्र और चरित्र-विश्रुत पर विचार करने समय हम यह स्पष्ट कर चुके हैं कि किम प्रकार कथापचयन भी पात्रों का चरित्र स्पष्ट करने में सहायक मित्र होते हैं । परन्तु कथापचयन द्वारा न केवल आत्मविश्लेषण की ही पूर्ण व्यक्तता रहती है अपितु अन्य दूसरे पात्रों के चरित्र की व्याख्या करने का सुधमसर भी मिलता है । चरित्र प्रधान कथानियों में तो प्रायः व्यक्ति विशेष को व्यक्ति-विषय-प्रवृत्तियों परम अभिरुचियों का स्वाभाविक परिषय कथापचयन की सहायता म दी दिया जाता है । स्मरण रहे कि प्रत्येक पात्री की वाणी और संवाद भंगिमा में बुद्ध न बुद्ध कथनाचन अचक्षु हाता है फार इम प्रकार हम हमके चरित्र का परिषय भी मरमता

से पा सकते हैं। कुरास कहानीकार कथोपकथन के द्वारा ही अपने पात्रों के आंतरिक भावों और तन्नुकूल परिस्थितियों का चित्रण मकलता के साथ करता है तथा इस प्रकार पात्रों की विभिन्न स्थितियों और मानसिक दशा के सम्पूर्ण उतार चढ़ाव का परिचय भी कहानीकार के इस तत्त्व ही द्वारा स्पष्ट होता है। चरित्र-प्रकाशक कथोपकथन का निम्नांकित उदाहरण देखिए—

“म” ? तुम्हीं न कल के उत्सव की संवालिषा रही हो ?’

‘उत्सव ! हाँ उत्सव ही तो था ।’

‘कल इस सम्मान’’

‘क्यों, आपने कल का स्वप्न सता रहा है ? मद्र ! आप क्या मुझे इस अवस्था में संतुष्ट न रहने देंगे ?’

‘मेरा हृदय तुम्हारी इस छवि का मक धन गया है देवि ।’

‘मेरे उस अभिनय का—मेरी विह्वलता का । आह ! मनुष्य कितना निर्दय है, अपरिचित ।’

‘बसा करो, जाओ अपने मार्ग ।’

‘सरलता की देवि ! मैं मगध का राजकुमार तुम्हारे अनुग्रह का प्रार्थी हूँ— मेरे हृदय की भावना अबगु ठन में रहना नहीं जानती । उसे...’

‘राजकुमार ! मैं कृपक-वालिषा हूँ । आप नवन विहारी और पृथ्वी पर परिभ्रम करके खोने वाली । आज मेरी स्नेह की भूमि पर से मेरा अभिन्नर छीन लिया गया है । मैं दुःख में विकल हूँ, मेरा उपहास न करो ।’

‘मैं कौराज नरेश से तुम्हारी भूमि तुम्हें बिलबा दूंगा ।’

‘नहीं वह कौराज का राष्ट्रीय नियम है, मैं उसे बदलना नहीं चाहती—पाहे उससे मुझे कितना ही दुःख हो ।’

‘तब तुम्हारा रहस्य क्या है ?’

‘यह रहस्य मानव हृदय का है, मेरा नहीं । राजकुमार नियमों से यदि मानव-हृदय बाध्य होता तो आज मगध के राजकुमार का हृदय किसी राजकुमारी की धार न लिखकर एक कृपक वालिषा का अपमान करने न जाता ।’

“मधुलिषा बट खड़ी हुई ।”

—पुरस्कर जयराज ‘प्रसाद’

इस प्रसंग में यह भी स्मरण रखना आवश्यक है कि अपनी कहानियों में सजीवता और यथार्थता ज्ञान के उद्देश्य से प्रायः अभिन्नर कहानीकार कथोपकथनों में स्थानीय वातावरण की मकल प्रस्तुत करने की भी चला करते हैं और इस प्रकार वातावरण के माध्यम द्वारा ही देश के किस गंद और वग की कथावरतु अंकित की गई है — न वाग का पूणत आभास ही मकल है । प्रसाद, प्रेमचन्द, चंडीप्रसाद

हृदयेरा और वृंदावनलाल वर्मा की कहानियों में इस प्रकार के संवाद प्रायः दृष्टि गोचर होते हैं परन्तु आधुनिक कहानीकारों में 'अज्ञेय को इस दिशा में सर्वाधिक सफलता प्राप्त हुई है और किसी स्थान विशेष या किसी विशिष्ट जाति में सम्यक् कहानी लिखते समय वदेशीय प्रकृति चित्रण के साथ-साथ पात्रों के बार्तालाप उनकी बोली के बहुत से स्थानीय शब्द ऐसी सुन्दरता से प्रयुक्त हुए हैं कि मर्म वातावरण मन्नीय हो उठता है। अरक परापाल, रंगेय राधक, चन्द्रगुप्त विद्यालोक राहुल साङ्गन्यायन और मन्मनाथ गुप्त की कहानियों में भी यह विशेषता विद्यमान है। परन्तु इस दिशा में अभिव्यक्ति की सीमा का विचार भी कदाई में होना चाहिए अन्यथा मात्राधिक्य होते ही यही गुणकारी वस्तु भी कहानी की सुन्दरता को नष्ट कर देगी और पाठकों को व्यावहारिक आपत्तियाँ भी होंगी। इस प्रकार के बार्तालाप का एक सुन्दर उदाहरण देखिए—

‘तनिक और आगे बढ़कर पाकर, ने कहा—‘सच कहता हूँ, पंथरी, इस जैम सुन्दर साँबनी सारी मंडी में दिखाई नहीं दी।

हर्ष से नंदू का सीना बुगना हो गया बोला—‘आह एक ही के, इह तो सगल पृन्री है। हूँ तो इन्हें चारा फरू सी नारिया फरू।’

धीरे से पाकर ने पूछा—‘धैपोगे इस ?’

नंदू ने फटा—‘धैपने लई तो मंडी मां आई हूँ।’

‘तो फिर पठाओ किमने की योगे ?’ पाकर ने पूछा।

नंदू ने नाथ से शिथ्य तक पाकर पर एक दृष्टि टाली और हँमते हुए पोल—‘तन्ने चाही जै का धेरे धनी धेई मोल लेसी।’

‘मुझे चाहिए’—पाकर ने दृढ़ता से कहा।

नंदू ने इच्छा से सिर हिलाया। इस मजदूर की यह विमान कि तनिक सुन्दर मोटनी मोल ले—‘तू कि लेमी ?’

पाकर की जेब में पड़े हुए डेढ़ मी के नील जैमे पाकर उल्लस पढ़ने की ब्य हो उठे, तनिक जोरा के साथ उसने कहा—‘तुम्हें इसमें क्या, कोई ले, मुम्हें अपन कीमत से गम्न है, मुम मोल घनाओ।

१ यह एक हो क्या यह तो सब ही सुन्दर है। मैं इन्हें चारा और पन्मो (पकाया और मोन) देना हूँ।

२ बचने के लिए ही ना बाजार में आया हूँ।

३ मुझे चाहिए या तू अपने मापिक के लिए मान ले गता है ?

नंदू ने उसके जीर्ण-शीर्ण कपड़ों, घुटनों से उठे हुए तहमश और जैसे नूत के पक्ष से भी पुराने जूते को देखते हुए टालन की गरज से कहा 'जा जा तू हमी विरौ ले आई इंगो मोक्ष वो आठ पीसी तू पाट के नाही ।'^१

—हाथी उपेन्द्रनाथ 'अरक'

इस विवेचन के उपरान्त हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि 'संवाद-मौद्र्य' का निवाह मात्र श्री कहानी की प्रमुख शिक्षणता है ।'^२

१ 'जा तू कोई तेवी बैमी साइनी गरीन के इजरा मूम्य तो १९०) के कम मरी ।

२ कहानी का रचना-विधान—डा० उपेन्द्रनाथ प्रसाद वर्मा (पृष्ठ १३६)

कहानी में देश-काल

तथा

वातावरण

५

यों तो देश-काल तथा वातावरण का चित्रण उपन्यास में अवश्य किया जाता है लेकिन इसकी आवश्यकता कहानी में भी प्रतीत होती है यद्यपि उपन्यास की अपेक्षा कहानियों में इसके लिए स्थान कम ही रहता है और इसलिये कहानीकार अल्प संक्षेप में ही पटना तथा पात्रों में संबंधित स्थान काल तथा वातावरण का चित्रण अवश्य करता है जिससे कि कथानक में यथार्थ चित्रण तथा विविध परिश्रों के कार्यों एवं विषयों की पूर्ण अभिव्यक्ति हो पाती है। डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल के शब्दों में 'वास्तविक जीवन देश काल और जीवन की विभिन्न मनुष्य पर स्थितियों से निर्मित होता है अतएव इन तत्त्वों का एक स्थान पर संघटन और चित्रण करना कहानी में वातावरण उपस्थित करना है। कहानी की कथापस्तु और उसके संघटनक पात्रों का संबंध उक्त स्थितियों से होता है अर्थात् इनका उद्गम मूल और सम्यन्ध किसी देश में होगा या किसी विशिष्ट स्थान अथवा प्रदेश से होगा।'¹

स्मरण रहे रंगमंच पदों, पेशमया आदि के द्वारा नाटक की स्थिति और वातावरण से परिचित होना मर्त्य कार्य है परंतु कहानी अभिनेय नहीं है अतः स्वामाविष्ट ही हममें स्थिति और वातावरण के लिए प्रसंगानुसार देश अथवा परिस्थिति के चित्र प्रस्तुत करने पड़ते हैं जिससे कि पाठक कहानी की मूल मयैदना और भावचित्र में अथवा तादात्म्य स्थापित कर पाता है। अतः कथा-साहित्य के इस लक्ष्य में कहानी का आकषण द्विगुणित हो उठता है क्योंकि इसमें कहानी के पठन पठन में पाठक का मनन आकषण और प्रसंग प्राप्त होता है तथा इसके अतिरिक्त में भी कहानी में अतिरिक्त देश-काल तथा स्थिति के अनुरूप वातावरण की मूर्ति हा जानी है और कहानी पढ़ते समय ही नहीं अपितु पठनी समाप्त करने के पश्चात् भी इस पत्र की समय तक इसमें अतिरिक्त वातावरण की स्मृति रहता है अतः न केवल प्रारम्भिक

१. द्विजे कहानियाँ की विचारविधि का विचार-सं० लक्ष्मीनारायण लाल (पृ० ३३०)

हिंदी कहानी लेखकों ने अपितु आधुनिक कहानीकारों ने भी इस सहज प्रसिद्धिपूर्णता और शक्ति उत्पन्न करने वाले तत्त्व को अपनाया है तथा पारघात्य विचारकों ने भी उसे एक प्रभावशाली तत्त्व माना है ।^१ यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि कहानी में वातावरण का चित्रण करना या वातावरण प्रधान कहानी लिखना सहज साध्य नहीं है और यदि पर्याप्त सतर्कता बरती न जाए तो भ्रांतियरा त्रुटियों की भी अधिकता हो सकती है ।^२

इसमें कोई संदिग्ध नहीं कि ऐतिहासिक कहानियों में तो देश-काल तथा वातावरण का अत्यंत आवश्यक समग्र साठा है क्योंकि इससे कहानी के युगानुरूप वर्णन से परिचित होने का पाठकों को अवसर मिलता है और इस देखते हैं कि हमारे ऐतिहासिक कथाकारों की रचनाओं में इस प्रकार के यह सुन्दर तथा स्वाभाविक उदाहरण उपलब्ध भी होते हैं^३ परन्तु साथ ही सामाजिक कहानियों में

१ "Local colour, as the term implies makes its appeal largely to the eye of the reader. Atmosphere on the other hand makes its appeal almost entirely to the emotion. One is objective and other is subjective. One must be true to the fact the other true to a given mood either of the author or of his creature, the leading character."

Local colour attempts to harmonize the details of setting and character with the actual conditions of a given time and place. Atmosphere attempts to harmonize setting and character with the feeling of a character in certain time and place. Thus it will be seen that the one is usually perceived by the intellect the other by the emotions.

—A Manual of Short Story Art by A. M. Glenn Clark PP 72

२ "Many students get the notion that environment is atmosphere and so they fall into the technical blunder of trying to produce atmosphere by elaborate descriptions of scenery. Their belief is false and their practice only occasionally sound. The atmosphere is, be it repeated, the impression which environment makes upon the beholder and which the beholder in writing seeks to convey to his readers."

—The Art and Business of Story Writing by W. D. Pitkin
(PP 193-194)

३ "गणपति (विठ्ठल) नदी का आज सातहा विगार हुआ था। राजपथ भीड़ गल घे। गणियां तड़ म बागिच जम की मुख उठ रही थी। नागरिकों ने अपने दरबारों को कैनों के स्तंभों, पुण-वन्द्य-जड़ित मयम बस्ती और लबी-बबी मामाओं में मुनजिज्ज करने में एक दूसरे से होड़ मया रणा को। तदनों की ता बाग ही क्या, नागरिक और नागरिकाओं तड़ म आज गए बरत और तखु तखु के आपुण्य पक्ष गये थे। हाट बाजार

कहानी में देश-काल

तथा वातावरण

५

यों तो देश-काल तथा वातावरण का चित्रण उपन्यास में अवरय किया जाता है लेकिन उसकी आवश्यकता कहानी में भी प्रतीत होती है यद्यपि उपन्यास की अपेक्षा कहानियों में उसके लिए स्थान कम ही रहता है और इसलिये कहानीकार अर्थात् संक्षेप में ही घटना तथा पात्रों से संबंधित स्थान काल तथा वातावरण का चित्रण अवश्य करता है जिससे कि कहानक में यथाथ चित्रण तथा विविध परिश्रों के अर्थों एवं विषयों की पूर्ण अभिव्यक्ति हो पायी है। डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल के शब्दों में 'वास्तविक जीवन देश काल और जीवन की विभिन्न स्तु अस्तु परिस्थितियों से निर्मित होता है अतएव इन तत्त्वों का एक स्थान पर संघटन और चित्रण करना कहानी में वातावरण उपयुक्त करना है। कहानी की कथावस्तु और उसके संघटन पात्रों का संघटन इन स्थितियों से होता है अर्थात् इनका उद्गम मूल और सम्बन्ध किसी देश में होगा या किसी विशिष्ट स्थान अथवा प्रदेश से होगा।'¹

स्मरण रहे रंगमंच पक्षों, पेशभेषा आदि के द्वारा मातृक की स्थिति और वातावरण से परिचित होना महज कार्य है परंतु कहानी अभिनेय नहीं है अतः ग्यामायिक ही उसमें स्थिति और वातावरण के निम्न प्रसंगानुसार देश काल-परिस्थिति का चित्र प्रस्तुत करने पड़ते हैं जिससे कि पाठक कहानी की मूल संघटना और मातृक में अथवा नास्तिक्य स्थापित कर पाता है। वस्तुतः कथा-साहित्य के इस तत्त्व में कहानी का आचरण द्विगुणित हो उठता है क्योंकि इसमें कहानी के घटन घटन में पाठक का मनन आचरण और प्ररग्ना प्राप्त होता है तथा इसके अन्तिम में भी कहानी में अद्विज देश-काल तथा स्थिति के अनुरूप वातावरण की स्पष्टता जानी है और कहानी पढ़ते समय ही नहीं अपितु कहानी समाप्त करने के पश्चात् भी उस पक्षी समय तक इसमें अद्विज वातावरण की स्मृति रहता है अतः न केवल आरम्भिक

1. विश्व कहानिया की निम्नलिखित का विवरण-डा० लक्ष्मीनारायण लाल (पृष्ठ ३३०)

हिंदी कहानी लेखकों ने अपितु आधुनिक कहानीकारों ने भी इस सहज प्रभयिष्णुता का शक्ति उपभोग करने वाले तत्त्व को अपनाया है तथा पारभात्य विचारकों ने भी इसे एक प्रभावशाली तत्त्व माना है।^१ यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि कहानी में वातावरण का चित्रण करना या वातावरण प्रधान कहानी लिखना सहज साध्य नहीं है और यदि पर्याप्त सतृप्तता बरती न जाए तो भ्रातिवरा त्रुटियों की भी अधिकता हो सकती है।^२

इसमें कोई संदेह नहीं कि ऐतिहासिक कहानियों में तो देश काल तथा वातावरण का अत्यंत चित्रण आवश्यक समझा जाता है क्योंकि इससे कहानी के युगानुरूप वर्णन से परिचित होने का पाठकों को अवसर मिलता है और हम देखते हैं कि हमारे ऐतिहासिक कथाकारों की रचनाओं में इस प्रकार के कई सुन्दर तथा स्वामात्रिक उदाहरण उपलब्ध भी होते हैं^३ परन्तु साथ ही सामाजिक कहानियों में

१ "Local colour, as the term implies makes its appeal largely to the eye of the reader. Atmosphere on the other hand makes its appeal almost entirely to the emotion. One is objective and other is subjective. One must be true to the fact, the other true to a given mood either of the author or of his creature, the leading character."

Local colour attempts to harmonize the details of setting and character with the actual conditions of a given time and place. Atmosphere attempts to harmonize setting and character with the feeling of a character in certain time and place. Thus it will be seen that the one is usually perceived by the intellect, the other by the emotions."

—A Manual of Short Story Art by A. M. Glenn Clark PP 72

२ "Many students get the notion that environment is atmosphere and so they fall into the technical blunder of trying to produce atmosphere by elaborate descriptions of scenery. Their belief is false and their practice only occasionally sound. The atmosphere is the repeated impression which environment makes upon the beholder and which the beholder in writing seeks to convey to his readers."

—The Art and Business of Story Writing by W. B. Pitkin
(PP 193-194)

३ पुराणा (विम्बा) नगरी का राजा मोतही गिराज हुआ था। राज्य में सब शांति थी। पत्नियों तक में शामिल जन की सुख उठ रहा थी। नागरिकों में अपने दरबारों को कैदों के स्त्रियों, पुण्य-वस्त्र-भक्ति प्रदत्त वस्त्रों और नर्तकी-नर्तकी मायाभा में सुवर्णक कानों में एक दूसरे से होकर लगा रहा था। तदर्थों का तो बात ही क्या, नागरिक और नागरिकों तक में राजा का दरबार और नरक नरक का आनंद प्रदत्त रहा था। राजा

भी दौरा-काल तथा परिस्थितियों का चित्रण अपेक्षित है क्योंकि हमने कहानी में इतनी अधिक व्यापकता आ जाती है कि उसमें न केवल दौरा-काल का चित्रण ही अत्यंत व्यंजनमय रूप में होता है अपितु कहानी में उसकी समूची संवेदना, पात्रों की गति के साथ पाठकों के बहुपुत्रल के सामने अंकित हो जाती है। गुलेरी जी की प्रसिद्ध कहानी 'हमने कहा था' के प्रारंभिक अंश में दौरा-काल की अभिव्यक्ति यही अनुभावता के साथ की गई है और इस प्रकार के अवतरण पाठकों में न केवल आश्चर्य उत्पन्न करने की शक्ति रखते हैं अपितु इनके द्वारा सम्पूर्ण कहानी में फलात्मकता आ जाती है।^१ स्मरण रहे गुलेरी जी की भौतिक आधुनातन कहानीयों

की दुबानें नामा पत्थों से सजी हुई थी। सामान के ही नहीं दूर दूर के गांव के लोगों न मक्कों और मत्तियों को मन्डरे से ही आ बिदा था। बूकानदारों की बग नहीं थी। मिर्छां बाके पदना रहे थे कि और मद्दु-नेचे क्या नहीं बनाए ? मुताबे ने बैरों का बाजार रगने में अधिक मकोब से काम नहीं लिया था और उनकी पीचा पी में थी। मानियों का पूज-माताएं उनके ही घरों हो चुकी थीं। सिध महिमाओं के ही केन मजरा के लिए उनकी अकर्म नहीं थी बल्कि रगने के तोरना और पगों को भी जग मजरा था। पुणों के लिए बगल का अणार अंशर मसा हुआ था पर बहु भो दम विषाक म ग्गर नहीं मका। यदि यह कहा जाय कि काशिराणें पूजा पर मरनी हैं, तो अतिशयोक्ति म होगी। मात्र की बहों की लक्षिणां पूणों पर नहीं मरनी। वागलवागिनियों भी उनम पीछ नहीं हैं। मात्र के मिरमौर केन मगय की संक्षारों के लिए उनक तथा पाठनियुक्त में फलों की रतनी भरमार रखती है कि उसे पुणों का पुर बहा आ सकता है।"

—बड़ी गनी मद्दुम साह'सापन

१ 'हमने कहा था' का नाम पाठक मजरा पुस्तक का अंश भी मद्दुमि की म्दुति हो माने। बत्रोविमान के वे मये पहाट उन पत्राणों पर बरनी हुई भटे और उन भटा व माय साय लखय ह्दुपुल और मुन्दर मुनियों। उग्री मूगी मो पत्राणियों पर अत्र पत्रा डान है। उगी मूमि की मटियानी मा मगह पर परदे बिते रहन है और बड़ी टिगिनिस ग्यात्र और बादाम की बहार मानी है। बड़ा आभारी है, बड़ा बागना है और मगने बहार बरो है पुणगव ।

—बाम-बात्र बरगुन विदापान

२ 'बह बरे टट्टा के अने-गारी बाना की जगल व बाधा में जितनी पीठ टिग नई है और बात्र पर मये है उनमे हमारी प्रापता है कि प्रमूयमन बरगुन बाणों की बानी का मद्दुम मपावे। जब बड़-बड़े पदार्थों की बोरी मकरो पर पाइ की पीठ का बाबुर मे पुन है इनके बाने कर्म पाये की बानी मे मरना मिरग मद्दुम टिग बरने है, बनी मग बनने पद्यों की बानों के न होने पर लय माने है बनी उनके पत्रा की अंमूयिना । पोरों को आचर बन ही का मनाया मजा बना है और मनाय मग की म्दुति निग

ने भी विस्तार के साथ देशकाल की परिस्थितियों का चित्रण किया है और अंत में इस इमी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि नई पीढ़ी के कहानीकारों में भी न्याभाविक ही इस ओर रुचि होनी चाहिए। 'उसने कहा या की भौंति होमवती की एक कहानी 'घात का बनी' में भी विस्तार के साथ देश काल का चित्रण किया गया है' और विचारपूर्वक देखा जाय तो हिंदी कथा साहित्य की नयी प्रतिमाओं की कहानियों में भी इस प्रकार के उदाहरण प्रचुर संख्या में दृष्टिगोचर होंगे।^१ साथ ही यहाँ यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि

और शोक के बखतार बने, माक की सीब बसे जाते हैं, तब अमृतसर म उनकी बिरावरी नाम संग बनकरबार मसियों में हू हड़डी बाले के लिए ठहर कर सब का समुद्र उमड़ाकर, 'बनो नामवा जी। हटो भाई जी। ठहरना भाई। माने दो सामाजी। हटो बाबा! — कहते हुए सफेर फेंटों लच्छरों और बगकों और गन्ने बोंमबे और मारे बालों के बंसल में से राह लेने हैं। क्या मज्जा है कि जी और 'साहब' बिना मुने किसी को हटमा पड़। यह बात नहीं कि उनकी बीम बसती ही नहीं है पर मीनी खरी की तरह महीन मार करती हुई। यदि कोई बुझिया बार बार बिलौनी होने पर भी नीक से नहीं हटती तो उनकी बचताबनो के ये नमुने हैं—हट जा बीम भोगिए हटजा कमरा बासिए हट जा पुता प्यारिबे बच जा लम्बी बासिए। समष्टि में इनके अर्थ हैं कि नू जीने योग्य है नू माग्यों बापी है पुनों को प्यारी है लम्बी उमर तेरे सामने है नू बपों मेरे पहिये के नीचे जाता चाहती है ?—बच जा।"

—उसने कहा या बन्धन सर्मा गुप्ता

१ देखिए—

"उम बड़ बाजार के ठीक बीचो बीच पनदयाम की दूकान थी जिसका नाम दाहर में ही बिसवान न का बल्कि भान-याम के दाँव और नपरों में भी उसके जोड़ का दूकान हमबाई नहीं था। मिटाई नमकीन के असाबा इमुबा तथा मुबई पूरे और दम-गर्न कबो-रियाँ माने के मिये दूर दूर के लोग उसकी दूकान पर पहुँच जाते और मुबह से लेकर रात के बाखू बर तक कारीगरों क असाबा पनदयाम तक को दम मारने की फुरसत नहीं मिलती थी। फिर एक पंठ तक यान पजाने का पबकर बनता और बीच बीच में पाका मुसफा पान दूय तथा मसियों क दिनों म ठबाई का दौर बनता रहता। किसी के लिए मनाही नहीं थी। जो भी मा बठा, बिना कुछ खाए पिए जा नहीं सफटा था। यही कारण था कि नारे नपर की नाक बन गया था बह छोटा सा हमबाई। बड़ बड़े रईम उसका भादर मान करते थे। जिस बिबाह में पनदयाम ने काम नहा किया बह रही समझा जाता था उसकी बनाई मिटाई तथा अस्ता कबोरी दूर दूर तक बिख्यात थी।"

—घात का बनी : होमवती

२ एक उदाहरण देखिए —

"भूमी दानर गूब रंया भूया है। उनक फाक पर इंदपनुवी आकार के कोई मने हुए हैं। मंदरबगी केन्टर न बड़े सबे हाब मे उन बोहों को बनाया है। देगन देगने दाहर

कहानी में वातावरण भौतिक और मानसिक दोनों ही प्रकार का होता है तथा भौतिक वातावरण की सृष्टि करते समय कभी-कभी वातावरण का चित्रण पात्र-विशेष को उद्दीप्त करनेवाला भी होता है अर्थात् प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण इस प्रकार किया जाता है कि वे पात्रों की मानसिक स्थिति की व्याख्या करने में सहायक हों अथवा पात्रों या पात्र-विशेष की मानसिक दशा से सम्बंधित में प्रतीत होते हों।^१ रससारत्र

में बहुत सी ऐसी दृश्यों को गयी है जिस पर साइन बोर्ड मटक गय है। साइन बोर्ड लकवा मानो बीबात का बड़ना। बहुत दिन पहले जब बीनालाय हुनबाई की दूकान पर पहुँचा साइनबोर्ड लगा था तो वहाँ दूध पीने वालों की संख्या एकाएक बढ़ गयी थी। फिर बाड़ आ गयी और नये नये तरीके और बैल-बूट ईबाद किये गये। 'ऊँ' या 'अवहिर' से जुक्त करके 'एक बार अवश्य परीक्षा कीजिए या 'मिलाबट साहित करने वाले को भी शमा नयद इनाम' की मनुहारों या ललकारों पर मिलाबट समाप्त होने गयी।"

— यमियों के दिन कल्पेवर

और भी—

पलक की बाई ओर बीबार पर उमर गयाम का एक बिज टंका हुआ था जिसके प्रम में नये लीये पर बरार आ गयी थी। उस बिज को बीबार पर मय बिनने मान बीन चुके थे। महीनों की बूल बिज के कम और लीये पर बिजनी हुई थी। बिज ही बना, कन्दे में जो बीज एक बार जिस स्थान पर रग बी जानी थी फिर उसे वहाँ में उगाने की कभी बीबन नहीं जानी थी। मोग बार मान बार जब कभी मकान मानिक पर में मकरी करबाता तो गर सामान अबररन्वी उगाया जाता था और उमके बाद लोडन मानो मरी से वहाँ नामान रग देनी फिर उस बरमने बाना कोई ब्यक्ति पर म ली था। बोने में पड़ा इमिम टेबल जिसके लीये और पीछ की बीबार के गामी स्थान में मकड़ियाँ में जन पिनल जाने बून सिने थ। गिड़की और रोगलमान के बीज में दिनी तिरण के बाने बाने हो लीये बरबाजे के पास एक बीम पर टंगा बरमों पुराना एक बँबेडर, बोने में रगी पहलून की लकड़ी की बनो लीये लीये बानी बुनी बिजद दोनों ओर सेगों के मंड बने थे— सब मानो आने आने स्थानों पर बर एक बून्दे की ओर लुनी लीये में लाका करने थे।

— हुसना बीबी गमपुवार

१ 'सूत्रियर मोरन के परवानु बरि ने बरामद में आकर बाने पहलुई के ऊपर बंदना के माहुर प्रकार को दगा। गामने मकरी बँबनी पाणी में बिजनों की मयन की लकड़ी लीये हुई मबीन को पारा की आर उमरी मजर लई। लदी के प्रबाह की गभीर पर बरलूट को मुनबन बह मिहुर उगा। बिनने ही लय मंड उगाये बह मुय भाव में मड़ा रग। मरिन मनी के उदाय प्रबाह को उग उगमन चीनी म दयन की हुददा में बरि की बाना ध्याकुन हा उगी। आबद और उमेन का बर पुनना लीये व मय भाहुवान की उगेगा म बर मया।

— मबीन गारल

की दृष्टि से इस प्रकार के वर्णन चाहे उद्दीपन विभाव के अंतगत अवश्य आवें (यद्यपि इस प्रकार के सभी चित्र उद्दीपन विभाव के अंतगत नहीं आते लेकिन उनमें अस्वाभाविकता नहीं रहती)।

यहाँ यह भी स्मरणीय है कि कथावस्तु में स्वाभाविकता लाने के लिए कहानी-कार प्रसंगानुसार उन स्थलों का भी चित्रण करता है जो कि उसकी वास्तविकता बनाए रखने के लिए स्वाभाविक हैं। कहानी चाहे चरित्र-प्रधान हो या घटना प्रधान लेकिन उसमें ऐसी अवसर अवश्य आते हैं जब कि वातावरण का चित्रण पर पाठकों को कथा-सीढ्य का आनन्द प्रदान किया जाए। कहानीकार जान-धूमकर या यथानु-इस प्रकार के प्रसंगों की सृष्टि नहीं करता अपितु स्वाभाविक ही इस तरह के चित्र उसकी कहानियों में अंकित हो आते हैं। उदाहरणार्थ 'पानवाला' कहानी में पत्त जी ने पीताम्बर का चित्रण करते समय उसकी दूधान और कमरे का यथासध्य वर्णन भी किया है, देखिए—

“पान, सुपारी, सिगरेट, धीड़ी—अप भी उन्ही प्रकार, उन्हीं जगहों पर दूधान में रक्खे हैं। चूने-फरथे के वर्तन भी वही पुराने पहचाने हुए हैं। चूने की लकड़ी पिसकर कर पतली पड़ गई है, फरथे की पपड़ी कम जाने से और मटी हो गई है। दूधान के पीछे पीछे वही पुराना लैम्प टैगा है जो उसके किमी मित्र की इनायत है, चिमनी के ऊपर का भाग टिन की पत्ती का बना हुआ है। सामने एक मध्येले आकार का शीशा लगा है, जिसके पारे में धन्वे चार बफ्तियाँ पड़ जाने के कारण मोर भी—

“बहु रात चितनी पीसो की चिटनी गहरी थी। गर्ते हुए बारसों का निताइ मुनकर भी बिजली कमचटी बनी जा रही थी। एक महीन-सी देखा किश बति न कराररे बायसों को उमठ किम जा रही थी और पति की मोर में पड़ी कम तक की बबस और बुबल मारी मात्र रोकर भी हँसती जा रही थी।

—एक दिन हुआ मोरनी

१ निम्नांकित उद्धरण में प्रकृति विषय युद्ध की भयानकता का लोभ भी अपिब स्पष्ट करता है—

“एक महकपुष अभियान के विराम करने की तयारी थी। प्रकृति नीच उठी। बोड़ों और हाथियों की चोरकार में जावान बाघरा उठा। बरमानी हवा के बपड़ों के बगम के बुध रणमार बरत हुए मूम रहे थ। पनु-पली मन्न हावर आयम बूडग लग। बड़ा दिवत समय था।

उम तयानक संशाम में राजपूत मेला मारबाबरी कर रही थी। हन्दी पागी को बाटियों पर भीत लोग पनुप निग उमठत ममान गह थ।

—बिदाही विरामपरनाथ लर्मा चौतिक

कॉच के पीछे मे वीच में शीपदी का तिरछा रंगीन चित्र चिपक़ा दिया गया है। अंदर के कमरे में मूँच की चारपाई और विस्तर, खूँटी पर टैंग्र कोट सिगरेट दिया सलाई के खाली डिब्बे, एक छोड़े की झोंगीटी और कुछ चाय का सामान रहता है बाहर यही पुराना काठ का बेंच पड़ा है जिस पर सुबह, शाम, दोपहर हर बरत दो चार दोस्त लोग बैठे गपराप करते, एक दूसरे की खिल्ली उड़ाते और शहर की घुसाइयों एवं सराफियों की चर्चा करते हैं।”

—पानपाखा सुमिप्रार्नदन पंत

यहूत मी ऐसी कहानियाँ भी दृष्टिगोचर होती हैं जिनमें कि वातावरण का समष्टि प्रभाव भी देख पड़ता है और इसमें कोई संदेह नहीं कि इस प्रकार की कथा नियों का अध्ययन करने पर पाठकों के चित्त पर न केवल पात्र विशेष के व्यक्तित्व की छाप पड़ती है अपितु साथ ही यह उसके परिपार्य चित्रण से भी प्रभावित होता है। अशेष की प्रसिद्ध कहानी रोम में (जिसका कि शीर्षक उन्होंने अप गैमीन' कर दिया है) इस प्रकार के वातावरण का वास्तविक चित्रण दीप्त पड़ता है। कहानी का प्रारंभ ही उन्होंने इस प्रकार किया है मानों ये पाठक की किसी अभिराज्य वातावरण में ले जा रहे हैं और कहानी के अंत में वो वातावरण सर्गर्धी प्रभाव अभिवन होकर पद्यकार हो उठते हैं।^१ साथ ही यहूत मी कहानियों में यभी-यभी

१. दृष्टिगोचर—

“बोहर में उम गून आंदा म पैर गाने ही मुझे एका ज्ञान पदा मानों “न पर किमी शार की छाया मंडरा रही हा। उगने वातावरण म बुद्ध एका अत्य्य अग्रूप दिवु फिर भी बोधम और प्रकणमय और पना ना पैर रहा था”

मेरी आहूत मुन ही बाहर माननी निकनी। मुझ देनकर पड़वान कर उमच। मुस्ताई हुई मुझ मुझ तनिक मे मोड विरमय मे जागी मी और फिर पूर्ववन हा गई। उमन कहा जा पात्रा। और किना उतर की प्रनीणा क्रिय भीतर की ओर चनी मे भी उमर पोष हो गया।

—गैमीन (रात्र) अग्रप

२. अक्षिण—

“तभी प्यार का पंत बना। मैंने अपनी भारी हा रही तमके उगहर अरुणात् किमी अरुण प्रनीता मे माननी की भार देना। प्यार के पंत पट की गड़वन के नाप ही माननी की छापी प्यार का बड़ोडे की भांति उठी और बरि बरे अरु लनी और पदा पति के अरुण के नाप ही ब्रू हा जाने बापी आशा मे उमने कहा-प्यार कर ना”

—गैमीन (रात्र) अग्रप

कृत्रिमसे अन्वतरण भी दृष्टिगोचर होते हैं जिनमें कि कहानीकार अपनी सुकोमल भावतुलिका से प्रकृति के वे ही रंग रचाना के रंग से अनुरजित करते हैं जो कि मानव मात्र को आकर्षित करने की सामग्री अपने पास रखते हैं और यदि बिचारपूर्वक ऐसा जाए तो इस प्रकार के चित्र कभी-कभी कवित्वमय भी प्रतीत होंगे।^१

स्मरण रहे कि परिवारक चित्रण भी कई प्रकार से किया जाता है और कभी-कभी तो उसका सीधा माधा एवं स्पष्ट वर्णन ही कर दिया जाता है तथा

१. देखिए—

बहु दिन बड़ा ही सुहावना था। मेघ-मालाएँ बिरी हुई थी और तबल जोषन को उत्पुस्त करने वाला भात जोम लीन-महरी में लीन था। मयूरी निकटवर्ती उद्यान में कभी शीशा और नृत्य के विविध रूपों की शोकी दिखायी हुई रंग मण में अपनी आसो-माता प्रस्तुत करती थी कभी अपनी नृत्य माधुरी से साहित्य रसिकों का मन हरन कर उनके हृदयों में आनंद संराकिनी प्रवाहित करती थी।

—कलम्य भात भगवतीप्रसाद बाबपेयी

और भी—

‘तब सुन्दरी हुआ मन चुकी थी। आकाश में कहीं कोई मलीनता नहीं थी। मेघ पके पबिक की भाँति हिम शिखरों पर आराम कर रहे थे। विद्याएँ निचरी नीमिया में मुनरित हो रही थीं और मरुत किशोरों का मुकुट पहन कर कौलाश की गरिमा नववधू की तरह मुनरा लगी थी।

—चुनीती : चित्तु प्रभाकर

२. देखिए—

ऊपर आकाश के नीचे पृथ्वी पर एक छोटा स्वतः बरस इटसा रहा था। नीचे पहाड़ों की पपरोनी गार में नहीं बायी जा रही थी। दूर स्थित बनों से लकड़ी का भारी लकड़े अपनी छछमती हुई छातियों पर संभासे वह किती तीव्र गति गाड़ी का समान लौड़ी का रही थी जैसे इस भार को हलका करने की विन्ता इस तीव्रगति का कारण हो। उसके जीवन में कितना प्रसन्न और उसके शौर्य में कितना माधुर्य था। परन्तु उसकी उमरा कितनी प्रसन्न और उसकी ऊँचा कितनी मर्यदा थी। उसका मरमल जीवन हृदय को उत्पन्नित और उगवा उठ कर मन को मर्यदा करता।

—देवता सत्यप्रकाश मंगर

३. देखिए—

‘एक छोटी सी मोगड़ी है। रात्र के आठ बज मय है। उमरम शीतक नहीं बना है। आराम में जो और उगा है उगी का घूमिन प्रकाश मोगड़ी में दो प्राणिया के घूमिन बिच दीवारों पर मोकन कर रहा है। एक ता बुझिया शिखरी उमर ५० में कम नहीं है। इमरा जो नीवा हुआ है वह पाँच छ बज का बरषा है। वह बुझिया के उबान बटे का बज

कोच के पीछे से बीच में श्रीपदी का तिरछा रंगीन चित्र थपक्य दिया गया है अंधर के कमरे में मूँज की धारपाई और विस्तर, लुंटी पर टेंगा चोत्र सिगरेट दिव सलाई के ग्याली डिब्बे, एक लोहे की बेंगीठी और कुछ चाय का सामान रहता है बाहर वही पुण्या अठ कर बेंच पड़ा है जिम पर सुपड़, शाम, दोपहर हर बस दो बार दोस्त लोग बैठे गपशप करते, एक दूसरे की खिस्ती उड़ाते और शर की घुराइयों एवं खराबियों की चर्चा करते हैं।”

—पानवाला मुमित्रानंदन पंत

यहूत सी ऐसी कहानियाँ भी दृष्टिगोचर होती हैं जिनमें कि वातावरण का समष्टि प्रभाव भी देखा पड़ता है और इसमें कोई सीद्द नहीं कि इन प्रकार की कहानियों का अध्ययन करने पर पाठकों के चित्त पर न केवल पात्र विशेष के व्यक्तित्व की छाप पड़ती है अपितु साब ही वह उसके परिपारव्य चित्रण से भी प्रभावित होता है। अज्ञेय की प्रसिद्ध कहानी रोज में (जिसका कि शीर्षक उन्होंने अथ 'गोपीन' कर दिया है) इस प्रकार के वातावरण का वास्तविक चित्रण वीस्य पड़ता है। कहानी का प्रारंभ ही उन्होंने इस प्रकार किया है 'मनों के पाठक को किसी अभिराष्ट्र वातावरण में ले जा रहे हैं' और कहानी के अंत में तो वातावरण सम्बन्धी प्रभाव अन्वित होकर पद्याकार हो उठते हैं।^१ साथ ही यहूत सी कहानियों में कभी-कभी

१ देखिए—

'बोसह' में उन मूँजे अंतम म पर रगने ही मूँजे गया जान पड़ा मनों उन पर दिग्गी शार की दृष्या पंडरा रही हा। उनके वातावरण में कुछ गया अदृष्य अमृष्य दिवु फिर भी बोसम और प्रकल्पमय और पता मा फेंक रहा था ..."

मरी आहूत मुनन ही बाहर माननी निबनी। मुन देनकर पहचान का उनका मुज्जाई हुई मुन मुजा तनिक नि मीन विरमय में जागी गी और फिर बुर्बन हा गई। उनमें कहा आ जाओ। और बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये भीतर की आर चनी में भी उमक बोध हो गया।"

—गोपीन (रात्र) अग्रम

२ देखिए—

'कभी ग्यार' का पंजा बडा। मैंने अपनी मारी हो रही तनके उनका बरम्यात् बिनी अत्यष्ट प्रतीक्षा में माननी की भाव देना। ग्यारह के पठने पठ का गइवन के माप ही माननी की छापी एबाहूत पनोने की भीति उठी और पीरे पीरे बरन मपी और पंटा पति के बरन के माप ही मूँज हा जाने बापी भाबाह में उनमें कहा—ग्यारह बर मा ..."

—दीवीन (रात्र, अग्रम)

कुछ ऐसे अवसर भी दृष्टिगोचर होते हैं जिनमें कि कहानीकार अपनी मुकामल भावतन्त्रिका से प्रकृति के वे ही रंग कल्पना के रंग से अनुरजित करते हैं जो कि मानव मात्र को आकर्षित करने की सामग्री अपने पास रखते हैं और यदि विचारपूर्वक ऐसा आए तो इस प्रकार के चित्र कभी कभी कवित्वमय भी प्रतीत होंगे।^१

स्मरण रहे कि परिपारण चित्रण भी कई प्रकार से किया जाता है और कभी-कभी वो इसका सीधा साधा एवं स्पष्ट वर्णन ही कर दिया जाता है^२ तथा

१. देश-ए-

वह दिन बड़ा ही सुहावना था। मेघ-मासाएँ चिरी हुई थी और तरण जीवन को उत्पुष्क करने वाला मारत कोम नील-नहरी में नील था। मयूरी निकटवर्ती उद्यान में कभी भीड़ा और मृत्यु के निबिध बसों की झाँकी दिखाती हुई रंग मंच में अपनी जालोक-माला प्रस्तुत करती थी कभी अपनी कूक माबुरी से माहिल्य रसिकों का मन हरण कर उनके हृदयों में आनंद संवाकिनी प्रवाहित करती थी।

—कलम्य पाठ भववतीप्रसाद कामेयी

और भी—

उब गुफानी हुआ कम चुकी थी। याकाम में कही कोई मनीतता नहीं थी। मेघ के पथिक की माँति हिम सिलतों पर आगम कर रहे थे। विदाएँ निवरी नीमिमा से मुन्वित हो रही थी और बदन किरणों का मुकुट पहन कर कंचाम की गरिमा नववधु की तरह मुस्करा उगी थी।

—चुनीनी : विष्णु प्रताकर

२. देश-ए—

अपर आकाश के नीचे पथ पर एक छोटा खन बाधन इटता रहा था। नील पहाड़ों की पथरीली कोर में नदी भागी जा रही थी। पूर स्थित वनों में सफ़ाई के मारी ठकने जगनी जलती हुई छातियों पर संभावे वह किनी तीव्र गति पाड़ी के समान पीड़ी जा रही थी जैसे हम बार को हस्ता करने की चिन्ता हम तीव्रगति का कारण है। उनके जीवन में विदना प्रचण्ड और उसके सौदय में विदना माभुय था। परन्तु उसकी उगता विदनी प्रचण्ड और उगकी कूरता किनी मयकर थी। उमका मज्जन जीवन हृदय को उम्सगिन और उमका उच बार मन को जयभीन करता।^३

—देवना गणपतकाम संकर

३. देश-ए—

एक छोटी सी झोरड़ी है। रात के आठ बजे १२ है। उमके हीनर २१ है। बाबाग में जो बार उपा है उनी का जूविन प्रकाश ४० है। उमके हीनर २१ है। विर हीबारों पर अकिन कर रहा है। एक ता कुँदिया दिमरी २०१ २०१ २०१ २०१ है। दुमरा जो लोपा हुआ है वह पाँच ११ बरें का बरपा है। वह २०१ २०१ २०१ २०१

कभी-कभी इनमें चित्रात्मकता भी देखी जाती है और कभी-कभी ये ही चित्रण है। यही ठीक इस शोषण के मर्मिण चित्र की तरह उस बुद्धि का आधार है। इस शोषण में कम यही जो चित्र और व प्राची रोप और सब जो हाना बाहिए, कुछ भी नहीं दीकटा है। सब जैसे संघर्ष में मूढ है पर सब तो यह है कि उनका पान कुछ है ही नहीं नाम के ठीक उन्हें बीजे ही बिचित्र कर दिया है।

— बाणन की टोपी बाणस्पति पाठक

और भी—

मध्या का समय है भोग गर्मी का मौसम। दिन भर की तपिश से लंग आकर मोप आर एतों पर आ रहे हैं। वहीं एतों पर दिवकाव हा रहा है वहीं फूलों के समाने सीधे आ रहे हैं कहीं बिस्तर ठंड किये जा रहे हैं। पुष्प या तो अभी दूबानों से भाये नहीं या छंद को निवस गए हैं। रिचयी घर के काम-काज में छुट्टी पाकर एताने का सामान करके आ जाने में व्यस्त हैं। भीषे भोजन का क्या आनंद। ऊपर एत पर पायेये मयें हीरेमें और हुआ खली तो ठंड सीकों का भी आनन्द पड़े। दिन भर मूढ मरपी पड़ी है। इत पत्थर लड़ मुक्त गए हैं। पायल एत को ठंड हो बायु बन, पर आता तो नहीं है।

—दूगो जोगप्रनाथ शरद

१. दैतिए—

क्रान्तिक के दिन थे। बर्षा बीठ बकी थी। रागहर के समय माथी गठ को भी स्तम्भता छा रही थी पम्पु उनम गत की मरक और डर न था।

पहाड़ों के समकालों पर कैनों की जुगई हो रही थी। गुमहगी पूत में पाठ में मनी पहाड़ियों पहाड़ों के पादों पर बीड़ों के अंगस कुो अपकृत गेन मरानों की फूम और स्नेह की एतें नव चराबीर हो रही थी। लपहगी में यहाँ पानी कपकप बह रहा था बह गनी हुई चाँदी या तिन मित कर रहा था। यहाँ बह स्थिर था बनी एतन के आवाज को प्रतिधिया गे लेना जान पड़ता था मारों एतन की नीनी माड़ी एतन के सिधे मोप के बँड हों।”

—गराई मगनाम

और भी—

“माता का बरत था। गावें मोट रहा थी। उनक पंगों म उठी हुई मृग मरगियों का बाग रही थी और एका के तोलेने म रास्तर बिमकुम भूमिण ही गया था। उनके पीछे बह हुआ मृग्य था और मोरगियों में म मध्या की रागी पराने का पुर्जा धम म मिन कर लप समया बागावरत संघार कर गत था। एत पर उत्राया था रेडिन डग-डग बाग रहा था। एत उमे बाते पानी की स्तम्भ एत पर विजय जाने का डर था।”

—अविमान रामेय रागव

प्रकारिक भी बन जाते हैं परन्तु प्रकृति का यह सपेचन और संवेदनशील रूप जानी की वास्तविकता की कमी कमी नष्ट कर देता है तथा उसमें केवल काव्यत्व ही जन्म पाता है और कभी-कभी तो इस प्रकार का पूर्णतः चित्रण अनावश्यक सा प्रतीत होता है अतः इस प्रकार के चित्रण से कुशल कहानीकार को अपेक्ष्य यथाना चाहिए अन्यथा उनकी कृति अस्वामाजिक प्रतीत होगी। इस प्रकार के चित्रण में व्यक्ति की आत्मा है और कहानीकार मातावरण का चित्र प्रस्तुत करते समय व्यक्ति चित्र के भी सरस उदाहरण प्रस्तुत करता है तथा ऐसे प्रसंगों में कहानीकार विस्तार के साथ

१. देखिए—

“आधीरात भी । नदी का किनारा था । आकाश के तारे रिबर के और नदी में चमका प्रतिबिम्ब कहूँ के साथ बचस । एक स्वर्गीय समीप की मनोहर और नीबनवायिनी मानपोषिणी ध्वनियाँ इस मिस्तक्य और तमोमय दृश्य पर इस प्रकार छा रही थी—जैसे हृदय पर आघात छावी रहती है, या मुक महल पर आकाश ।”

—आत्मसुगीत प्रेमचन्द

और भी —

बीरे-बीरे रात का रंग बदल जाता । हवा में एकाएक धीतसता भी बढ़ गई और नमी भी । उस गीले स्वर्ण से मानो एकाएक रात में पान लिया कि वह नयी और नज्जित हो कर, कुछ सिहर कर, पुनः के मावरण में छिप गई ।

—नम्बर दस अजय

२. देखिए—

“सिद्धि में नील जलमि और व्योम का जन्मन हो रहा है । छात प्रवेश में सोमा की सहृदियाँ उठ उठी हैं । बोझों का करण प्रतिबिम्ब, देसा की बाणुकामयी भूमि पर दिगंत की प्रतीक्षा का आवाहन कर रहा है ।

—समुद्र संतरण जयशंकर प्रसाद

और भी —

“जगजान् मास्कर की भूबलमाहिनी कनक किरणावली अस्ताचल में अपना अस्तित्व दिया रही थी । बामठी का साम्य समीरण मंद गति से बोल होने कर तबागत पवित्रों का स्वागत बन रहा था । इधर मधुरासाया कीकला रंगान की हाल पर बहकर बतकी के साथ सटनेमियाँ कर रही थी, तो उधर मदमाते मधुमिण इतस्ततः अपनी गूँजवापुरी बिगर रहे थे ।

—बन थी मगदनी प्रसाद बाजपेयी

३. देखिए—

“जाठ हजार पुट की ऊँचाई पर जून का महीना भी निम्नतर से बन टंडा नहीं होता । धूप बहाँ प्रिय लवठी छात मातावरण को धातु के तीव्र झोंके विशुद्ध कर बन । उनसे पीछे वाले और दवेत बालों के बन बड़ आन बना मन्दर दृश्य था । लाल के बने

मानव रूप का मुख्य चित्र अंकित करता है। परन्तु आधे या पूरे वाक्य में ही सम्पूर्ण और परिष्कृत से सफेद बादल उमड़े जल आते और परस्पर टकरा जाते। परन्तु उनकी टक्कर द्वय के कारण नहीं थी। यह प्रेम का मिलाप था। दोनों सेनाएँ पक्षे मिलती और आगे बढ़तीं। उन दोनों में कितनी समझ थी कितना समझौता था। स्वयं जिया और दूसरों को जीने दो। सफ़ेद बादल जाकर काली बटाओं के कान में घुँवते कि ईशान तानी है और सुन्दर अबसर है। काली बटाएँ आकाश की भीमिका को एकदम छिपा करती और पर्वतों की चोटियों पर पुनः शक्ति से बरसने लगती जैसे कई सुनो ना बरसा से रही है। परन्तु वे ऊँची चोटियाँ उस हमले को व्यंग्यपूर्वक सहन करतीं।

उन चोटियाँ से न जान कब ऐम कितने आक्रमण सहन किये न; वे हजारों बप से यही कुतूहल देखती आई थीं। एक आधे पुरुष की तरह वे उनमें खबरगती नहीं थीं। वे उन्हें उम्मी प्रकार सहती जैसे मूख के ताप और हिम की टक्कर को। बरसात में बर्षा न समझती सख्तियों में बरफ़ न टकती परन्तु न अपनी जगह पर अटक न बरसती और मुस्तयकर सब सहती। घायब के जीवन के रहस्य का समझ गई थीं। जहाँ सरबो और मरमी आधी और तूफान बसत और पतझड़ आने और न जाने है। जहाँ कुछ भी नित्य नहीं। बुन और सुन अमीरी और गरीबी हार और जोत इन सबको सपासता बप और छाह से अधिक कुछ नहीं। फिर कोई भी बस्तु अमरबर है।

—अपना पताया मायप्रकाश मगर

१. देगिए -

“बहु पचाम बर्ष से ऊपर था। सब भी सुबको से अधिक बतियाठ और बड़ का जमड़े पर झुरिया नहीं पड़नी थी। बर्षों की झड़ी से पूम की रात की छाया में कड़कनी हुई जैठ की धूप में मने गरीर घूमन में बहु सुन मानता था। उनकी जड़ी मूँछ बिबट्टु के टक की तरह देखने वाला की आँसों में झुझती थी। उसका माबमा रम गाँव की तरह पिकना और घमकीमा था। उसकी माणपुरी घोनी का साम पैगामी किनारा, दूर से भी प्याल आकर्षित करता था। कमर में बनारसी कस्ते का कटा तिमम मीप की मूँच का बिबट्टु का गुना रहता था उसके घुँपराम बाधो पर मुनहम पम्प के नाप का छोर उसकी पीठी पीठ पर लैगा रहता। ऊँचे बँय पर टिका हुआ जोड़ा बार का गढ़ामा पट्टु भी उसको घन। पंखों के बत जब बहु चपला तो उसकी नयें चनाचट बारती थी। बड़ गुफा था।”

—गुदा उवाहन 'गमा'

और भी—

‘उमका सुन बिबकी काली मिट्टी के गूदा जाल पड़ना था परन्तु प्रत्येक देगा में सोच की बँयो ही सुकोकता थी जसी प्राम देगिय प्लाग्टर का मृनिमा में देगी जानी है। आँसो की गड़न समझी न हा कर गाप घोप होने न बालन उनमें तोये बरफे जना कमन चरित शक्ति थी। हाप पर मं मोट घाट पर कमकीन निमश के बड़ उम बँयी का मिर्चिन

विश्व प्रस्तुत कर देना क्या की उत्सुकता का प्रमाण है तथा हम देखते हैं कि इस प्रकार के उदाहरणों की हिंदी कहानियों में कमी नहीं है।

इस प्रकार की कहानी क्या व्यक्ति चरित्र के घराबल से निर्मित होकर अपने वास्तविक स्वरूप में पूर्ण मनोबैज्ञानिकता की ओर विकसित होती जाती रही है अथवा कहानीकार देश-काल और वातावरण की ओर बहुत ही कम ध्यान देते हैं तथा उनका उद्देश्य मुख्यतः वास्तविक परिस्थिति-चित्रण ही रहता है और वे अपनी कहानियों में परिस्थिति-चित्रण द्वारा मनोबैज्ञानिकता ज्ञाना चाहते हैं।^१ परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि केवल मात्र परिस्थिति चित्रण से ही कहानी में कलात्मकता आ जाती है अपितु हमारी दृष्टि में तो स्थिति और वातावरण का चित्रण आधुनिक कहानियों में ऐक्यविक प्रभाव लाने की सज्जता पैदा करता है तथा ये पाठकों को आकर्षक भी प्रतीत होती है। उदाहरणार्थ निम्नांकित कहानी में ईश्वर

में बाल बेटे थे। कुछ कम बड़े ललाट पर मुड़ी सोंहों के ऊपर लगी पीसी नीच की लिफ्टी में जो सिंघार का वह सटकटया के फूल से बूरे के गूणार का स्मरण बिनाठा था। कभी सात पर जब पुराने पड़े के रम वाली भाती में सिपटी सबिया एसी लगी मानों किसी अपट पिस्वी की सयल गड़ी मिट्टी को मूर्ति हो बिचके सब कच्चे रंग बुल गए हैं और जहाँ वहाँ से केवल मुड़ीन रेखाओं में कभी मिट्टी साँचन लगी है।

—अनीत के भक्त चित्र महादेवी बर्मा

१ एक उदाहरण दक्षिण—

‘मौजे फपड़ो क कारण बाड़े से ठिठुरही सिमटती बैसे बकर बा परो पर पड़ा हो अमुबिबा से चलता है बैसे ही कोयलेबानी काय बड़ी।

—मोहरबानी कोयलेबानी : मणपाम

२ बेवियण—

‘इस उदासी के जारी वातावरण के माप टूटों की बीड़ती छायात एसी जान पड़ती कि राज की कहानियों के अभाव कासे देव धोड़ रहे हों—ये वातावरण में पठोमी किमी हासल में इन सबमें अधिक बुर नहीं रह सकता है। गाँव के अमबुस मड़के दिन के प्रकाश में तो अंगसों में फूलने बाण पीछ से नहीं बरने पर अंधरे की कासी छायाओं की कल्पना मात्र से मपभीन हो उठने है। इसके अतिरिक्त पीछे रहने में जमका एक मीन भ्रात है। कभी कभी एर से जानकर किनारे बक जाते हैं। कभी बीरकर विपद जाने हैं, कभी कोई पेड़ जानकर किमी स्थान पर अह मारने को भटक जाता है। इन सब इधर उधर भटके हुए जानवरों को पठोमी हाँक साठा है और इन प्रकार जब उबक साथी गाँव के विपाम के पने रँडे बरगद के पेड़ क मोच शरों को अजिम बाग मंमासते है तब उनकी ठीक मंभाव करन में रिाकन मही शोती।’

—पागी का संघ रपूर्वज

मानव रूप का मध्य चित्र अंकित करता है परन्तु आधे या पूरे वाक्य में ही सम्पूर्ण और परिष्कृत से सफ़र बादल समझ चल जाते और परस्पर टकरा जाते। परन्तु उनकी टक्कर द्वेष के कारण नहीं थी। यह प्रेम का मिश्रण था। दोनों सेनाएँ ससे मिलती और आप बहतीं। उन दोनों में कितनी समझ थी कितना समझीता था। स्वयं द्विषों और दूसरों को जीने दो। सफ़र बादल जाकर कामी घटाओं के कान में पहुँचते कि सैवान राणी है और सुन्दर जवहर है। कामी घटाएँ आकाश की सीमा को एकदम छिपा लेती और पर्वतों की चोटियों पर पूर्ण शक्ति से बरसने लगी जैस कि नई मुर्तों का बरसात न रही हो परन्तु वे ऊँची चोटियाँ उस हमसे को ध्वंगपूर्णक सहन करती।

उन चोटियाँ ने न जाने क्या उसे कितने आश्चर्य सहन किये थे। वे हुनाग बप से यही कुतूहल देखती आई थी। एक आधे पुरुष की तरह वह उनका बहाराती नहीं थी। वे उन्हें सभी प्रकार सहती जैस मूय के ताप और हिम की ठण्डक को। बरगात में बर्षा न समती सचदियों में बरफ़ न रकती परन्तु वह अपनी जगह पर अटल सब दमती और मुस्कुराकर सब सहती। सायब के जीवन का रहस्य को समझ गई थी। जहाँ तररी और परमी आँधी और तूफान बसत और पतझड़ आत और बर जाते हैं। जहाँ कुछ भी नित्य नहीं। दुःख और सुख अमीरी और गरीबी हार और जीत सबका यथायथा बप और छाँह से अधिक कुछ नहीं। फिर कोई भी बस्तु अमरकर है।

—बपना पराया मरप्रकाश ममर

१. बेगिन—

‘यह पचास बप से ऊपर था। तब भी सुबका न अधिक बलिष्ठ और बड़ का बमड़े पर झुरिया नहीं पड़ती थी। बर्षा की लड़ी में मूस की रात का छाया में बड़की हुई जट की मूस में सरी शरीर घूमन में बह मूस मानता था। उनको बड़ी मूस बिम्बु के टुक की तरह देखने वालों की आँसों में चुनती थी। उसका मानना रंग मींग की तरह बिकना और बमकीमा था। जगती नामपुरी घोती का साल रेतामी किनारा, दूर से भी ध्यान आकर्षित करता था। बमर में बनारसी तरह का फटा जिससे मींग की मूस का बिम्बु घुमा रहता था उसके सुपराने बानों पर मुनहम पस्के क माफ़ का छोर उनको बीड़ी पीठ पर पीना रहता। ऊँचे कंधे पर टिका हुआ चौड़ा मार का सड़ाना यह थी उनकी धर। पर्वों के बल जब वह बपना तो जमती तमें बग़ाबत होती थी। बड़ गुण्डा था।

—गुण्डा बपारत प्रमाद

बीर भी—

‘उसका मूस बिबनी कामी मिट्टी में गड़ा जान पड़ना था परन्तु प्रत्येक सेना के लीचे की बीनी ही सुधीयता थी जैसी प्रायः किस प्लास्टर की मूर्तियाँ में देनी जाती हैं। बानों की गड़न समझी न ही कर गीत गात होन के कारण उनमें गात बचने जमी लभ्य बचित इति थी। प्रायः पर में माट माट पर बमकीन मिमट न बड़ —मे बीनी की मिट्टी

चित्र प्रस्तुत कर देना कला की उत्कृष्टता का प्रमाण है तथा हम देखते हैं कि इस प्रकार के उदाहरणों की हिंदी कहानियों में कमी नहीं है।

इस अवाधीन कहानी कला व्यक्ति चारित्र्य के घातल से निर्मित होकर अपने वास्तविक स्वरूप में पूर्ण मनोवैज्ञानिकता की ओर विकसित होती जाती रही है अतः कहानीकार देश-काल और वातावरण की ओर बहुत ही कम ध्यान देते हैं तथा उनका उद्देश्य मुख्यतः वास्तविक परिस्थिति चित्रण ही रहता है और वे अपनी कहानियों में परिस्थिति-चित्रण द्वारा मनोवैज्ञानिकता खाना चाहते हैं।^१ परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि केवल मात्र परिस्थिति चित्रण से ही कहानी में कलात्मकता आ जाती है अपितु हमारी दृष्टि में तो स्थिति और वातावरण का चित्रण आधुनिक कहानियों में पौराणिक प्रभाव खाने की तुलना पैदा करता है तथा वे पाठकों को आकर्षक भी प्रतीत होती हैं। उदाहरणार्थ निम्नांकित कहानी में ईद

का नाम देते हैं। कुछ कम बीड़े समाप्त पर कुड़ी भोंडा के ऊपर लगी पीली काँच की टिकुनी में जो तियार या बड़ मटकेट्या के फूल से बूरे का गूगार का स्मरण दिसाता था। कमी जाल पर अब पुराने बड़ के रंग बानी मोठी में लिपटी सजिया ऐसी लगी मानों किसी अपट्ट चिल्ली की सजल कड़ी मिट्टी की मूर्ति हो जिसके सब कंधे रंग पुन मए हैं और जहाँ तहाँ से केवल मुहीम रेखाओं में बँधो मिट्टी आँकने लगी है।

—मोती के बस चित्र महाशवी बर्मा

१ एक उदाहरण देना—

भीम कपड़ों के कारण बाड़ से छिड़की सिमटती जैसे बंदर का परो पर लड़ा हो अगुबिबा से बसता है बने ही कोयलेबानी काय कड़ी।

—मोतीबानी कोयलेबानी : यशपाल

२ देना—

“इस उदासी के भारी वातावरण के गाव टुकों की झोंकती छायाएँ ऐसी जाल पड़ती कि रात की कहानियों के अज्ञात फाँके देव दीड़ रहे हों—ऐसे वातावरण में पठोनी किमी हासल में इन सबसे अधिक दूर नहीं रह सकता है। गाँव के अत्यन्त लड़क दिव का प्रकाश में जो खंगलों में बूमने वाले पीछ से नहीं बरत पर बँबरे की काली छायाओं की अज्ञानता गाव में भ्रमभीत हो उठने हैं। इसके अतिरिक्त पीछे रहने में उमका एक और भाव है। कमी कमी एक दो जानवर किनारे एक जाते हैं। कमी चौककर पिछड़ जाने हैं, कमी कोई पट्ट जानवर किसी स्थान पर मूँह मारने की मटक जाता है। इन सब हमर ऊपर मटक हुए जानवरों को पठावी हाँक माता है और इस प्रकार जब उसक छापी गाँव के विषाम के बने होने बरन्द के वेड़ के भीष शरों की प्रतिम बार संभावते हैं सब सगरी ठीक संभाव करने में रिक्तन महा होनी।”

—पाटी का दस्य रघुबंन

का यथार्थ, सुन्दर और स्वाभाविक वयन देखिए—

‘रमजान के पूरे तीस रोजों के बाद आज ईद आई है। कितना मनोहर कितना सुहावना प्रभाव है। पृथ्वी पर कुछ अजीब हरियाली है, खेतों में कुछ अजीब रीनक है, आसमान पर कुछ अजीब लालिमा है। आज का सूर्य बेरसी, कितना प्यारा, कितना शीतल है मानो संसार को ईद की पधाई दे रहा है। गौश में कितनी हलपल है। ईदगाह जाने की तैयारियाँ हो रही हैं। किसी के फूले में घन नहीं हैं। फोड़ पड़ोस के घर में मुई तागा लीने दौड़ा जा रहा है। किसी के जूते फड़े हो गये हैं, उनमें तेल डालने के लिए वह तैली के घर भागा जाता है। अस्त्री अस्त्री पैलों को दाना पानी दे दें। ईदगाह से लौटते लौटते दोपहर हो जायगी। तीन कोस का पैदल रास्ता, फिर सैकड़ों आदमियों से मिलना भेटना। दोपहर के पढ़ने लौटना अमममत्र है। लड़के सधम ब्यादा प्रसन्न हैं।’

—ईदगाह प्रमपत्र

इसी प्रकार निम्नांकित अवतरण में देहती अस्पताल का वास्तविक विरण किया गया है—

“देहती अस्पताल उमे नहीं पढ़ सकते न वह पूर्ण राहानी दी था। छोटी-सी मंडी जमी बस्ती के लिये यही एक राहनी की जगह थी। मीत भी धाँ अपना इमाज करवाने आने में दिक्कियाती। पुरानी किलेनुमा इमारत का एक टूटे हिस्से में अगर आप यह टूटे हुए पत्थरों की पधाई पार कर जायें—जिसमें के निशान यह साफ जाहिर करते कि यह जानवरों के आने जाने का रास्ता रहा होगा, मुमकिन है कभी यह एक अस्पताल भी रहा हो—तो आप एक छोटा सा अँगन, जिसमें नीम का पेड़ और उमकी एक टाल में टेंगा हुआ बाधा गन्ध (सायद किसी शानी पनिये के लिये यह प्याज बनवा दी हो) और दूसरी ओर टीले पर शीतला माता नामक आठ-दस पुराने शिल्प-कृत मिट्टी-मुने आपकी मिट्टीने भाग बढ़ जाइए, एक साद का फाटक पार करके दो-तीन छोटी कोटरियों का अगन में एक टैबुल और कुर्मी पड़ी है। इसी जगह का नाम अस्पताल है।”

—नीम प्रभाकर गांधे

कहानी की भाषा-शैली

और उसकी

:६:

विविध प्रणालियाँ

वस्तुतः साहित्य में भाषों की शक्ति और उनका प्रसार भाषा की शक्ति पर ही निर्भर है अतः प्रत्येक कृता का कलाकार इस विषय में विशेष सतर्क रहना है और इस प्रकार कहानी-कला में भी सुन्दरता तथा सरलता पर ध्यान देना आवश्यक समझा जाता है। चूंकि भाषा मनोभावों की अभिव्यक्ति का माधन है तथा शैली उस साधन का उपयोग करने की रीति अतः भाषा की शक्ति पर ही शैली की उत्कृष्टता अवलम्बित है और इस प्रकार कहानी की भाषा ऐसे सार्थक शब्द समूहों से गठित होनी चाहिए जिनमें कि एक विशेष क्रम से व्यवस्थित होकर हीमक या पात्र के मन की बात पाठकों के मन तक पहुँचा कर उसके द्वारा उन्हें प्रभावित करने की क्षमता हो। चूंकि भाषाभिव्यक्ति का आधार भाषा है अतः भाषों को सुन्दर रूप में प्रकट करने के हेतु उनी के अनुरूप भाषा-मीर्द्वय भी अपेक्षित है तथा सरल, सुबोध और सरल शब्दावली से कहानी की प्रभावोत्पादकता बढ़ जाती है। यद्यपि प्रत्येक क्षेत्र की शैली में निरिचय शिष्टता और नवीनता अपेक्षित मानी जाती है तथा भाषा के सुन्दर और सज्ज होने में ही शैली-वैशिष्ट्य भी दृष्टिगोचर होता है परन्तु उत्तम भाषा और शैली बड़ी कड़ी जा सकती है जिसमें कि एक भी निरर्थक और व्यर्थ शब्द न हो तथा भेदगत कहानियों में किसी शब्द का हटाना तो दूर रहा यदि हम एक शब्द के स्थान पर उमका कोई अन्य पर्यायवाची शब्द रख दें तो उसकी स्वाभाविकता और मनोहरता नष्ट हो जाती है। पोकोक (Pocock) नामक एक पारवात्य विचारक के अनुसार कहानी का प्रत्येक भाग प्रसंगानुसृत और उचित होना चाहिए। न तो इसमें भाषों की दुर्बलता ही हो और न शब्दावली ही हो। प्रत्येक शब्द, शब्द समूह और वाक्य का कथा के वस्तु, पात्र या पात्रावरण से संबंधित होना आवश्यक है, जिसमें कि कहानी पढ़ने के परधान हमें ऐसा प्रतीत हो

कि यदि हम करी एक भी पंक्ति छोड़ जाते तो कहानी ही अधूरा रह जाती।' इस प्रकार कहानियों में भाषा की मार्मिकता की धार ध्यान देना अत्यंत आवश्यक समझा जाता है। स्मरण रखें प्रत्येक कहानीकार की अपनी निजी भाषा-शैली रहती है और इस प्रकार उसकी भाषा में शब्द-सौम्य, भाषा-मौख्य तथा रागात्मकता में अंतर भी पाया जाता है लेकिन यदि हम हिंदी कथासाहित्य का विचारपूर्वक अनुशीलन करें तो स्पष्ट हो जाएगा कि हममें बोलचाल की भाषा गंभीर एवं परिष्कृत भाषा तथा अलंकार वत्सल भाषा नामक भाषा शैली के तीन रूप देख पड़ते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक कहानीकार या कहानी की भाषा-शैली सर्वथा ही विभिन्न हो क्योंकि कभी कभी कुछ ऐसी कथार्य भी देख पड़ती हैं जिनमें कि पहले और दूसरे रूप का समन्वय सा कर दिया गया हो। साथ ही कभी-कभी भाषा-शैली में विभिन्नता कथावस्तु के प्रकार भेद के अनुसार भी होती है और इस प्रकार पटना प्रधान कहानी तथा भावप्रधान कहानों की भाषा में स्वाभाविक ही अंतर दृष्टिगोचर होगा।^१

वस्तुतः साधारण बोलचाल की भाषा शैली में भाषा की अपूर्व अभिव्यञ्जना शक्ति दृष्टिगोचर होती है और प्रेमचंद ने तो सुन्दर सरल शब्दावली में ही मानव जीवन का भावपूर्ण अंगों तथा मनोवैज्ञानिक तथ्यों का चित्रण किया है। प्रेमचंद अत्युक्ति में दूर ही रहते हैं तथा सभी वस्तुओं का यथामध्य चित्रण करते हुए अपनी

१ Every single part of the story must be relevant and to the point. There must be no padding out no word spinning. Every epithet every phrase, every sentence should bear in some way upon the plot character or atmosphere so that when we come to the end we feel sure that we could not have skipped a line without missing something essential.

२ यहाँ कि पटनाप्रधान कहानियों की भाषा शैली हम प्रकार होती है—

अब बेगारी ने एक दण्ड के आगम की ओर देखा कि गर्जन घमा घमा कर अपने आगमन आन की आवाज मीमाओं का आगमन आना। उनके प्युंगने बग उनके प्रपुष्ट बनों पर हल्का हल्का। वह भङ्गा हुआ हङ्गा हुआ निर्गुण मङ्गानो चाम के उन होने के बीच उनमें मया जिन पर उगने कभी कभी हँसता की थी।"

—अन पुत्र का आगमन राय कृष्णदास

यहाँ आधुनिक भाषा शैली का एक रूप होता है—

आज न जाने क्यों हम मंगीत ने अपनी मोई हई मनेवलि को उगा दिया। यहाँ मीकनि की मोगम हुआ था। मंगीत का वह अर्थ चाहे दिनी अज्ञान मात की बरम मीमा तक बढ़ना हो। दिनु आज ना बरी अने मनेव स्पष्ट की बरी पटना स्पष्ट कर रही थी जिनमें एक बरम पुत्र के अने हृदय की आवाज को गीत देने का शब्द था।"

—नयी प्रकार

सुन्दर भाव शैली में विित्र चित्रण और लय-संगीत का सुन्दर सम्मिश्रण प्रस्तुत करते हैं। स्मरण रहे प्रेमचंद में ही नहीं अन्य कई आधुनिक कहानीकारों में भी इसी प्रकार की भाषा-शैली दृष्टिगोचर होती है, देखिए—

“मैं तो अपने कटे, मातृकार को अपने दिनभर और किमान को अपने लह लहाते श्रेत देखकर जो आनन्द आता है वही आनन्द चाचा भारती को अपना घोड़ा देखकर आता था। मगधमजन से जो समय बचता, वह घोड़े को अपर्श हा जाता।”

—हार की जीत सुदर्शन

भार भी—

“मंत्रिमंडल के सभी सदस्य एक से नहीं थे। यही तो मुसीबत थी, नहीं तो मित्राने के व्यापारियों का काम मिलनों में बन जाता। देश के स्वतंत्र होने का पही तो अर्थ था कि देशी उद्योग बंधे पनपें। पर यहाँ तो लाग समयक ही नहीं थे।

—खिलाती कारपोरेशन मन्मथनाथ गुप्त

भार भी—

“इसलिए उसने और मौलाना ने ग्लास टकराप और अपने मुँह से लाग लिया। एक घूँट गले के नीचे उतारते हुए बोले—‘मैं अपमान कभी इकट्ठे नहीं करता। मेरे अपमाने कपूर के बच्चे हैं जिन्हें मैं शिखाता और कहता हूँ—आ कपूर के बच्चे। उड़ जाओ और वे उड़ आते हैं।’

इस उपमा की मैंने बहुत प्रशंसा की। मध पृष्ठा का उम समय मेरे मन में आधुनिकी के सापेक्षवाद का मिश्रात स्पष्ट हो गया था। हर वस्तु का कुछ न कुछ संबंध अवश्य है अपमाने का कपूर के बच्चे से, दुराचरित्र नारी की भुक्तान का गन्दी नाली में फूटते हुए कुलकुले से, मीर की पहली किरण का अँगड़ाइ लेती दीपार म, नधसग हमन का परस्ये से—

—नये देवता देवेंद्र मन्यार्थी

यद्यपि गमीर और परिष्कृत भाषा-शैली पर कुछ विचारक कृत्रिमता का आरोप लगाते हैं परंतु कथा-वस्तु में आकर्षण और पात्रों के चरित्र-चित्रण में वास्तविकता लाने के लिए गमीर और परिष्कृत भाषा-शैली अत्यंत उपयुक्त होती है क्योंकि उसमें से एक ऐसी सुमधुर स्वर लहरी नि सत होती है जो कि पाठकों को जो अपनी भार शीघ्र ही आकर्षित कर लेती है। देखिए—

“महेन्द्र सोचने लाग कि उसने जोधन में कितनी ही मियों को विभिन्न रूपों तथा विविध परिस्थितियों में देखा, पर आज का यह कितकृत माधुर्य या अनुभव इसे क्यों ऐसा अपूर्व तथा अनुपम लग रहा है ? वह सोच ही रहा था कि फिर उस विरवविजयिनी ने अपनी सुन्दर विभिन्न आँसों को रहस्यमयी उन्मुकता से भी

स्विर दृष्टि से उसकी ओर देख्या। वह मन ही मन उसे संघोषित करते हुए कहने लगा--“पिर अज्ञाता, पिर अपरिचिता देखी। तुम मुझसे क्या चाहती हो! तुम्हारी इस मर्म-भेदनी दृष्टि का क्या अर्थ है।”

—रेल की बात इलाचन्द्र जोशी

और भी —

‘आनन्द ने आँखें मूँद ली, धार जैसे किसी विभीषिक की कल्पना स काँप गया। उफ, मध्य मानव ने क्या बना दिया है उस पिर रहस्यमयी विभूति को जिसे हम जीवन कहते आए हैं। नगरों की सुरक्षितता और अधिक व्यवस्था में सँभ होकर इसने इरवर प्रदत्त आश्रित और अभ्यवस्था से वचना पाहा है, जो कि वास्तव में जीवन की परिवर्तनशील और निरन्तर आगे ही आगे बढ़ती रहने वाली प्रवृत्तमान विविधता है, मध्यमार्थे आई है इरवर के नाम पर इन्होंने नगर यसायें है मनुष्यों के मारों मारी संपठन जुटाये हैं धार अंत में इतनी भीड़ कर बी है कि वह बिचार इरवर ही घटिच्छत हो गया है—

—बंदों का मुद्दा, लुवा के रई अमेय

अर्धकृत लम्बम भाषा शैली के उदाहरण हिंदी कहानियों में अधिक नहीं मिलते क्योंकि लम्बम भाषा में कभी कभी कृत्रिमता भी आ जाती है लेकिन प्रसाद जी की ऐतिहासिक कहानियों में अत्यंत उमका सफलता के साथ प्रयोग हो मरा है। साथ ही इस प्रकार की भाषा शरी द्वारा कतिपय कुराल पढ़ाने लेखकों ने कभी

१ बगिच—

‘दो तीन पैगार् भात पर कानी पुनपिया के मधीन माटी ओर कानी बरौतियों का पल पनी धारम म मिया रूच पाती भवें ओर मागा-गुट क मोच हयकी हयकी हयियापी उग तापमो के गोरे रई पर मबन अभिभ्यस्ति की प्ररणा प्रगट करती थी।

चौरन बाराय म कती दित मरना है? मबार का दुःख पूर्ण ममनकर ही तो वह मंच की वरम में आई थी। उसके आगापूर्ण हयप पर कितनी ही टोरटें मगी थी। तब भी चौरन ने माव न छोड़ा। मित्रकी बनकर भी वह दानि न पा मगी थी। बद् बार अयमन अपीर थी।

चैत की अमावस्या का प्रभात का। अरवतब बृध की विट्टी नी गट्टइ डारों ओर तन पर ताअ जगन कामन पतिनी निरुता आई थी। उन पर प्रभात की किरने पडकर मोन मोट हा जानो थी। इतनी सिनय वरगा उग्न कही मिया थी।

मुबापा मोच गी थी। धार अमावस्या है। अमावस्या तो उसके हयप में मरने के ही अंधकार मर ली थी। दिन का आशोक उमने तिण मगी के बगबर मा। बर अवन विगुमन बिचार को छाडकर नहीं भाग जाय। मित्रागिया का गड और अनेनी हिनो! उसकी आँखें बर थी।

—अरव अमावस्य प्रभात

कभी सु दर भाव चित्र अंकित करते हुए कई मनोवैज्ञानिक तथ्य भी प्रस्तुत किए हैं ।^१ वस्तुतः पात्रों उनके कार्यों अथवा घटनाओं का विवरण करते समय माध्याम्य शब्दावली के स्थान पर अश्लेषाओं, उपमाओं, उदाहरणों, मुहावरों लोकोक्तियों और अनुप्रासों के प्रयोग से वास्तविकता भी आ जाती है तथा चित्रण भी सुदृश्याम्य प्रतीत होता है ।^२ इतना ही नहीं व्यक्ति चित्र में कलात्मकता खाने के हेतु भी प्रायः इस प्रकार की कुछ योजना की जाती है कि न केवल चित्रण में अलंकारिकता ही

१ पंथ को वे निम्नांकित उद्धरण में उपमा द्वारा ही मनोवैज्ञानिक तथ्य प्रस्तुत किए हैं—

“घठीम क मुख की हूँवी कटी हुई पतंग की तरह, हृदय की शेर स अलग हो होठों पर बन्दर जाती हई जैसे बहों की बही नि म्पल हा गई ।

—अबपुल्ल मुनिदानन्द पंत

इसी प्रकार निम्नांकित उद्धरण में भी उपमाओं की श्रृंग बर्णनीय है—

“पानों की मोल रैखाओ को संगार मे नीचू की तरह बूम कर टबा-मेडा बिकुल कर दिया है । दुल मे काटे हुए राठ दिन के रोप बिहूँ की तरह बसेम ब्याह सुफद बनी राड़ी-पूछों मे जिहूँ हफने मे एक बार बनाने की भी नीचत नही धाठी तम भासइ सात के फुल को मुका कर कीनों की साड़ी से भर लिया है । दुर्भाग्य मे स्त्रोण दीक मुकः भागबों की तरह निकुड़े हुए मात पर मही बिन्ता की रेखाएँ पड़ गई हैं । मोल मुस्रावें हुए आठों के रोनों और नाक मे मिनी हुई वो सपनीयों ने अत बाहा खाना न मिलने के कारण अनाबदवक मुख को रोनों भाग मे हा दो बेंरों मे बल कर दिया है । मुख का रंग बूप मे बलकर बाभा पड गया है और बसका प्रत्यक बसें बबू मूरी के खाने की तरह बोकलाप में बककर कूप गया है । रोड़े की तरह गले में अन्की हुई हड्डी मांस के मुख खाने मे बाहर निकल आई है ।

—दानबाला मुनिदानन्द पंत

२ व्यात्मक और अजनात्मक भाषा-शैली का एक उदाहरण है—

जैसा के रूप आशिर्य को बसना करता हा ता उपा की प्रकल्प आशिर्य की बसना होशिए जब नीपगमन स्वर्ण प्रकाम मे रचित हा जाता है । बहार की बसना होशिए जब बाग में रंग रंब के कुल बिबल है और कुलकुल पाती है । लना के रूप आशिर्य की बसना करती ओ तो बंदी की बसना अशिर्य की बसना होशिए वा निगा की निस्तरपना में अँटों की बरनों में बसनी हुई पुनाई देतो है ।

—शैला : प्रमचन्द

इसी प्रकार मुहावरों और लोकोक्तियों के पून भाषा-शैली का एक उदाहरण देना—

“ये तद्वतवार नहीं हैं । हा मड़बपन के कई बाग पदरू छोड़ी पर मका हुआ है । मरी हैना दो बनी गम चीरे प्रकारे निग संवार मरी से । मेरी तो काब ही निबल गी ।

दृष्टिगोचर हो अपितु माय ही वह स्वाभाविक भी प्रताप हो।^१ जहाँ कि चित्रण में मर्मस्पर्शिता लाने के हेतु सुन्दर सुन्दर राष्ट्रवाक्सी का प्रयोग किया जाता है^२ वहाँ साय ही भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए भी कुराज कहानीकार राष्ट्र

सवार तो हुआ पर बोटियाँ काँच रही थी। मैंने बेहरे पर निकल न पड़न दिया। बोट को ईश्वरी के पीछे डाल दिया। क्षरित मह हुई कि ईश्वरी ने घाड़े को टैज न किया बल्कि घायर हाथ पाँव तुड़बाकर सीरता। समझ है ईश्वरी न समझ लिया हा कि यह दिन पानी में है।”

—गंगा प्रसन्न

१ देखिए—

“बेसा साँवरी थी। जसे पावस की मैत्रमासा में छिद्र हुए आमोक रिड का प्रकाश निगलने की अवस्था भेष्टा कर रहा हो जैसे ही जमका योपन मुनसिध शरीर के भीतर उडमित हो रहा था। गामी क स्नेह की मरिच से उसकी कजराती बाँगे मापी से भरी रफनी। वह जलती तो बिरबनी हुई बाँगे कलनी तो हुगनी हुई। एक मिडान उसने पागे और बिबरी रहती।”

—गुरदास जयसकर प्रसार

और भी—

‘माद पहसा ही अवसर था जब उसने बेगन कम्पूरी और अम्बर न बना हुआ योवनपूर्ण उडमित मानिगत पाया। उपर क्रिष्ण भी एवन के मोटे के साथ निमनवा की द्विवाकर पुनरर पड़ी। मूरी वाम्मीर की बनी थी। निवरी क मरुवा में इमटे कासक बरगों की मृयवना प्रसिद्ध थी। उन कनिचा का माधोर मररर आनी भीमा से मजत रहा था।

—जरी जयसकर प्रसार

२ देखिए—

“मोभीमहप के एक बमने में मयासान उड रग था और उसकी गनी हुई तिडकी के पास बगी हुई मनोमा राग का मोदय निहार रही थी। गूडे हुए बाव उसकी टिगोरी रग की मोडनी पर भेद रहे थे। बिफन के नाम की मखा और मानियों से नुँची हुई क्रिगोरी रंग की मोडनी पर बगी हुई बामगाव की कुनों और पनी की बमरपटी पर अदूर से बगबन बरे मोडियों की मगा मस रही थी। मपीया का रद भी मानी के ममान था। उसकी देर की गान निगनी थी। ममममर के ममान तीनों म बगी क नाम के उड पर य बिन पर रा हीरे पर पर बमक रहे थे।

—गुरदास के नामे कर्तु मारी गबना जगुमेन मानी

बोझना में पूर्ण स्तब्धता धरते हैं। अपनी एक कहानी में श्री गोविंदवल्लभ पंत ने मात्र विशेष से यह न कहला कर कि उसकी प्रेमिका ने उससे कभी भी संभाषण नहीं किया शब्दों का एक सुन्दर चित्र ही उपस्थित कर दिया है। और उसी प्रकार उन्होंने एक दूसरी कहानी में प्रतीहारत नायिका द्वारा एक वर्ष न कहलाकर विविध श्रुतियों के ध्यापारों का सौंदर्यमय भाषा में वर्णन कर हृद्युक्त भावनाओं का सरस चित्रण किया है।^१ इसमें कोई संदेह नहीं कि इस प्रकार के वर्णन कहानी की

१ देखिए—

‘अभिमान ? स्त्री का क्या अभिमान ? और अगर करे ही तो कनिष्ठा के जो उलटबिगलानो होती है। वह तो सबसे बड़ी भी कबन उतरदायिनी। हीनी के हाठ एक बिरुप की हूँनी से झूटित हो गए। युद्ध की सघाति क इन तीन बार बर्षों में कितने ही अपरिचित केहरे देखे वे मनोसे क्या उस्तिसित उद्यवासित कोमुप गर्बित यापक पाप मङ्गलित बर्ष स्वीत-मुहाएँ और वह जानती थी कि इन केहुरों और मुहाओ के साथ उसके पति की कई स्त्रियों के मुझ-जुझ तुल्य और असाति बासना और बरना आश्राया और मताप उमम गए। यहाँ तक कि बहों के बातावरण में एक पराया और दूयित तनाम आ गया था।

—हीनी बोन की बचलें बस्य

२ ‘मैं बाणी को मुझने के लिए बड़ा ही उत्सुक था किन्तु वह परायण—नहीं नहीं मुझने की प्रतिमा-कभी बोभी ही नहीं।

मैंने बड़ बड़ उपाय किए, उसका अर्थों से मुझकाम निकली पक्ष नहीं निकल बिना देखा सगीत नहीं मुना भाव पिका अब नहीं भाया मैंने नेत्र हल हलप हुए, काम अतृप्त ही रहे। कभी-कभी मैंने बचलप मुझसे कामाप्सुमी कर कहने सगे—‘तू बहुरा ता नहीं है?’

—बूठा नाम गाविंदवल्लभ पंत

३ ‘भारत गया विगिर गया हेमंत गया किन्तु उपयुक्त नहीं आया। कामबरता मे कई बार अभपूर्व प्रतीला थी किन्तु वह नहीं आया। उसने मनेज बार शृंगार किया मर ध्वर्य हुआ।

मुझने, मुझने और मंत्रीवनी को लेकर बगल खुदु कई दिन भी बहुरा जाया। हेमने-हेमने अबधि बीतने का आई पर उपयुक्त नहीं आया। कामबरता अतृप्त अर्थात् भागों से उग कभी न जानेवाले को यह देखनी पड़ी। मर जाए, जी नहीं आया बहुरा एक उपयुक्त था।

अबधि के बीतने में दो घड़ीने रहे—एक महीना रहा। मया के पाप-निबाम में उगा हुआ पवित्र बर्ष जाते को नैपारी करने मता। अपने विगिर का कबल बर्ष पर इतल मिया था, हेमंत का बिष्णु बर्ष मिया था बर्ष के पुण-अन्व मंभाय मिए थ घोम का

दृष्टिगोचर हो अपितु साथ ही वह स्थानाधिक भी प्रतीत हो।^१ जहाँ कि चित्रण में मर्मस्पर्शिता लाने के हेतु सुन्दर सुपर शब्दावली का प्रयोग किया जाता है^२ वहाँ साथ ही भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए भी कुराह कहानीकार शब्द

सवार हो हुआ पर बोटिंग काँप रही थी। मैंने बेहूरे पर सिक्का न चढ़ने दिया। पांडु का ईश्वरी के पीछे बाल दिया। खरियत यह हुई कि ईश्वरी ने भोज को ठेक न किया करना सायब हाथ पाँव तुड़काकर मोटवा। संभव है ईश्वरी ने समझ लिया हो कि यह फ़िलने पानी में है।”

—नया प्रेमचन्द

१ देखिए—

“बेला घोबरी थी। जने पास की मेकमाला में छिपे हुए आभाक विर का प्रकाश निराले की बदल्य बेप्टा कर रहा हो जैसे ही उसका पीकन सुगठित शरीर के नीतर उदमित हो रहा था। जामी के स्नेह की मरिच से उसकी कजरागी झोंकें पाली से घरी रहनी। यह चमकी लो बिरकती हुई, बार्त करती लो हँकती हुई। एक मिळम उनके बार्तें लीर बिलगी रहती।

—इन्द्रबाबु बपगाकर 'प्रनाद'

और भी—

‘आब बहला ही अबनर था जब उसने नेगर क्यूरी और अम्बर से बसा हुआ पीकनपूर्ण उदमित आकितन पाया। ऊपर किरनों भी पवन के झोके क साथ निमलमों की हिलाकर चुसकर पड़ीं। लूरी कामीर की कमी थी। सिकरी क महलों में इसके कोमल बरनों को नृत्यकथा प्रविष्ट थी। उम कदिका का आयोद मररर जपनी लीला से मचप रहा था।”

—मुरी बपमकर 'प्रनाद'

२ देखिए—

‘मोलीमहल के एक कमरे में सम्राजम बस रहा था और उसके लकी हुई लिनकी के पास बैठी हुई मन्मोमा राज का मोहर्य निहार रही था। लुने हुए बाल उसकी फिरीरी रंग की ओइनी पर लेक रहे थे। सिक्का के काम की सरी और मोतियों में लुकी हुई सिरोमी रंग की ओइनी बर कगी हुई कामलाब की कुर्वी और पगों की कपलपेटी पर संकूरक बराबर बड़ मोतियों को पाया लूम रहती थी। मन्मोमा का रंग भी मोली के समान था। उसकी देह की गड्ढ लिनकी थी। मन्मररर के समान पगों में बरी के काम के लुने पड़ से लिन पर हा हीरे मर मर चमक रहे थे।

—बुबुबा में कामे कट्टे मोदी मजनी चनुमेज शास्त्री

पात्रना में पूरा सतकता करते हैं।^१ अपनी एक कहानी में भी गोबिंदचल्लभ पंत ने पात्र विशेष से यह न कहला कर कि उसकी पेमिष्ठा ने हमने कभी भी संभाषण नहीं किया शब्दों का एक सुन्दर चित्र ही उपस्थित कर दिया है^२ और उसी प्रकार उन्होंने एक दूसरी कहानी में प्रतीक्षारत नायिका द्वारा एक वर्ष न कहलाकर विविध श्रुतियों के आधारों का सौंदर्यमय भाषा में वर्णन कर इदगन भावनाओं का मरस चित्रण किया है।^३ हमने कोई संदेह नहीं कि इस प्रकार के वर्णन कहानी की

१ देखा—

‘अभिमान ? शो का क्या अभिमान ? और खर बने ही तो कनिष्ठा के जो उत्तराधिकारिणी होती है। वह तो सबसे बड़ी भी करन उत्तरदायिनी। हीली के हाठ एक चित्र की हुंसी से कृत्रिम हो यय। मुझ की अशक्ति के इन तीन बार वर्षों में कितन ही अपरिचित बेहरे देवे के अगोके रूप उल्लिखित उल्लासित सोमूप गर्भित माचक पाप संकुचित र्व स्वीत-मुखाए और वह जानती थी कि इन बेहरों और मुझाओं के साथ उसके गति की कई स्थियों के मुझ-मुझ तृप्ति और अघाति कामना और करना साफाया और संताप उमस पा। यही ठक कि वही के बातावरण में एक परामा और इविन तनाव आ गया था।’

—श्रीमती बोन की बसमें अज्ञेय

२ ‘मैं बागी को मुझे के लिए बड़ा ही उत्सुक था किन्तु वह पापात—नहीं नहीं मुवर्ष की प्रतिमा कभी बागी हो नहीं।

मैंने वह बड़ उपाय किए, उमक मचरों में मुमकान निकली घण्ट नहीं निकल बिना देखा संधीत नहीं गुता भाव मिला जय नहीं भाषा मेरे नेत्र कुल रूप हुए, काम अनूठ ही रहे। कभी-कभी मेरे बचकप मुमसे कामाजूमी का कहल मग—‘तू बहल ता नहीं है?’

—शुद्ध आम गोबिंदचल्लभ पंत

३ ‘मरक गया विगिर क्या हेमंत गया किन्तु उपगुण नहीं भाषा। कामचरता के कई बार प्रथपुत्र प्रतीता की किन्तु वह नहीं भाषा। उमने अनेक बार गुंगार किया मर घ्यवे हुआ।

मुमस, मुपान्धि और मंत्रीवणी का लेखन बहुत अनु जान् फिर् भी वह न भाषा। देवने-देवने अक्षयि बीउने की आई पर उपगुण नहीं भाषा। कामचरता अनूठ प्रभात भागों में उम कभी न जानेबाद की गई दपत्री र्दी। मर बाए, जो नहीं भाषा वह एक उरगुण था।

अक्षयि के बीउने में दो महीने रहे—एक महीना रहा। संसार के पाष-निचाय में उरग हुआ अक्षयि बर्य जान की मीवारी करने गया। उमने विगिर का कथन बय पर जान लिया था, हेमंत का बिम्बर बाब मिया का बर्यन क पुण-अरुत्र संभाष विग प घोष्य का

सुन्दरता में वृद्धि करते हैं और उससे उसका कला पक्ष भी निस्सरा हुआ प्रतीत होता है परन्तु आधारयकता से अधिक उपमाओं अलंकारों और मुहावरों के प्रयोग से भाषा भारयन्त भी हो सकती है तथा उसकी स्वामाधिकता भी नष्ट हो जाती है।^१ लेकिन कुराह कहानीकार इनके प्रयोग में सर्वदा सतर्क रहता है और कभी कभी छोटा हास्य रस की कथाओं में भी इनका प्रयोग होता है। 'बनारसी पक्का' शीर्षक उसकी एक कहानी में उपमाओं का संयोजन यही सुन्दर ढंग से हुआ है।^२ यद्यपि विचारकों ने कहानी की भाषा को पात्रानुकूल और प्रसंगानुरूप होना आवश्यक समझा है परन्तु ये अर्थ में इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अन्य प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग कम से कम किया जाय।

भाषा-शैली पर विचार करते समय हमें कहानी निमाण की विभिन्न प्रणालियों पर भी विचार करना होगा क्योंकि कहानी-लेखन की विविध शैलियाँ प्रचलित हैं जिनमें से लेखक अपनी रुचि या विषय के अनुकूल किसी भी प्रणाली

छाटा हाथ में आता पाँव में लिया जा बर्षा का रिक्त मोटा और डोर से लिया जा उसने क्यों ही अपनी अंतिम वस्तु सरल की चाँदनी को समेटने के लिए हाथ बड़ाया क्योंकि वासववता ने विकृत होकर कहा क्या सच मेरा प्रियतम इस भास नहीं आवेया ?

— मिसस मुहूर्त पांडित्यल्लम पन्न

१ देखिए—

हृदय की उत्पन्न भूमि में अभिभाषा और भाषा की पपकती हुई चिता के आगोह न गत भीषम की पुर्ब स्मृति प्रम पुत्र की भाँति मृष्टहाम कर रही है। मैं देख रहा हूँ महस्त बुद्धिक दान के मध्य में तीव्र मर के अयंकर जमाए में पीरव मरक की बपकनी हुई ज्वाला से स्थित होकर मैं दुर्भाग्य के किमी अत्रय एवं अचिरय विधान से भीषित रहकर इस पंचाधिक मृत्यु को देख रहा हूँ।

पदम निकल बंड़ीप्रसाद 'हृदयज'

२ देखिए—

मातारण पक्क के छोडे भारतीय दखिता के आगम है या यों कहिए कि मात्र कम के स्त्रुओं और कालिजों क अथिकांश विद्यायियों की जनती-किरती बीड़ती तमबीरें हैं -- -- -- यह मजनु की तमबीर है। पयलो की हृदिकवा ऐमी बुद्धिगोचर हाती है जैसे एकम-रे का चित्र। हाँकने की गति हिंदी के कहानी लेखकों की पहाइय की संख्या से कम न होगी। मोटार्ड इन पीर लुरंतों की ऐसी हाती है कि भारपयं होना है कि इनकी कमर स कवि और गायर अपनी भाषिकाओं की कमर को उपमा न बकर इपर उबर क्या घटवते रहें ? इनका मारा धरीर ऐगा सचकता है जैसे अपनी कानून विचार बाहे उपमा भाइ सो।

— बनारसी लका देवब बगाग्गी

को प्रशंस कर सकता है। स्मरण रहे कि कहानी के लिए न तो कोई ऐसा नियम ही प्रबलित है कि वह अमुक शैली में ही लिखी जाय और न यही आवश्यक है कि प्रत्येक कहानीकार किसी एक विशिष्ट शैली में ही रचना करे तथा साथ ही हम यह भी देखते हैं कि कभी-कभी कुछ कहानीकार अन्य सभी शैलियों का समन्वय कर अपनी कहानियों का सृजन करते हैं कहा जाता है कि इस प्रकार की मिश्रित शैली में लिखी गई कहानियों में कहानीकार को यह स्वतंत्रता रहती है कि वह अपनी कहानी में प्रभावोत्पादकता, चरित्र-चित्रण और विग्लेषण आदि के लिए उन सभी प्रणालियों का सदुपयोग करता है जिनसे कि हमकी कृति में सम्यक् बिकाम और व्यापकता सी आ जाती है। इस प्रकार की मिश्रित प्रणाली की कहानियों में जैनेन्द्र की एक रात अरक की पिबरा और अक्षय की ध्याया उल्लेखनीय हैं। इन मिश्रित प्रणाली की कहानियों के साथ-साथ कहानी के शिल्प विधान में नए-नए प्रयोग भी किए जाते हैं और नई पीढ़ी के कुछ कहानीकारों ने जो सर्वथा नए ढंग की कहानियाँ भी लिखी हैं। श्री यादवैन्द्र शर्मा 'चंद्र' की कहानी 'शुक बोला' का ऐकनिक निस्संदेह हिंदी कथा साहित्य में मर्बाया नवीन है। उन्होंने अपनी कथा का प्रारंभ इस प्रकार किया है—

"एक राजा के दरबार में हीरामन सोता था। वह सिंहल द्वीप से मीपण संग्राम के पराजित जाया गया था क्योंकि सिंहल द्वीप पर राजा स्वयं उस गुणी और चतुर शुक को सहाय में नहीं देना चाहता था। कुछ भी हो, आर्यावर्त के प्रतापी राजा के समक्ष सिंहल द्वीप को पराजित होना पड़ा और हीरामन प्राप्त कर लिया गया।

शने शने राजा और शुक में इतनी सारी आत्मीयता हो गई जितनी राजा मरत और दिरण में थी। राजा एक क्षण भी उस शुक का वियोग नहीं सहन कर सकता था और शुक भी उसके अनुराग के कारण अपने अतीत को भूल गया था। यह स्वयं भी राजा से इस तरह पुल्ल-भिल्ल गया था जैसे प्राण शरीर से।

एक दिन सम्पूर्ण दरबार लगा था—उम दरबार के बीच राजा ने शुक से पूछा 'क्यों हीरामन हमारी मृत्यु हो गई तब ?'

हीरामन ने गंभीर स्वर में कहा 'मृत्यु निश्चय है पर वियोग नहीं। वियोग का दातण दुःख में कहाँ सहन नहीं कर सकता।'

फिर ?'

'यदि आपका स्वर्गवास मुझसे पूर्व हुआ तो मैं भी अपने प्राण त्याग दूँगा मैं आपके विना एक पल भी नहीं रह सकता।'

राजा और ममस्त दरबारी हीरामन के इस कथन पर बड़े प्रमत्त हुए। उन्होंने हीरामन की अत्यन्त प्रशंसा की कि वह पड़ा ही स्वाभिमन्य है।

संजोग की यात कहिए कि राजा का देहान्त दुःख के पूर्व ही हो गया। इस सहाप को सहन नहीं कर सका। वह राजा की क्षारा पर निरन्तर मंझरावा और अंत में मर गया।

स्वर्ग में अप्सराओं के मध्य उन दोनों का पुनः मिलन हुआ। राजा विलास-प्रपृति दिन प्रति दिन बढ़ती गई। होरामन का कार्य था—उन अप्सर का मनोरंजन करना। बप पर वर्ष बीत गए।

अप्सरारों दुःख से नाराज होकर बोली 'हम तुम से ऊब गई हैं। एक क्यार्य, एक-सा कथानक और एक सा परिणाम। यदि तुम में कुछ नयापन नहीं वय हमें कहानियों मत सुनाया करो।

अप्सरारों के इस कथन का सुन तथा राजा से भी उपेक्षित हो दुःख कहीं म जाता हे तथा पौंचवें दिन पुनः लौटता हे। उसकी अनुपस्थिति में अप्सराएँ उस बहुत याद करती हैं और मन ही मन उसरी प्रशंसा करती हैं। उसके बापम लौ पर राजा और उसके मध्य इस प्रकार यातायात होता हे—

'राजा ने हेरती से पूछा क्यों इतने दिन कहीं रह ?'

दुःख ने उत्तर दिया 'सुस्तु लोक में ?'

अप्सरारों के कान लड़ ही गए।

'वहाँ क्यों गए थे ?'

'आपके बिना कुछ नया जाने के लिए ?'

'क्या लाग ?'

'महाराज मृत्युसाक की दशा अच्छी नहीं हे। वहाँ घम की जगह वार्दी। बोलबाला हे। साम्यवाद, समाजवाद, पूँजीवाद, गांधीवाद, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, हातावाद, पत्नीवाद और न जाने क्या क्या वाद ? पर मैं आपको का की एक क्या सुनाऊँगा। यह क्या पूँजीवादी व्यवस्था में प्रेम के नये रूप ? प्रतिनिधित्व करती हे। नई टेक्निक में, हात्साकि में टेक्निक का मतलब ना समझता, लिखी गई हे।'

दुःख ने राजा को जो कहानी सुनाइ यह इस प्रकार हे—

कथानक : मैबर जाल ~

एक लड़का हे 'क' उसकी परती हे 'ख'। हा की एक सहेली हे मिम 'ग' बचसर पाकर 'ग' 'क' का अपने प्रेम जाल में फँसा लेती हे। 'क' गरीबा से तंग हे उनका प्रेम प्लेटानिक नहीं, इस मिट्टी में पला प्यार हे। दोनों अपने-अपने घरों : बहाने बनाकर भागत हे और हम होते हे। कभी-कभी विपुल क्लाम के मागर :

आकृत हुआ क' अघानक पृथ्वी है— डियर, हमारे प्रेम का परिणाम ? 'ग' उत्तर देती है, तुम बड़े फायर हा, कल की आज बिता करते हो ?'

पहला घुमाव असली कहानी —

स्वल्प के हाथ काँप रहे थे, जैसे उसके दोनों हाथों को लकवा मार गया हा । बसने अपनी बड़ी मुश्किल से अपनी दिल्ली निवासिनी पत्नी चन्दा की चिट्ठी खोली थीर वह उसे दुबारा पढ़ने लगा—

'पूमन्वेव । पत्र आपका मिला । मर बहुत खेज है । ऐस महसूस होता है कि भयानक ताप से मेरा तनाम शरीर मुन्मस जायगा । मुन्मस जाने दो इस पीड़ा से मृत्यु बहुत अच्छी है । मैं अपने हृदय में खोमल भावनाएँ और अचूरी अभिलाषाएँ लिए मर जाना पसंद करूँगी यदि आप जीवन-दीप धुन्ने के पुर्य अपना दर्शन दें तो ! आपका गुलाब-ना बेहरा आज रह-रह कर मेरे आगे घूम रहा है । मोह के बंधन टूटने के लिए फसमसा रह है । बिचित्र अनुभूति अन्तर में है, जिसे मैं बखान नहीं कर सकती । फिर भी आपने प्रार्थना है कि पत्र पढ़ने ही आप दिल्ली खाना हो जाइए । आपकी देर यहाँ धैरेरा कर दीगी ।

—आपकी अपनी-चन्दा'

स्वल्प किंकृतम्यविमूह-सा खड़ा रहा । उसके आगे चन्दा का फुराकाय रूप और पाएदुर मुन्म नाप उठा । चन्दा की फोन्टरशापिनी आँखों में जीवन थीर मृत्यु का करुणा-प्रभावित मन्व । दुःख-प्रनाओं ने उस वाचाल पना दिया । ललाट पर स्नेह फण उभर आय ।

उत्तम म अपने पत्नी के पादकर यह कुर्सी पर बैठ गया । चिट्ठी को मेज पर रख कर अपने आप को धारण करता हुआ बोला—'फैमी है यह अनहोनी । कल मर में बिनकून स्वस्थ और आज मरणामत । आश्चर्य ' उमक विचारों ने उसे धैय दिया यह सब भाग्य के खेल है ।

अपम्यारित उमकी दृष्टि चिट्ठी के दूर और गद । उमने चन्दा म पढ़ा । नेत्रों में अथानि धमक उठी । अवरों पर आशा भरी मुग्धान नाच गद । मता न मानियों जन शब्दों में लिखा था - 'स्वल्पभी म पढ़कर अवराने की जहरत नहीं । यह तो आपकी क्या 'मुक्ति' का अज्ञान का एक अंश है । यह कहानी मुझे पढ़म प्रिय होगी । आप नारी के अन्तर में किमना पेश कर विन्यत हैं । अमग म पत्र लिगे । पेश—

—अनेकलता

स्वल्प के हाथों पर भेदभरी मुग्धान नाच उठी । उमने मर को मूम लिया । दूसरा घुमाव का गरुदियों —

घोंसों में आश्चर्य भर कर स्नेहलता ने पूछा, 'देखो चंदा इन मकड़ियों ने कैसे सुन्दर जाल बना है।'

पनिष्ट सहेलियों चंदा और स्नेहलता के देखते-देखते दो मकड़ियों ने एक अत्यंत बज्जारमक जाल बना लिया था।

चंदा अपनी गमीर दृष्टि को लता पर गाड़ती हुई बोली 'श्रेम और संगठन का यही फल होता है। उसने लता के गाल पर अपनी तर्जनी से हल्की चोट की और मुस्कराई 'यदि तुम्हारा असीम स्नेह मुझ पर नहीं होता तो इस परदेश में मेरी कौन देख-भाल करता ? तुम्हारे प्यार ने मुझे नया जीवन दिया है। मैं तुम्हारा किम मुँह में छुड़िया अदा करूँ ?'

'छि पगली इसमें शुकिया अदा करने की क्या बात है ! तुम तो मेरी सगी बहिन-मो ही !'

तभी चंदा की दृष्टि उस जाल की ओर गई। जाल पर कोई तीसरी मकड़ी नाच रही थी। चंदा ने उसे सकेत करके पूछा 'यह तीसरी मकड़ी कौन है ?'

लता कृत्रिम गुस्से से बोली 'मैं इन मकड़ियों के खानदान को नहीं जानती।'

चंदा तीसरी मोटी मकड़ी को देखती रही। पहले की बड़ी मकड़ी ने मोटी मकड़ी का स्वागत किया। चंदा ने उद्वेगपूर्वक कहा, 'यह तीसरी भी मकड़ी ही है और ये पहले वाले अक्षर भिर्यो चीवी होंगे।'

लता चीक पड़ी। 'भिर्यो-चीवी ?'

और देखते-देखते बड़ी ने सारा खाला तोड़ दिया क्योंकि आगन्तुक मकड़ी से इसका पति प्यार करने लगा। बड़ी मकड़ी अपनी उपेक्षा सह नहीं सकी। दोनों में द्वन्द्व-मुझ प्रारम्भ हो गया। जाल टूट गया। श्रेज एतम हो गया।

लता बोली 'प्यार में म्यवत्रता होनी ही चाहिए।'

चंदा इसे अब मरी दृष्टि से देखती रही।

मकड़ा कल और मूँछें —

इंग्लैंड रिन्ड कर्नल बाबा अपनी मूँछों पर ताज देते हुए लता के कमरे में घुसे। लता अपने 'बाग' वालों में कंधी कर रही थी। अपने श्वेत, संगमरमर-मे चहरे पर पाउडर लगाकर उसने एक धार अपने रूप को स्वयं निहार। उसके अशरीर पर मंद स्मित रेखाएँ नाथी।

लता लता " कल बाबा उसके समीप आये। अपने चार्प हाथ की अंगुलियों को उसके काला में घुसाकर बोले, 'बिबी, यह बन्दो हमने आखिर इसे मार ही दिया।'

शौंशे में मेरी मकड़ी का प्रतिविम्ब देखकर लता एक बार चिड़क पड़ी। ठाणू चाचा की ओर उमुख होकर थोड़ी, 'आप यह कृष्ण हैं 'अंकल'। इस प्रकार किसी को नहीं मारना चाहिये।'

'क्यों तुम नहीं खानती लता, यह कन्वसल मेरी मूँछों पर नाचने लगा मूँछों पर कर्नल की मूँछों पर, "धीर बह भी तुम्हारी आटी" के मामले। इसने हमारा पढ़ा मजाक बनाया। कहने लगी, देखा यह छाटा मा मकड़ा भी आपकी मूँछों पर नाचता है ? मैं उसके अय्यम को समझ गया और श्रेय में आकर इसे मकड़े देवन भेज दिया। "लता ! यह एक कर्नल की मूँछें हैं। मेरी मूँछों में खेकने वालों को मैं गोली नहीं मार दूँगा ? शूट नहीं कर दूँगा ? " एक नहीं पूरी पाँच गोली मारूँगा। मेरी मूँछें 'डार्लिंग' यह मेरी मूँछें हैं कर्नलम विरहम् ।'

कर्नल बहुत उलझे हुए हो गये।

लता मयमौव सी अपने अंकल का देखने लगी। 'अंकल' ने और से अट्टहाम करके कहा, 'बुर रही हो डार्लिंग ! मत बगें, यह तो मकड़ा है, मकड़ा.....लो इसे फेंक आता हूँ।'

कर्नल ने मकड़े की दरयात्रि के बाहर आकर फेंक दिया।

पापस आकर ये थोड़ी, पाँच पक्ष रहा है लता पदा आज पापम राजम्यान आ रही है। क्या वह अपने पति में नहीं मिलेगी।'

'नहीं उसकी छुट्टियाँ समाप्त हो गई हैं।'

'ओह, " " अकृष्ण " । कर्नल चाचा चले गये।

लता के मास्तिष्क में ये शब्द गूँजते रहे—कर्नल, मूँछें मकड़ा, गोली और पाँच गोली ...

यह पमीने से तरपतर हो गई। उसका 'मैकअप' न्यराप हा गया।

तरपूत्र, पाहू और प्लेगानिच लब -

पंदा के जाने के बाद लता अपने को कुछ दुर्बल समझने लगी। स्वरूप के पत्र धराधर आ रहे थे। ये प्रेम पत्र उसे व्यथित कर रहे थे। आज भी एक पत्र आया था। स्वरूप में लिखा था - लता तुमसे मिलकर मेरी आत्मा कर्त्ताकिक आनन्द का अनुभव करेगी। कृपया पताभी पत्रों, कप और फेंके भिजा जाये।

अपने आधुनिक पदों की आरामदेह मयमली शाय्या पर पड़ी-पड़ी लता करवते पहल रही थी। बार-बार वह अपना मुँह लकिये में दिपा लेती थी। उसके

समीप एक मासिक पत्र पढ़ा था। उसमें लता की एक कहानी 'अंगारे' छपी थी। यह कहानी स्वरूप ने संशोधित करके प्रसारित करवाई थी। कहानी में एक विषम का चित्रण था। प्रेम का विवेचन था। प्रेम— "हाँ लता भी स्वरूप से प्रेम कर लगी है। वह एक बार उस पुरुष को अवश्य क्षमगी जो इतने प्यारे पत्र लिख करता है।

'मिस सादिया—यह तरबूज।' नौकर ने उसका ध्यान मंग किया।

'रख दो। लता ने कहा और नाश्त चला गया।

लता मारी मन त्रिप उठी। वेसा कि नाश्त तरबूज की फाँकों के साथ था। सो रख गया है। अणु भर कं जिये उसका पार गम ही गया कि यह कैसा गया। कि जरा भी समीप नहीं। मैं पाषा से कहकर इस 'बिमभिम' करवा दूँगी। कच नक यह शान्त हा गई। उसे स्वरूप के शब्द याद हो आए "द्वैतक-द्वय-नयनी सा प्रेमल और कहला पा अवतार होता है। वह सागर-मा रंभीर और हिमाल सा शीतल होता है। उसे बहकने मत दो भिये।" यह निरपव हो गई। यंत्रण वह चापू से फाटी हुई बड़ी फाँकों का छाँटे टुकड़ों में परिणत करने लगा। कच कर यह उन्हें एक एक करके खाने लगी। विचारों की गन्धवता के कारण इतने हाय का तरबूज गिरकर चाकू पर जा गिरा। टुकड़ा फिर कच गया।

वह बड़बड़ा उठी— 'चापू तरबूज पर गिरे तो तरबूज फटे'— तरबूज चापू पर गिरे तो तरबूज फटे— पर कीज योज अज भी कचम है। यीम कभी नहीं कचवा।" "लता मुत और रंभीर। कुछ देर बाद वह उठल कर बोली, 'यीम कभी नारा की नही प्राप्त होता आत्मा कभी नहीं मरती। आत्मा आत्मिक प्रेम ...? मैं स्वरूप से आत्मिक प्रेम करूँगी। आत्मिक प्यार महान प्रेम। आदरामव। लता के मन में आत्मिक प्रेम की किरणों विकीरन हीकर प्रकारा-पुं ज में परिणत हो गई।

उतने स्वरूप को तुरन्त पर लिखा— 'तुम अमुन दिन अमुक गाड़ी में जा जाओ।

प्रथम प्राप्ते मसिद्ध पाठ —

स्वरूप दिल्ली रहना हुआ। दिल्ली स्टेशन पर लता अपसुखता में स्वरूप की प्रतीक्षा कर रही थी। बार-बार वह अपने हँस प्रेम से स्वरूप का चित्र निकाल कर देख रही थी।

गाड़ी आद।

लता ने देखा-एक अत्यंत सुवसूत नौजवान की गाड़ी-नीले जामे क शीरों में भौंभनी धौंभे किमी को गोज रही है। वह भीरे भीरे सशक्ति दृष्टि पाठों और

दिल्ली उसके समीप गई। पीछे में अनजान बन कर अपने मृत्युलक्ष्य में पुकारा—
'स्वरूप !'

स्वरूप तुरन्त सता की ओर घूमा। उसके मुँह में चलचित्र के हीरो की भाँति
दृढ़ते शब्द निकलें— 'डि...यर...सता...' वह उसे देखता रहा—अपलक और
निरन्तर।

'बलिय...बलिय !'

धुली नै स्वामान उठाया। वे दोनों साथ-साथ चले।

'हेलो सता ! तुम कहाँ ? 'अंकल' कहाँ से कलात्र में इसी की तरह आ
टपके।

वह पचरा गई। बोलती 'ओह, बहिन जी मजे में हैं। आप पिछी लिखें तो
मेरा भी नमस्ते कह दीजिएगा !'

स्वरूप हेरान, परेशान और बिभूह।

'बलिय बाबा जी !' सता बली गई। स्वरूप तुरन्त समझ गया। नाटक,
विलेन के प्रवेश पर हीरोइन का सकल अभिनय। सता बाबा की 'अफ़र की तिम्गी'
दिखा कर लौट आई। पचराई हुई आकर धोली 'गजब हा जाता स्वरूप यदि
बाबा तुम्हें पदचान लेते तो पटा अनर्थ हो जाता। वड़े आर्योडाफ़स हैं। बिलायत
से क्या छीट आए अब उन्हें कृता भी बिलायती ही पमन्द है। चलो, अब
जन्दी चरो।

रुस्मी में घेडे। टैक्सी बली।

स्वरूप सता के अद्भुत मौन्दर्य पर मुग्ध हो गया।

अजीब लड़की से मत —

'ऐसा हमें छोड़ नहीं भिजा, जिसे हम प्रेम कर सकें !'

'युसुर्गें पठते हैं गाने पर तो प्रभु भी मिल सकते हैं !'

'मुझ तो नहीं भिजा !'

'ऐसा न कहिये, हम शक्य-रपामता भूमि पर एक-एक-से विशाल दिल लिये
घेठ हैं !'

मुझे काह पमन्द नहीं आया। आ पमन्द आप वे पहले म ही पंगण्ट
हैं। ये अपने प्यार में फँस नहीं सकते।

प्रभात का समय।

स्वरूप सता की एक नेपासिन सहमी म घातानाप कर रहा था। वह नेपास
के उच्च घराने से सम्बन्धित थी। मन्गीती थी, मदेदार थी मुझे दिल बानी थी।

समीप एक मामिक पत्र पठा था। उसमें लता की एक कहानी 'अंगारे छपी थी। यह कहानी स्वरूप ने संशोधित करके प्रकाशित करवाई थी। कहानी में एक विषय का चित्रण था। प्रेम का विषयन था। प्रेम— "हैं लता भी स्वरूप में प्रेम करने लगी है। वह एक बार उम पुरुष को अवरय देगी जो इतने प्यारे पत्र लिखा करता है।

'मिस साहिबा—वह तरबूज।' नाकर न उसका ध्यान मंग किया।

'रुख दी।' लता ने कहा और नाकर चला गया।

लता मारी मन ब्रिये उठी। देखा कि नाकर तरबूज की फाँटों के साथ बाहू भी रख गया है। एक भर के लिये उसका पारा गम हो गया कि यह क्या गया है कि पारा भी तमीज नहीं। म बाबा से कहकर इस 'दिसमिस फरवा हूँगी। अन्धानक वह शान्त हो गई। उसे स्वरूप के शब्द याद हो आए। "लैत्यक-इत्य-नबनीत सा अमल प्यार फरवा का अवतार होता है। वह सागर-मा गंभीर और हिमालय सा शोतल होता है। उमे बढ़ने से दो प्रिये।" वह निरपल हो गई। यंत्रण वह बाहू से फाटी हुई वड़ी फाँटों का छोटे टुकड़ों में परिणत करने लगा। फाट कर वह उन्हें एक एक करके थाने लगी। विचारों की तन्मयता के कारण उसके हाथ का तरबूज गिरकर बाहू पर जा गिरा। टुकड़ा फिर बट गया।

वह यंत्रणा उठी— 'बाहू तरबूज पर गिरे ता तरबूज फटे—' तरबूज बाहू पर गिरे तो तरबूज फटे— पर बीज— बीज अप भी फायम है। बीज कभी नहीं फटा।' लता घुस और गंभीर। कुछ देर बाद वह उदल कर बोली 'बीज कभी नारा को नहीं प्राप्त होता आत्मा कभी नहीं मरगी। आत्मा आत्मिक प्रेम—' में स्वरूप से आत्मिक प्रेम फरवागी। आत्मिक प्यार— "महान प्रेम। आदरामय। लता के मन में आत्मिक प्रेम की किरणें विकीर्ण होकर प्रफरा-पुंज में परिणत हो गई।

उमने स्वरूप को सुगन्त पत्र लिखा— 'तुम अमुक दिन, अमुक गात्री मे जा जाओ।

प्रथम प्राम मसिहा पाठ —

स्वरूप दिल्ली रहना हुआ। दिल्ली स्टेशन पर लता आकुलता में स्वरूप की प्रतीक्षा कर रही थी। बार-बार वह अपने हेड-बैग से स्वरूप का चित्र निकाल कर देख रही थी।

गात्री आई।

लता ने देखा—अत्यंत खूबसूरत नाजवान की गहर-नीले बगम के शीरों में गंधकी धूम्रें किसी को गोज रही हैं। वह धीरे धीरे सराफित दृष्टि पारों और

हैलवी इसके समीप गई। पीछे से अनजान वन कर अपने मृदुल स्वर में पुकारा—
‘स्वरूप !’

स्वरूप तुरन्त लता की ओर भूमा। उसके मुँह से पल्लवित्र के हीरो की मॉनि
टूटत शब्द निकले—‘बि... यर... लता...’ वह उस श्रेयता रहा—अपलक आर
निरन्तर।

‘बलिप... बलिप !’

कुली ने मामान उठाया। वे दोनों साथ-साथ बसे।

‘हैलो लता ! तुम कहाँ ? ‘अच्छा’ कहाँ से कवाच में हरी की तरह आ
रूपके।

वह पयरा गई। बोली ‘ओह, बहिन जी मझे में हैं। आप थिटी किल्लें वो
मेरा भी नमस्के कह हीमिपगा।’

स्वरूप हेरान, परेशान और विमूढ़।

‘बलिप चाचा जी !’ लता बोली गई। स्वरूप तुरन्त समझ गया। नाटक,
विलेन के प्रवेश पर हीरोइन का मफत अभिनय। लता चाचा का ‘अफरु की विमी’
दिला कर लौट आई। पयराई हुई थाकर बोली ‘गमय हा जाता स्वरूप यदि
चाचा तुम्हें पदधान सेते तो वडा अनर्थ हो जाता। यड़े आर्योंशकम हैं। विलायत
स फया लौट आए अब उई कुत्ता मो बिलायती ही पमन्द हैं। चलो, अब
जल्दी चरो।’

टीकनो में पीटे। टीकनो बली।

स्वरूप लता के अद्भुत मीन्दर्य पर मुग्ध हो गया।

अजीब सङ्घर्ष म भर—

‘येसा हमें काइ नहा मिला, जिसे हम प्रम कर सकें।’

‘मुजुर्ग कहते हैं गोजने पर तो प्रभु भी मिल मरने हैं।’

‘मुफ ता नही मिला।’

‘येसा न कहिए, इस रातव-रवामला भूमि पर एक-एक-में विशाल दिल लिये
पीठे हैं।’

‘मुझे कोई पमन्द नही आया। जी पमन्द आए, ये पहले म ही ‘तंगट
हैं। ये अपने प्यार में कैम नही मरने।’

प्रभाव का समय।

स्वरूप लता की एक नेपात्रिन सहमी से बालांनाप कर रहा था। वह नेपाल
के उच्च घराने से सम्बन्धित थी। सभोनी थी, मशेदार थी मुझे दिल बाम्नी थी।

स्वरूप से खुद घुलमिल गई थी। सदा ने श्री स्वरूप को कहा था कि यह नेपालिन ही हमारे सभी व्यापारों को जानती है।

यहाँ सदा सवेरे नी बसे आती थीर राम को छः बडे तक सैठ जाती थी। इस बीच ये रामांस को लेकर मधुर कल्पनाओं के विमान बना करते थे। घरती पर खड़े होकर चौद-सितारों और प्रकृति के नजारों में अपने प्रेम आदिमन प्यार की पवित्रता के दर्शन करते थे।

सात दिन बीत गये।

इन सात दिनों में अतृप्ति का माया स्वरूप दुख-मर भी मो नहीं सक्र। वह बेचैन हा उठा। वह इस रात पर सदा के साथ कदापि नहीं रह सकता।

आठवें दिन नेपालिन सदाकी ने उसकी स्थिति को देखकर कहा 'स्वरूप जी! आप व्यर्थ सिर का दर्द खरीद रहे हैं। रेगिस्तान में गुलाब की तम्बीद करना निरी मूर्खता है।

स्वरूप चिन्तित हो गया।

मगरमच्छ की तस्वीर —

कनक के कमरे में एक बड़ी मगरमच्छ की तस्वीर थी। यह तस्वीर कनक अपनी अमेज पत्नी 'प्रेटीफेरा' के कहने पर उसे क्लियायल से खरीद कर लाया था। आज कनक की बीबी को न माहूम क्यों श्रेय आ गया कि उसने मगरमच्छ की तस्वीर को गोली मार दी।

गोली की आवाज सुन कर सदा दौड़ी दौड़ी आई 'क्या हुआ आंगी?'

वह आवेश में बोली 'गोली मार दी तुम्हारे 'बकल' - नहीं नहीं इम मगरमच्छ को!'

'क्यों?' सदा समझ गई—आंटी के अन्तस की पूछा को।

'बड़ा खतरनाक है। कहता है कि मैं इसी तरह अपने अतीत आदमियों को ह्या जाता हूँ। यह मुझे ह्या गया। मेरी अजानी को ह्या गया। गासों की आली और आँसों की बमक को ह्या गया। अम दूसरे पर ताक लगाए बैठे हैं। जालिम पूत, पोसेबास।' आंटी का मारा बदन कोप रहा था।

'हासिंग मुझे मत रोच्ये, मैं इमे एक गोली और मारूंगी।' आंटी ने विनीत स्वर में कहा।

'पागल हो गई हो आंटी। यह तस्वीर है, मगरमच्छ की एक खूबमूरत तस्वीर।' सदा ने समझाया।

'खूबमूरत।' आंटी बय्या से अभिमूत होकर बड़बड़ाई, 'यह मगर

सूखसूखी को इस प्रकार बरबाद करता है, जिस प्रकार वीमरु लकड़ी को। इसने मेरे माथ घोसा किया। मैं इसे मारूंगी, जरूर मारूंगी "फड़ फड़ फड़ फड़" में याद कर रही हूँ।

लता ने मन ही मन कहा, 'बेबकूफ औरत !

पैनेनिक रूप की हत्या —

स्वरूप।

'मधुर प्रेम के आदिमक अतीतिक्रम आनन्द को तबपती मिहरन में यदि तुम्हें जीवन भर बतलना स्वीकार नहीं है तो मैं उस आदिमक प्रेम की हत्या करने की तैयार हूँ। स्वरूप, तुम मेरे माथी सुन्दर स्पन्द हो, मधिरूप हो सर्वस्व हो। आज मैं बहुत बेचैन हूँ इसकी बेचैन जितनी 'रोमियो' के लिए 'जूलियट'। लेकिन मेरे पाषाण वड़े भोंपोंडाफ्त हैं, अतः हमारा मिलन संस्कार से दूर— "प्रेममय में। यम पत्र पढ़ते ही सुरन्त आ जाओ।'

— लता

स्वरूप और लता को महामिलन हुआ। इधर-उधर। प्रकृति की सुरम्य गीत में। पर्वत की शीतल छाया में। यहाँ-यहाँ और जहाँ-जहाँ।

एक दिन के बाद फिर वियोग हो गया। अत्यन्त पीड़ा जनक और अमर।

अन्य समय लता ने कहा था, 'पत्र अन्तर लिखना, प्रिय लता करके सम्बोधित करना और 'तुम्हारी अपनी पन्ना' फड़ फड़ समाप्त करना। 'अन्त' समझेंगे स्वतन्त्र का है।'

महिला की दशा में -

सोनी के प्रेम में अपना अतिम विलीन करने वाला महिला 'पिनाप के दिनारे अपनी प्रेमिका की याद में इतना तन्मय और बेसुच हो गया था कि इसे यह भी पता नहीं चला कि यह कहीं और किस हाल में है ? सुनते हैं कि एक बार सोनी ने आने में देर कर दी तो इसने अपने हाथ के पाकू में अपनी जीप को पीर खाला। प्रेम की इस परम सीमा पर किम पत्थर दिज इन्सान का दिल नहीं पिचकेगा ?

स्वरूप पर भी बड़ी तन्मयता व्याप्त थी। यह दुष्कर का कार्य करते करते 'पना-सना' निगने लग गया था। लता के साथ कविता भी प्रारम्भ हुई। परिणाम यह निकला कि प्रेम-रम-हीन मालिक ने उसे हार दिया।

किर क्या था ?

इसने सुरन्त इन्तोज लिख कर दे दिया— 'मैं किसी का पैसा गुनाम नहीं हूँ जो मित्रिणी मुन्। आप अपनी नैररी सम्मानित।'

उसी दिन इसने लता को अपनी स्थिति से अवगत कर दिया।

चाँधे दिन लता द्वारा भेजा गया दो सी रुपय का गनीभाँवर आया। नीच लिखा था—‘तुम ही तो सब कुछ हैं, तुम नहीं सो कुछ नहीं।’

स्वरूप अहम् से दहाक उठा ‘ऐसी नाँकरियों लता किन्तनी ही खरीद सकता है। इंग्लैंड रिटायर कर्नल जमींदार मि० भट्टाचार्य की भतीजी है वह। इफ्तखारी भतीजी।’

सुरासखरी:—

लता की चिट्ठी आई थी। उसने लिखा था—‘स्वरूप ! हमारे-मुम्हारे मिलन पर जो नया धीव पनपा, उसे मैंने डॉक्टर पद्मानी की सदायता से बड़ी आमाती से नष्ट कर दिया है। यह तुम्हारे लिए सुरासखरी है क्योंकि यदि अफज को इस भेद का पता चल जाता तो वे तुम्हें गोली से मार देते क्योंकि आदर्यन वे पूरा भी विलायती ही पसन्द करते हैं।’

तुमने लिखा कि इस विवाह कर लें ? यह संभव नहीं है ? फिर विवाह छोड़ खली नहीं ? चन्दा बुरी लड़की नहीं, इस पर यह मेरी सक्ति है। फिर कर्नल चापा और गोली।

‘और, रुपय भेज रही हूँ। जरूरत हो तो फिर भेगा लेना, लेकिन अभी दिहनी मत आना।’

दुम्हारी—लता

केशों की महफ. जीवन का मो-पर्य —

स्वरूप का पारा गर्म हो गया। इस प्रकार वह बस विवाह से क्यों तस रकी है ? वाद में चंदा मान जाएगी। भारतीय स्त्रियों की मौति उम अन्त में समझते का ही महारा खेना पड़ेगा। वह आज दिल्ली जरूर जाएगा। लता से कहेगा कि यदि वह उसे सच्चा प्यार करती है तो क्यों नहीं इन मूले धमधनों को तोड़ कर मुक्त हो जाती।

‘मैं तुम्हारे बिना एक पल भी जीवित नहीं रह सकता। दिल की हर सौंस में तुम यम गइ हो। तुम्हारे खिनरण वाले आदर्य केशों की महफ ही मेरे जीवन का माधुर्य और सौन्दर्य है।’ यह वैयेंती में अपने आप से कह रहा था— ‘मैं किमो भी अघरोय को सहन नहीं कर सकता। मपनु की मौति ‘लला को किसी भी सूत में शामिल करूँगा—मर कर भी या जीकर भी।’

यह दिल्ली रथाना हो गया।

अन चिट्ठिया उड़ गई—

केपार ‘क’ श्जारों इग्मीहें लेकर दिल्ली पहुँचा। उस नयाकिन लुटकी म पता चला कि ‘ग’ तो आज विलायत जा रही है। ‘क’ पापला-मा पराडोम

पहुँचा। उसका रोम-रोम पुकार रहा था। लेकिन भयमे पहले वहाँ उसे खं
दिल्ललाई पडी। यह सुन्न हा गया। 'क' मन्ला पडा 'यह यहाँ कसे आगई ?'
'य' ने अपने पति अ प्रमन्नता मे प्रगाढ़ आलिंगन में ले लिया।

तभी 'ग' वहाँ अ पहुँची। मुसुन्टा अर बोली, 'जरा शरम करो भाई,
इगलंपड तो मैं आ रही हूँ।'

'अ के नेत्र मुक गये।

'ग' सौहमिस्त स्वर में बोली, 'दियर ख इन महान लखक भीमान 'अ
को प्यार से रक्ता और भिस्तर 'क' अप भी हमारी 'ख' को पलकों की रानी बना
अर रलियेगा। यह हमारी सदासे प्रिय सहेली हूँ। अब लीन्ने पर ही मेट होगी।
अच्छा, केअर बैन, न टा।

एन उठा।

'ख' ने वाद में कहा—'ग' किननी अच्छी महली हूँ। मुने अपनी विदाई
पर सार देकर युलाया भगवान उसे जीवन में सफल करे।'

'क' 'य' के शब्दों को नहीं सुन सका। यह क्रोध प्रतिहिंसा विदराता
और वेदना से तिलमिला रहा था। प्लेन आठारा में पंथ फैलाण पंखी की तरह उड़
रहा था।'

अपनी कहानी का अन्त स्वयं कहानीकार ने इस प्रकार किया है—

"गुरु ने पूछा—'यनाइ' महाराज यह कहानी चापचा कमी लगी।

बीच में ही अपसठपै बोल उठी—'बहुत सुन्दर। पिलकृत नई। क्या इस
प्रकार पुस्तों को इल्लू बनाकर औरों मसन रह सकनी हूँ। तय तो पूँ चीवादी युग
में ही जाना चाहिये।'

राजा अधिकार पूर्ण स्वर में बोला—'लेकिन मैं तुम सदाको वहाँ जाने की
आहा नहीं दे सकता। क्यों गुरु, इमका अंत तो घुस ही हुष्य होगा।'

गुरु ने कहा—'मदव को जानने के लिये जिज्ञासु बन जाइए, ग' का
परिणाम क्या होता है?'

पर कर गुरु उदास हा गया।'

यद्यपि विषयों की दृष्टि से कहानी में कोई विचार नयीनता नहीं है लेकिन
शिल्प-विधान का नूतनता के स्तरण ही वह पाठकों को अपनी ओर आकृष्य कर लेती
है और द्विती कथा-माहिर्य में अद्वितीय नयीन प्रयोगों की भीभी दिग्गम के
उदय म ही उदयण विराद हाते हुए भी हमने उय यहाँ उदघन किया है।

मिथिन शक्ती को कानिया गया शिल्प विधान की नयीनताओं
के होत हुए भी द्विती कथा-माहिर्य में कहानी लिखने की अगुनात्मक

प्रणाली, आत्म चरित्र प्रणाली, संलाप प्रणाली, पत्रात्मक प्रणाली और बायरी प्रणाली नामक पाँच प्रणालियाँ प्रचलित हैं। डॉ० रामकुमार बर्मा ने इन प्रणालियों की विशिष्टताओं पर प्रकाश डालते हुए एक स्थल पर लिखा है "कहानी लिखने का साधारण ढंग (ऐतिहासिक पद्धति) लेखन शक्ति को बहुत स्पष्टता दे देता है। इसमें विचार बहुत विशद रूप से प्रकाशित किए जा सकते हैं और घटनाओं का वर्णन बड़े स्वतंत्र रूप से हो सकता है। कहानियों में जीवनी और पत्रों का ढंग रोचकता बढ़ाकर पाठकों की सहानुभूति अपनी ओर धर लेता है। ऐसी रचना पाठकों के हृदय को अपने आप आकर पकड़ लेती है और पाठकों का मन पढ़ी तैली के माथ पात्रों और घटनाओं की ओर आकर्षित हो जाता है। किन्तु अंतिम दोनों प्रकार के ढंगों में कुछ दोष अवश्य हैं। जीवनी के समान कहानियों में यह दोष आ सकता है कि सारी कहानी का ज्ञान एक मनुष्य में, जो मैं' रूप में लिखता है, न हो सके। एक पात्र, जिसके साथ कहानी लेखक अपने को मिला देता है कहानी के सभी तत्वों और अंगों पर समान रूप से प्रकाश डालने में असमर्थ हो जाता है। पत्र-रूप में कहानियों का यह दोष हो सकता है कि ये घटनाओं के रूप में बहुत शिथिलता डाल देती हैं। कहानक जिस पैग से बढ़ना चाहता है, उस पैग से वह इसलिये नहीं बढ़ पाता, क्योंकि उस पूरी स्वतंत्रता नहीं मिलती। जिस तरह लखन की लहर स्वार के उतार में दब जाती है, उसी प्रकार घटनाओं का पैग पत्र-रूप में बढ़ने नहीं पाता पत्र में तो जैसे कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को निरख रहा है, पढ़ी पाया जा सकता है। वास्तविक घटनाओं का उतार बढ़ाव आँसुओं के आगे नहीं आता, किन्तु पत्र-लेखक की लेखनी की नोक से टकरा कर गिर पड़ता है। पत्र कहानी की कहानी में जीवन नहीं रहता, वह प्राणहीन होकर लेखनी के पीछे पसिन्दी खसती है।" डॉ० बर्मा के इन विचारों की गीछा करने की अपेक्षा इन या प्रत्येक प्रणाली पर विस्तार के साथ विचार करना अधिक समीचीन समझते हैं।

वर्णनात्मक (Descriptive) शैली को ऐतिहासिक शैली भी कहा जाता तथा यह सबसे मूल और साधारण शैली कही जाती है क्योंकि उसमें लेखक एक इतिहासकार की भाँति संपूर्ण कहानी कहता जाता है। वस्तुतः वर्णनात्मक प्रणाली में कहानीघर पूर्णतः तन्व्य रहकर एक कथावाचक की भाँति संपूर्ण कहानी की सृष्टि करता है अतः कहानी का सूत्राधार स्पष्ट रूप से कहानीकार ही होता है और चूँकि नायकत्व किसी अन्य पुरुष को ही दिया जाता है अतः इस प्रणाली को 'अन्य पुरुषात्मक' शैली भी कहा जाता है। इतिहासकार और कथावाचक की भाँति कहानीघर वर्णनात्मक ढंग से पात्रों तथा घटनाओं की गृहला प्रस्तुत करता है और प्रसंगानुसृत प्रकृति चित्रण, मानसिक अन्तर्दृष्टि, पार्श्व

विषय, भावार्थक घर्षण तथा विश्लेषण क्षेत्रों में स्थान देता है लेकिन स्वयं तो रोड़ में ही रहता है। घर्षणात्मक शैली में कहानीकार को सर्वाधिक स्वतंत्रता और गमता प्राप्त होती है अतः स्यामाधिक ही इस पद्धति का प्रचलन और प्रसार अन्य समस्त प्रणालियों की अपेक्षा अधिक है। देखिए—

‘रज्जुप अपना रोड़गार करके ललितपुर जा रहा था। साथ में स्त्री थी और ठीक में दो तीन सौ की भारी रकम। मार्ग वीहड़ था, और सुनसान। ललितपुर काफी दूर था। बसेरा कहीं न कहीं सेना हो था, इसलिए इसने मड़पुर नामक गाँव में रुक जाने का निश्चय किया। उसकी स्त्री को युत्वार हो आया था, रकम पान में तो और बैलगाड़ी फिराये पर करने में खर्च अधिक पड़ता, इसलिए रज्जुप ने उस ल आराम कर सेना ही ठीक समझा।’

—रारणागत पुन्दावन जाल बमा

गीत भी—

‘आगर कवरी विस्ली घर म किसी से प्रेम करती थी, तो रामू की बहू ने और रामू की बहू घर मर में किसी से पूणा करती थी, तो कवरी विस्ली से। रामू की बहू, जो महीने हुए मायके से प्रथम बार मसुराल आई थी, पति की प्यारी आराधना की दुलारी, चौदह वर्ष की बालिका। भयङ्कर-घर की चामी उसकी करवती में टकने लगी, नौकरों पर उसका हुकम चलने लगा, और रामू की बहू पर मर में ख बूढ़। माम भी ने माला ली और पूजा पाठ में मन लगाया।’

—प्रायश्चित्त भगवतीचरण वर्मा

गीत भी—

‘रेखा की उम्र तीस म अधिक हो चुकी थी। जो बच्चों की माँ थी। अपनी जान में सुखी थी। पति काफी पैदा करते थे। गहने थे। निजी मकान था। कहानी की अपनी तथा पति की। बच्चे स्वस्थ थे। पड़ा बच्चा पिप्या स्तूप में जाता था। छोटा बच्चा हिम्नू अभी पर ही में पड़ता था। रेखा की उच्छ्वासिता म शुभ्य साधारण स्त्री के सुखी रहने के लिये आर किस याव की उत्तरत थी ?’

—मोक्षे का टुकड़ा मन्मथनाथ गुप्त

उपरोक्त अवतरणों का अध्ययन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि कहानीकारों में पात्र विशेष का परिचय देते हुए कहानी प्रारम्भ करने की प्रवृत्ति भी पाई जाती है परन्तु यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि घर्षणात्मक प्रणाली में लिखी गई कहानियों में तो कहानीकार सुरन्त ही मूल पटना म कहानी प्रारम्भ कर देते हैं, जैसे—

‘दोपहर म ही ल्हेनों आर मेड़ों मे लपट-लपट निनका इकट्ठा करना हुआ शाम

उम्बल सुन्दर मुख पर फीकापन आता आ रहा था और एक प्रहार की कृपाता से दृष्टिगोचर होने लग गयी थी । क्षायाएँ एवं अकृषिमा का स्थान धीरे धीरे कृपा लेती आ रही थी ।'

—समभ्रीता गायत्री शर्मा

आत्म-चरित्र प्रणाली के अंतर्गत एक शैली यह भी प्रचलित है कि उस कहानी के विभिन्न पात्र क्रमशः आत्मवर्णन या आप-वीथी सुनावते हैं और इस प्रकार उन सबकी आत्मकथाओं के सम्बन्ध से सम्पूर्ण कहानी अपनी पूर्ण एकसूत्रता के तयार हो जाती है परन्तु इस शैली में दो या तीन से अधिक पात्रों का समावेश होने से कथावस्तु में बिगड़स्रता आ सकती है । विचारकों की दृष्टि में प्रथम पद्धति की अपेक्षा यह अधिक उपयुक्त है क्योंकि उसमें एक मुख्य दोष यह है कि कहानी कहने वाले पात्र के अतिरिक्त अन्य चरित्रों का चित्रण स्वभाविक रीति से नहीं हो सकता अथवा कहानी कहने वाला पात्र अपने भाव, विचार तथा अपने अंतस्त्व की सूत्रात्मिक बातों की अभिव्यक्ति कर सकता है लेकिन अन्य पात्रों के चरित्र चित्रण के सम्बन्ध में उसे यह सुविधा प्राप्त नहीं होती परन्तु इस प्रणाली में यह दोष नहीं देखा पड़ता अतः इसमें यथार्थता का पूर्ण आच्छादन रहता है और चरित्र चित्रण भी सुन्दरतम रूप में दृष्टिगोचर होता है । प्रेमचन्द की 'ब्रह्म का स्वांग', सुदर्शन की 'कवि की स्त्री' अथवा 'चित्रघर की माँ' तथा सुरीला अवस्थी की 'स्वयं का रहस्य' नामक कहानियों इसी प्रणाली में लिखी गई हैं । 'चित्रघर की माँ' में खालचंद अगत चित्रोत्तर और राधरानी, 'कवि की स्त्री' में मत्स्यवान सावित्री और मतिराम तथा 'स्वयं का रहस्य' में बीष्वा चंद्रा और मनीषा नामक तीन-तीन पात्र हैं लेकिन ब्रह्म का स्वांग में केवल दो ही पात्र हैं । इन कहानियों के ये सभी पात्र अपने अपने जीवन की घटनाओं को सुनाते हैं तथा उनके द्वारा कही गई घटनाएँ गृह्यलावद होकर कथानक की पूर्ण बना देती हैं ।

आत्म चरित्र प्रणाली के तीसरे रूप को प्रारण करने वाली कहानियों में कहानीकार स्वयं ही पूर्ण कहानी का घुमन करता है अथवा कहानीकार स्वयं ही कहानी का 'मैं' बन जाता है और अपने ध्यातमापण में कहानी के अन्य पात्रों को सम्मिश्रित कर लेता है । स्मरण रहे कहानीकार को कहानी की गति बढ़ाने में भी पूर्ण सचेष्ट रहना चाहिए और 'मैं' के चरित्र चित्रण के माध्यम-माय अन्य पात्रों के भावों और विचारों के निरीक्षण तथा अभिव्यक्ति की ओर भी ध्यान देना चाहिए । वास्तुतः आत्म चरित्र प्रणालियों के इन तीनों रूपों में अंतिम रूप ही सर्वश्रेष्ठ कहा जाता है तथा आत्म बिदलेपण का अधिक रहनी है और आत्म चरित्र प्रणालियों की विशेषताओं में से एक है ।

“बहुत कुछ निरुद्देश्य घूम चुकने पर हम सड़क के किनारे की एक बेंच पर बैठ गये।

नैनीताल की संध्या घीरे घीरे उतर रही थी। सड़ के रंग से, माप के पादल हमारे सिरों को झूझकर बेरोक घूम रहे थे। हठके प्रकाश और अधिप्यारी से रंगकर कमी नीले वीखते, कमी सफेद और फिर दूर में अरुण पड़ जाते, वे जैसे हमारे माप के लाना चाह रहे थे।”

—अपना अपना भाग्य जैनेन्द्र

और भी—

“जब हम लोग फीरेस्ट के बेंगले पर पहुँचे तो पौष बस गा था। मई की गरमी से वह बैंगला काली तथा वा और साठ मील का सफर तय करने के बाद हम बहुत थक गए थे। हम फीरेस्ट की अपनी निजी सड़क से आए व जहाँ कि शिकार के लाने की मनाही है।”

—सुखताण की आत्मा पहाड़ी

और भी—

“सड़की के सीने-पिरोने, मोहन बनाने तरह-तरह के आचार-मुरख बाल सड़के और विनाइ तथा कमीदाकारी में निपुण होने के प्रमाण क्रमशः मेरे सामने आ गये। सड़की के कोह वास्तिग भाई न होने के कारण उनके पिता को ही यह सब परिषय देना पड़ रहा था। वे निम्न मध्यवर्ग के मलेमानस गृहस्थ थे। यह सब विस्तार-वताते उन्हें जो लज्जा और कुठा घोष हो रही थी वह इतनी तीव्र थी कि स्वयं में भी जो धर बजकर वहाँ अपनी आँखों सप देखने भासने गया था, लाज के भार से नत हो उठा।”

—अच्छा सड़का, अच्छी लड़की : पन्द्रहवाँ सौनरिक्ता

और भी—

“इसने एक नजर मेरी ओर देखा और सौंसने लगा।

उसे ओर की रौंसी आई थी। आया करे। मुझे क्या ? मैं अपनी धुन में व्यो चलता रहा। लेकिन कदम बढ़ाना फटित हो रहा था। उसकी यह विबादपूर्ण दृष्टि मुझे पीछे की ओर खींच रही थी। मैं अधिक देर उसकी उपेक्षा न कर सका। लौटकर उसके पास आया और देखते ही चौंक उठा और विस्मया—प्यारामिह।”

—जिन्दगी की उमंग हंसराज 'रदपर'

और भी—

“हम लोग कुछ ही दिन हुए; अभी इस नये घर में आकर घसे थे। मनेद पत्थर के रसिगनामी इस घर की उम्यल बिनाद अगरी पर गढ़े होकर इरिल ग्यामल बनों के पाग किच्चा के नील घूमिल पघत शिखर वृक्षों से भरी द्यामला तमकनी धार

आकाश-खंड के से छोटे-छोटे अक्षराय चित्रय से साफ दिखालाई पड़ते। यस्. इसी-
लिए यह घर मुझे विशेष पसन्ध आ गया था। हमारी छत अगोस-पड़ोंस के समी
मकानों से ऊँची थी। किसी घर में भोजन करते लोग, तो किसी घर के अंत-पुर की
खिड़की के पास का गृंगार का आला तो किसी के घर के शयन कक्ष की खिड़की के
पास लड़े पर्लंग और शायद किसी बहुत दूर के घर में स्नानघर का अपक्षुआ
परबाजा हम बखूबी देख सकते थे। ऐसी थी हमारी उस ऊँची छत की रोमांटिक
मिथुप्यान।

—वह पत्यार वीरेन्द्रकुमार जैन

संलाप (Conversational) शैली को कथोपकथन प्रणाली भी कहा जाता
है तथा बा० लक्ष्मीनारायण लाल उसे नाटकीय शैली के अंतर्गत ही स्थान देते हैं।
कथोपकथन प्रणाली में कथानक और चरित्र का विकास धार्तालाप के द्वारा किया जाता
है तथा पात्रों के चरित्रिक विकास एवं घटनाओं के क्रमिक प्रवाह के लिए भी यह
पद्धति उपयुक्त सिद्ध होती है परन्तु कहानीकार का इस बात की ओर विशेष
ध्यान देना चाहिए कि सम्पूर्ण कहानी केवल एक ही तन्त्र कथोपकथन में न लिखी
जाय तथा वह वातावरण, दृश्य चित्रण आदि का भी निर्देश करता रहे जिमसे कि
पात्रों का चरित्र स्पष्ट हो सके और कथावस्तु में भी सजीवता आ सके। पद्य से
विज्ञान या कथोपकथन प्रणाली की स्वतंत्र सत्ता ही स्वीकार नहीं करते तथा उसे
बर्तनारम्भ शैली के ही अंतर्गत सम्मिलित कर लेते हैं लेकिन वास्तव में संलाप शैली
को प्रथम प्रणाली ही मानना चाहिए। हिंदी के अधिकांश कहानीकारों को इस पद्धति
के अपनाने में सफलता भी प्राप्त हुई है। उदाहरणार्थ—

“कश्मिष्ण की मौं को कलाई पर बन्धी पड़ी दिखाते हुए निवारण बाबू ने
कहा ‘तैसे अपनी सुपुत्री के सङ्घन, नौ पजने आप और बन्धी तक उसका कहीं कुछ
पता ही नहीं।’ कश्मिष्ण की मौं ने कश्मिष्ण के हिस्से का भाव एक घाली में रखकर
उम पर दूसरी वाली बँधते हुए सहज भाव से कहा—‘अप आठी ही होगी। कहीं सक्की
सहेसियों में बैठ गई होगी। आखिर इतने आधीर क्यों हो रहे हो।’

‘हाँ बैठ गई होगी सक्की सहेसियों में।’ जरा ध्वंग्य न निवारण बाबू ने
कहा—‘मुझे तो आतप्य इसके रंग-रंग अच्छे नहीं लखर आते? तुम्हीं ने राह
दे-देकर हम सिर पर चढ़ाया है। अप देखना इसके फलस्य।’

‘करतब क्या देखूंगी।’ जरा मल्लकार कश्मिष्ण की मौं ने कहा—‘तुम अब-
तब यह क्या पकने लगते हो। अगर ऐसा ही था, तो पहले उसे पढ़ाया क्यों।
बाहर घूमने फिरने की आज्ञाही क्यों दी? शर्म नहीं आती तुम्हें अपनी ही मङ्गी
के बारे में ऐसी घामें पठते?’

—अपना राज मोहनसिंह मेहर

जैसा कि अभी-अभी हम लिये चुके हैं विचारक सनाप-शैली को नाटकीय शैली के अंतर्गत ही स्थान देते हैं अब इस कथापक्यनात्मक प्रणाली के अतिरिक्त एक अन्य प्रकार की पद्धति भी कहानीकारों द्वारा प्रयुक्त की जाती है जिसका कि शिल्प-विधान बहुत कुछ एकाकी नाटकों के रूप-विधान के अनु रूप ही होता है। परन्तु यह प्रणाली आधुनिक कहानी-कला की है और इसका प्रचलन भी अभी अभी हाल में ही होना प्रारंभ हुआ है। 'अज्ञेय' के 'अयदोल' नामक कहानी-समूह में 'अधिप्रिया' और 'धर्मल' नामक दो कहानियों नाटकीय शैली के अंतर्गत आती हैं परन्तु इनमें से अधिप्रिया तो विशुद्ध एकाकी नाटक प्रणाली में ही लिखी गई है जब इस कहानी कहना उपयुक्त नहीं प्रतीत होता। हाँ 'धर्मल' में अथर्व ही अज्ञेय ने शिल्प-विधान की दृष्टि से नया प्रयोग किया है और उसमें कहानी तथा एकाकी नाटक दोनों के तत्वों का आरंभक सादृश्य रूप देने के फलस्वरूप संस्था एक नई कथायत्सु अथर्वरित हुई है। नाटकीय शैली का यह उदाहरण दक्षिण आदि एकाकी नाटक और कहानी दोनों का सुन्दर समन्वय प्रतीत होता है—

“पति— तो चलो कहीं याग में चलेंगे या यादर सेता की तरफ। आजकल नदी की कंधार पर सरसों खूब फूल रही हैं। बीच बीच में कहीं अमली के नीले फूल—”

नेपथ्य में कहीं धीरे धीरे पदी घोंसुरी बजने लगती है। मानों मृत्ति का जगाती हुई मानों पुछनी धान बुहराती हुई।

१ स्वल्प यह प्रसंग है कि कहानीकारों का कहानियाँ में कथापक्य के लक्ष्य नाटकीय मकैत भी लिए गए हैं परन्तु इन नाटकीय सन्तों के याग में कथा का सोरप नष्ट हो जाता है। उदाहरणार्थ प्रसंग की एक कहानी का यह अंग दक्षिण—

“धर्मल— हाँ संभव है कि वह तुम्हारा कोई रिश्तदार है।

पृथ्वी—(जोष में) कोई हो यदि वह मेरा भाई ही हो तो भी जीता जमना है।

धर्मल— जैसा भी था।

पृथ्वी— मैंने उस नहीं देखा।

धर्मल— यह तुम्हारे सामने खड़ा है। पर इन्हीं तुम्हें धर्मल भी है।

पृथ्वी—(चक्राकर) व तुम्हें मैं—

अतः जगत्, चक्राकर भाँति निर्दोषता का प्रमाण बनानी में उपयुक्त नहीं प्रतीत होता क्योंकि कहानी अतिरिक्त की बन्नी नहीं है और कथानक कहानीकार तो जगत् प्रकाश के प्रमाण का अर्थहीन ही करता है। इसमें धर्मल भी नहीं कि इन नाटकीय सन्तों के प्रमाण को अर्थहीन नाटकीय शैली में लिखा है कहानियों में अर्थहीन बनाने का है।

स्त्री—(मानो स्वगत) वह कहता था सरनों के फूल में मेरा ही रंग खिलता है। और आम के बौर में—

पति—क्या गुनगुना रही हो, मासती ? तुम्हें याद है उस वार जय में—

स्त्री—क्या ?

पति—'वनो मत ? उस वार जय गाने के बाद तुम आयी ही थी, और मैंने कहा था कि— ...'

स्त्री—(मानों स्वध्व सी और न पसीजती हुई) मुझे कुछ याद नहीं है। मैं तो सोचती हूँ, यह याद भी मर्दों की ईजाद है। उनके लिए मूलना इतना स्वाद सत्य जो है।"

—बसन्त अग्नेय

भर भी—

"मोहन की धाली पर बैठे छोटे राजकुमार ने पूछा, 'मैं बह महल लाल पन्नो का है न ?'

रानी ने कहा—'कान सा महल बैटा ? यह तुम कुछ ला नहीं रहे हो ?

राजकुमार ने कहा—'मैं, सात समुद्र पार जो नीलम के देश की दौगी-ई रानी है। उनका महल लाल पन्नो का तो है न ?'

मैंने कहा—'हाँ बैगा, लाल पन्ने का है और उममें हीरे भी लगे हैं जब बस महल का फर्श—'पर बह कहानी तो रात को होगी। अब तुम लाना लाओ

—राजर्षिक अनेन्द्रकुमार

पत्रात्मक (Epistolatory) प्रणाली में कहानी वार पत्रों के माध्यम से स्पष्ट कहानी की सृष्टि करता है तथा समूची कथा का विकास पत्रों के उत्तरप्रत्युत्तर के रूप में होता है और समी घटनाएँ पत्रों में ही बर्णन की जाती हैं। शैली की दृष्टि से यह प्रणाली आत्मचरित्र शैली के अनुरूप ही है क्योंकि इसमें भी प्रत्येक पात्र अपनी हृदय साधनाओं को ही पत्रों द्वारा प्रकट करता है और इस प्रकार कहानी में संवेद नरीक्षिता तथा मनोवैज्ञानिकता के लिए पर्याप्त स्थान रहना है परन्तु इस प्रणाली में कृदियों का भी सभवा अभाव नहीं है। चूंकि पत्रों में बहुत सी अनावश्यक बातें भी शिष्टाचार के लिए लिखनी पड़ती हैं अतः कि कहानी में कोई प्रत्यक्ष समर्थन नहीं रहता अतः हिंदी कथा-साहित्य में पत्रात्मक शैली के बहुत से ऐसे उदाहरण भी देख पड़ते हैं जो कि कलात्मक दृष्टि से सुन्दर नहीं कहे जा सकते हैं। चूंकि कहानी की

१. कृप उदाहरण देखिए—

"कानपुर

३ १२ २०

प्रथम कृप

तुम्हारा पत्र मिला। पत्र पर तुम्हारे अक्षर देखकर हृदय में प्रसन्नता भी मच गई।

संवेदना विभिन्न पत्रों में लिखती रहती है अतः एकसूत्रता के अभाव में न तो पाठावरण की ही सृष्टि हो पाती है और न पत्रों का आरित्रिक विकास ही संभव रहता है लेकिन

बच्चों की मूर्तियों में मुझे ऐसा जान पड़ा जैसे तुम इस समय भी उस दिन की भाँति बिड़की से झाँक कर मुझे देखना चाहत हो और मैं बाटिका में टहलते-टहलते ज्योंही बिड़की के घामने झाँक तुम्हारी और आँखें सँठाता हूँ तुम मुस्कराकर मुँह फेर लेती हो परन्तु फेर लेने पर भी मैं उसकी अंतिम झाँकी को अपने अंतस्तल में छिपा ही देता हूँ । मुँह फिटाकर उसे तुम मुझसे छीन पोढ़े ही सकती हो... .. ।

—परीला भगवतीप्रसाद बाबुपेयी

और भी—

'गुलमर्ग'

१४ श्रावण

वाई कमल

सुबह नी बने बिस्तर से उठा हूँ, अभी तक नीर की झुमापी नहीं टूटी । कम बहुत दिनों के बाद झुड़सवायी की ची अठ टाँगें कुछ बकी नी प्रतीत होती हैं । आज कही नहीं जाईगा... .. ।

—एक मन्दाह चन्द्रगुण विद्यालकार

और भी—

"२१-८ ३८"

मेरी बुलागी बहन मीना,

ज्येष्ठ ।

तुम्हारा पत्र कम मिला । आखिर तुम अभी तक हाँ उठी न । तुम नहीं समझ सकती कि हम तुम्हारी अजीबता न तुम्हारे पत्र के छन्द छन्द पर एक दुसरे छाया डाल मुझे किम कर परेगान किया है । ऐसा लगता है जैसे तुम मेरी वह चुनचुनी बहन रह ही नहीं गईं नहीं तो हम तरह नये-नूके घरों में मिले न जाने कितनी बातों की कैफियत भर माँगकर पूर हो जानी ? वह हृदय में किमी मयूर स्वप्न की याद भी खुदकियाँ लने वाली तुम्हारी बानें वह मरवा रंभीन फन्नायों की बूँदों से लगे मुस्कराते घरर वह रोम रोम में पुकायी जाई की बयार भी गुरगुरी पंखा बरने वाली तुम्हारी बाउपीठ करने की चुनचुनी पीली । बोझ बहन यह सब तुमने कहाँ गो दिया ? तुम्हारे पिछले पत्र को ही बात कहूँ उस अवस्था में भी बड़ने पढ़ने ऐसा सया था, जैसे मैं तुम्हारे पास पहुँच गई हूँ । तुम कब कह रही हो और तुम्हारे एक वाक्य पर हमने-हमने रिल सोए-सोट हो रहा है, हृदय में छलक का माँगों में प्रमत्ता की बूँदें जमक रही हैं और जमे तम जम बूँदों को पोंटने कह रही हो— बल बल बहन ज्यादा न हमो नहीं पेट डुगने लगेगा । और मेरी हँसी का तार तेरा बँध जाता है जमे अभी टूटने का ही न हो ।"

—नेवा का मूक अंतव्यपार गुल

हमारी दृष्टि में तो पचास सतकता यरवने पर इस शैली में इन दोषों का अभाव ही दृष्टिगोचर होगा तथा कला की प्रमाविष्णुता ही ऐस्य पड़ेगी अतः यह कहना कि "इसमें प्रयोगशीलता और कलात्मक आदर्श ही अधिक है, कहानी की मूल आत्मा अप्रस्तुति ही रह जाता है" पूर्णतः उचित नहीं है। स्मरण रहे पत्रात्मक शैली के भी तीन रूप हमें कथा साहित्य में दृष्टिगोचर होते हैं जिनमें स प्रथम में तो केवल एक ही पात्र के माध्यम से सम्पूर्ण कहानी का निमाण होता है अर्थात् केवल किमी एक ही पात्र विशेष द्वारा पत्र लिखे जाते हैं और उनमें सभी घटनाएँ अंकित रहती हैं, जैस—

‘आरती

५१०-७

प्रिय माइ केराव,

तुम्हारा पत्र दो मास से नहीं आया। मुझे दुःख है। कभी दो पार लाइन वा लिख दिया करो। मैं जानता हूँ, तुम्हें अयकरा नहीं मिलता। तुम दिन रात अपनी धुन में मस्त रहते हो, तुम्हारी सफलता का समाचार मुझे समाचार पत्रों से ज्ञात हो जाता है।

○ ○ ○ ○

आजकल घर में स्त्रियों मुहल अप्रस्तुत हैं। मेरा अपराध यह है कि 'उपर मैंने मंगला' नाम की एक दासी को नियुक्त किया है। उसका चिन्ता इस तरह है—एक दिन संध्या समय मैं बरामदे में बैठा हुआ एक पुस्तक पढ़ रहा था। गंगा ने आकर कहा—सरकार, एक चीरत नीकरी के लिए आई है, उससे किसी ने कह दिया है कि कोठी में एक दासी की जहरत है।

मैंने कहा—तंग न कर, इस समय पढ़ रहा हूँ।

उसकी ओर ध्यान न देकर मैं पढ़ने लगा। पुस्तक की धरक से ध्यान हटा मैंने देखा वह चुपचाप खड़ा है। मैंने समझा इसमें कुछ रहस्य है। मैंने कहा—तू क्यों खड़ा है गंगा ?”

—अपराध विनोदशंकर व्यास

स्मरण रहे कि एक ही पात्र के माध्यम से निर्मित पत्रात्मक प्रणाली की कहानियों के भी दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं और उनमें से एक में तो पत्रों की संख्या एक से अधिक रहती है तथा उन सभी पत्रों का अध्ययन करने पर ही हमें सम्पूर्ण कहानी पर रसा स्थापन हो पाता है लेकिन दूसरे में केवल एक ही पात्र में समूची कहानी फड़ दी जाती है। सुदर्शन की 'अभिधान' नामक कहानी में ग्यारह पत्र हैं और प्रमाद की 'शैवदासी' तथा विनोदशंकर व्यास की 'अपराध' नामक कहानी में भी क्रमशः

पत्रों की संख्या अधिक ही है। इन्में कोई स्थिति नहीं कि पत्रों की संख्या अधिक रहने पर भी कुरास कहानीकार कथा-शिल्प को अक्षुण्ण रखने में पूर्ण समर्थ रहता है लेकिन इधर कतिपय समीक्षकों का यह भी मत है कि शिल्प-विधान की दृष्टि से केवल एक ही पत्र में मन्वृष्ट कहानी को अंकित कर देना अधिक सुन्दर है क्योंकि इस प्रकार एक ही पत्र में कही गई कहानी में अनर्गल प्रलाप या व्यर्थ की समझी का समावेश नहीं हो पाता। प्रसन्नता की बात है कि आधुनिक कथा-साहित्य में इस प्रकार के कुछ सुन्दर उदाहरण भी उपलब्ध होते हैं। एक उदाहरण देखिए—

“उमा प्रिय,

तुम्हें यह खत मैं इलाहाबाद से लिख रहा हूँ, लेकिन यह इलाहाबाद वह नहीं है जिसे तुम जानती हो। वो रोज़ हुए उस इलाहाबाद की सीत हो गयी। मेरे यहाँ पहुँचने के पहले उमरुन खनाजा निकल चुक चुका था।

यह नहीं कि भूखल आया और शहर के सारे मकान बूढ़ पड़े, सड़कें फट गयी और पानी निच्छ आया और जहाँ पहले ठोस घरती थी, वहाँ अब पानी खहरें मारने लगा। नहीं, ऐसा कुछ भी नहीं हुआ, सभी मकान अपनी जगह बदस्तूर अयम है और सड़कें फस्ले को फम करने की कोशिश में शहर के एक सिरे से दूसरे सिर तक दौड़ रही हैं, हस्त-मामूक पैदलचारा, लेकिन फम नहीं कर पाती फमस्ले को ————— ”

—गडालव के पुंशक में अनुतराय

ये पत्र केवल एक ही पत्र द्वारा नहीं लिखे जाते अपितु एक में अधिक और दो या तीन व्यक्तियों द्वारा पत्र प्रस्तुत कराकर कहानी तैयार की जाती है। प्रेमचन्द की ‘दो साक्षियों’ तथा अदक का नरक पर चुनाव’ इसी शैली की कहानियाँ हैं। आत्म परित प्रणाली के दुमरे रूप की रचा करते समय हम उसकी जिन त्रुटियों का उत्प्रेषण कर चुके हैं उनसे इस प्रणाली में भी मतक रहना अत्यन्त आवश्यक है अन्यथा कहानी की फनात्मक नष्ट हो जायेगी। इनके साथ-साथ कुछ ऐसी भी पत्रात्मक कहानियों प्राप्ति होती हैं जिनमें कि कथा-वस्तु का प्रारम्भ और विकास तो पत्रों के माध्यम से ही जाता है लेकिन फ्यानक का अंतिम भाग स्वयं प्रियपत्र विरलेपण और धणों द्वारा ही सम्पन्न जाता है। अजय की ‘मिगनेसर’ तथा धरक की ‘मरीचिका’ इसी शैली की हैं और विचारकों की दृष्टि में प्रमाणात्पादकता, आकर्षण तथा कीर्तुलता इस प्रणाली में लिखी गई कहानियों में अधिक है।

जहाँ कि कुछ समीक्षक बायोरी शैली की पत्रात्मक शैली का दूसरा रूप मानते हैं वहाँ कुछ हम आत्मचरित्र प्रणाली में ही स्थान देना उचित समझते हैं परन्तु विचारपूर्वक देना जाय तो लयरी शैली का भी स्वयं अस्तित्व है। ही इन दोनों प्रणालियों में यह हम दिशा में भावना का अयम्य रचनी है और हम प्रकार पत्रात्मक

प्रणाली की भाँति उसमें बायरी के विभिन्न पृष्ठों के माध्यम से सम्पूर्ण कहानी अंकित की जाती है तथा आत्मचरित शैली की भाँति 'स्व' विवेचन ही उसमें भी रहता है और अतीत का चित्रण पूर्ण अनुमति तथा भावुकता के साथ करते हुए आत्म विस्तोषण एवं मानसिक स्थिति का निरूपण भी सफलता के साथ किया जाता है। श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी की 'अमा' और श्री इलाचन्द्र जोशी की 'मेरी बायरी के दो नीरस पृष्ठ' इस दिशा में अत्यन्त उज्ज्वल रचनाएँ हैं परन्तु हिन्दी में इस प्रणाली का उपयोग बहुत ही कम हुआ है और जब कि हमारी नई पीढ़ी के कुछ लेखकों ने पत्रात्मक शैली को सफलता के साथ अपनाया है तथा कुछ सुन्दर कहानियाँ इस शैली में लिखी भी हैं वहाँ बायरी प्रणाली अभी भी अपेक्षणीय सी पड़ी है। इधर श्री रावी ने तो आधुनिक कथा साहित्य में एक सुन्दर नवीन प्रयोग किया है और 'कैराबुक के पन्ने' नामक कहानी में कैराबुक की टीपनों के रूप में ही सम्पूर्ण कहानी अंकित की है तथा पात्रों के जीवन प्रवाह का मार्मिक चित्रण किया है उदाहरणार्थ—

आय

नाम और विवरण

अर्थ

१—आय आयुतिथि ५-२ ११, महत्त्व संख्या १०

वि० मा० क०

३४-४ मा

बारह दिन से मेरा सुखार नहीं उठर रहा। मेरी तीन दिन की अनुनय-विनय पर पसीज कर मा ने आज मुझे मोतीचूर के दो लड्डू खिला दिये हैं। तीन दिन हुए टोकरी भर लड्डू सन्बूक में झाकर रखे गये हैं। तभी से मेरा इन्हीं पर जो लगा था। इस पर पिता जी ने माँ को बहुत डाँटा है। माँ ने कहा—'मुमते लड्डू के का मन नहीं तोड़ा जाता, उसे कहीं तक तरस्यऊँ। लड्डू नहीं मुकसान करेंगे।' पिता जी ने इस पर भी उन्हें बहुत डाँटा है और वह बहुत रोई है।

०—आय आयुतिथि ५-८ १०, महत्त्व संख्या १०

५-४ १ पंचमा : क्यार

मुझे विरबाम न था, लेकिन पंचमा को पूरा विश्वास था कि मैं अपने बरवाड़े से फेंककर अपना लफड़ी का गेद दूर सामनेपाले पेड़ तक पहुँचा सकता हूँ। उसके हीसमा दिलाने पर मैंने गेद उधर फेंका और वह सधमुप उस पेड़ तक पहुँच गया। अपनी शक्ति के परिषय पर मेरे आनन्द का ठिक्काना न रहा और मैं पंचमा का बहुत कृतज्ञ हुआ।

३—आय आयुतिथि ६ १ २०, महत्त्व संख्या १५

० ४ ४ पिताजी

पिताजी ने मुझे कोठरी में दब कराने की सजा दी थी। रोते रोते मैं भूख कोठरी में सो गया। कियाइ थोलाकर पिता जी ने मुझे छाती से लगाकर बहुत प्यार किया और मेरे भूखे सो आने पर बहुत पछताप। मुझे आज माझम हुआ कि

पिता जी घुरे नहीं हैं और वह मेरी जिद पर ही मुझे सजा देते हैं और फिर भी बराबर प्यार करते रहते हैं।

१—व्यय आयुतियि ७ १० १२, महत्त्व संख्या १

—पंडित रामराम ६ ३ ४

यह मुझे स्कूल में पढ़ाते हैं। यह मुझे बहुत मारते हैं। मैं इनमें बहुत डरता हूँ। कम इन्होंने एक दूसरे लड़के के कसूर पर मुझे मारा था। आज मैंने स्कूल नहीं जाऊँगा और घुप में बैठ बैठकर धुआँक बुला लूँगा। पंडित जी पर आज मुझे बहुत गुस्सा आ रहा है। वह मर जायें तो अच्छा हो।

२—व्यय आयुतियि ७-११ १२, महत्त्व संख्या ३

रामशंकर महापाठी १०

यह बहुत बदमाश लड़का है। मेरी चीजें चुरा लेता है और मूठी शिफायतें करता और पिटावाता है। आज मैंने भी उसको स्लेट चुराकर अपनी बस्ते में रस भी है।

—कैलाशुक के पन्ने राखी

इन उपयुक्त प्रणालियों के अतिरिक्त कहानियों की कुछ अन्य शैलियाँ भी प्रचलित हैं और कुछ कहानियाँ ऐसी भी दीख पड़ती हैं जिनमें कि कोई व्यक्ति मुनाबस्या में अंकित किया जाता है और वह सपने में आ फुट्र देगता है उसे ही कहानी में अंकित किया जाता है। इस प्रकार की कहानी स्वप्न शैली की कहानी कह जाती है। स्मरण रहे स्वप्नदशाक की निरावस्था इस ढंग में दिखाई जाती है कि पाठक को प्रारंभ में उमका पता ही नहीं चलता और जब उमकी पत्नी या कोई पैमा ही ब्याक्ति उम स्वप्नदशाक को जगाता है तभी वह यह जान पाता है कि यह स्वप्न देश रहा था और पाठक भी आगपयान्वित हो यह समझ जाता है कि सम्पूर्ण कहानी स्वप्न शैली में कही गई है। हिंदी में इस प्रकार की कहानियों की संख्या बहुत कम है और अजमेर की 'चिड़ियाघर' में ही इस प्रणाली का उत्कृष्टतम रूप दृष्टिगोचर होता है। 'चिड़ियाघर' कहानी में नायक को चिड़ियाघर देश में भेद रक्षी है जब कि उमकी पत्नी को चिड़ियाघर देशना ही पसन्द है। कहानी बार ने स्वप्न में ही नायक का अपनी पत्नी के माथ विषय होकर चिड़ियाघर जाना और अनुभव की म्पार्यपरायणता के स्वभावों का देगना अंकित किया है। कहानी का रहस्य अंत में तात होता है जब कि उमकी पत्नी उम जगाकर चिड़ियाघर में अपने का प्रभाव करती है।

कहानियों की प्रणालियों पर विचार करते समय ही उन कहानियों पर भी विचार करना होगा जो कि आकार में बहुत ही छोटी होती हैं। इधर कुछ कहानियों ऐसी भी लिखी जा रही हैं जिनका कि आकार बहुत ही छोटा होता है और उन्हें लघु कथा भी कहा जाता है। कुछ विचारकों ने तो लघु कथा और कहानी में विभिन्नता स्थापित करने के प्रयास भी किए हैं परन्तु अभी तक यह सिद्ध नहीं हो सका है कि लघु कथा और कहानी क्या वास्तव में विभिन्न हैं? यदि विचारपूर्वक देखा जाए तो लघु कथा में भी वे ही विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं जो कि कहानियों में देख पड़ती हैं और आकार भेद के अतिरिक्त कोई भी विशिष्ट अन्तर बनमें नहीं देख पड़ता। पाश्चात्य साहित्य में तो इस प्रकार की लघु कहानी कला के कई सुन्दर उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं। और इधर हिन्दी में भी कुछ ऐसी लघुतम कथाएँ देख पड़ती हैं जिनमें कि कथात्मकता और भाषात्मकता का सुन्दर समन्वय है। डॉ० हरिबंशराय 'यक्ष्मन की 'सुभी सुभी नामक निम्नांकित कहानी देखिए—

'सुभी और सुभी में लाग बाट रहती है। सुभी ६ वर्ष की है, सुभी पाँच की। दोनों सगी बहनें हैं। वैसी छोटी सुभी को आप, वैसी ही सुभी को। जैसा गहना सुभी को बने वैसा ही सुभी को। सुभी प में पड़ती थी, सुभी अ में। सुभी ने माना था कि मैं पास हो आऊँगी तो महावीर स्वामी को मिठाई चढ़ाऊँगी। माँ ने उसके जिर मिठाई मँगा दी। सुभी ने उदास होकर घीमे से अपनी माँ स पूछा, 'अम्मा क्या जो फेर हो जाता है वह मिठाई नहीं चढ़ाता?'

इस भोले प्रश्न से माता का हृदय गहगह हो उठ। 'चढ़ाता क्यों नहीं पैसा?'—माँ ने यह कहकर उसे अपने हृदय से लगा लिया। सुभी ने सुभी के चढ़ाने के लिए भी मिठाई मँगा दी।

जिस समय वह मिठाई चढ़ा रही थी, उस समय उसके मुँह पर संताप के चिन्ह थे सुभी के मुख पर ईर्ष्या के माता के मुख पर विनोद के और देवता के मुख पर श्रेय के।'

इधर कतिपय लेखकों ने कुछ कहानियों की 'वैयर्थी स्वरूप' भी कई सुन्दर कहानियाँ लिखी हैं। यों तो इस प्रकार की कहानियाँ हास्यप्रधान कहानियाँ ही कहलाती हैं और इनकी शैली भी प्रायः आत्मपरक या वर्णनात्मक ही होती है परन्तु 'पराधी' का कुछ विचारक स्वतंत्र प्रणाली भी मानते हैं। किसी प्रसिद्ध लेखक

१ विरह की सबसे छोटी कहानी यह बड़ी जाती है—

'दो यात्री साथ साथ रेल के डिब्बे में बठ यात्रा कर रहे थे। बाठबीठ के सिसपिंड में एक ने कहा—'मैं भूतों पर विरवास नहीं करता। दूसरा मुस्करा कर बोले—'अब मुझ पर विरवास हो गया।'

भी कोई प्रसिद्ध कहानी लेकर उस शैली का अनुसरण करते हुए, उसके समानांतर रच कर, हास्य की अवतारणा की जाती है परन्तु यहाँ यह स्मरण रहना चाहिए कि दोनों की कथावस्तु का स्वरूप गति, शैली, वाक्य विन्यास एवं प्रशंसि में समानता होती है भी दोनों की विषयवस्तु में विभिन्नता रहती है। हिंदी में कविताओं और परोक्षी के अवरय कई मफ़्त प्रयोग देख सकते हैं और कहानियों की परोक्षी प्रस्तुत करने की ओर ध्यान नहीं दिया गया। भी शारदाप्रसाद धमा 'भुशुटि' की एक छोटी सी पुस्तक 'चिमिरिखी ने कहा था' अवश्य इस दिशा में उल्लेखनीय है और उसमें उन्होंने कुछ प्रसिद्ध कहानियों की परोक्षी मफ़लता के माय दी है। इसमें कोई संदेह नहीं कि हम विधान की दृष्टि से किन्ती भी कहानी को परोक्षी का रूप प्रदान करना सहल नहीं है और आ भी कलाकार इस दिशा में प्रयास करता है यह निविवाद रूप में धन्यवाद का पात्र है अतः हम भुशुटि जी के इस प्रयासों की प्रशंसा ही करेंगे। यदि हिंदी के अन्य कहानीकार भी इस दिशा में प्रयास करें या निरभय ही कथा साहित्य की अभिवृद्धि होगी लेकिन दुःख है कि स्वयं भुशुटिजी इन दिनों इस दिशा में उदासीन स हैं और 'चिमिरिखी ने कहा था' के पचास उनमें अन्य कोई उल्लेखनीय कृति प्रकाश में नहीं आई। स्मरण रहे 'चिमिरिखी ने कहा था' नामक कहानी गुदेरी जी की प्रसिद्ध कहानी 'उसने कहा था' की मफ़्त परोक्षी है और इसमें कोई संदेह नहीं कि हास्यध्वंग्य की इतनी सुन्दर कलापूर्ण अवतारणा बहुत कम कहानियों में देख सकती है। डॉ० मोलानाय ने तो अपनी 'थीमिस' हिंदी साहित्य (१९२६-१९२६ ई०) में 'उसने कहा था' और 'चिमिरिखी ने कहा था' के कुछ प्रसंगों की तुलना भी की है तथा भुशुटिजी के प्रयोग का पूर्ण मफ़्त माना है, देणिया—

'उसने कहा था'

'यड़े-यड़े राहों के इकठे-गाड़ी वालों की जवान के कौड़ों में जिनसे पीठ झिल गई है और जान ठक पक गर है उनसे हमारी प्रार्थना है कि अनुभवर के पंपूकार्टे वालों की सोखी का मरहम लगावें।'

'चिमिरिखी ने कहा था'

'प्राइमरी मद्रसों के मुदरिनों की जवान के कौड़ों में जिनसे पीठ झिल गई है, और जान ठक पक गये है, उनसे हमारी प्रार्थना है कि विरयविद्यालय के प्रोफेसरों लड़कों तथा लड़कियों की सोखी का मरहम लगावें।'

— — —
'धरे पर पड़ो है ?'

'मगरे में, और धरे ?'

'माने में — पाले कही रहनी है ?'

— — —
'आप फटा पड़नी है ?'

'आइ टी फानिज में, और आप ?'

'यूनिवर्सिटी में ? आप पढो पढी रहनी है ?'

कहानियों की प्रणालियों पर विचार करते समय ही उन कहानियों पर भी विचार करना होगा जो कि आकार में बहुत ही छोटी होती हैं। इधर कुछ कहानियों ऐसी भी लिखी जा रही हैं जिनका कि आकार बहुत ही छोटा होता है और उन्हें लघु कथा भी कहा जाता है। कुछ विचारकों ने तो लघु कथा और कहानी में विभिन्नता स्थापित करने के प्रयास भी किए हैं परन्तु अभी तक यह सिद्ध नहीं हो सका है कि लघु कथा और कहानी क्या वास्तव में विभिन्न हैं? यदि विचारपूर्वक देखा जाए तो लघु कथा और कहानी क्या वास्तव में विभिन्न होती हैं जो कि कहानियों में देख पड़ती हैं और आकार भेद के अतिरिक्त कोई भी विशिष्ट अन्तर उनमें नहीं देख पड़ता। पादशात्य साहित्य में तो इस प्रकार की लघु कहानी कला के कई सुन्दर उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं। और इधर हिन्दी में भी कुछ ऐसी लघुतम कथाएँ देख पड़ती हैं जिनमें कि कलात्मकता और भावात्मकता का सुन्दर समन्वय है। डॉ० हरिबंशराय 'परुषन' की 'शुभी मुभी' नामक निम्नलिखित कहानी देखिए—

'शुभी और मुभी में वाग वाट रखी है। मुभी ६ बरस की है, शुभी पाँच की। दोनों सगी बहनें हैं। जैसी चौकी मुभी को आप, वैसी ही शुभी को। जैसा गहना मुभी को घने वैसा ही शुभी को। मुभी य में पढ़ती थी, शुभी 'अ' में। मुभी ने माना था कि मैं पास हो जाऊँगी तो महावीर स्वामी को मिठाई पकाऊँगी। मैंने उसके बिर मिठाई मंगा दी। शुभी ने उदास होकर घीमे से अपनी माँ न पूजा, 'अम्मा क्या जो क्रोध हो जाता है वह मिठाई नहीं पकाता ?'

इन भोले प्रदन स माता का हृदय गद्गद हो उठा। पढ़ावा क्यों नहीं देना—मैंने यह कहकर उसे अपने हृदय में लगा लिया। मुभी ने शुभी के पढ़ाने के लिए भी मिठाई मंगा दी।

जिस समय वह मिठाई पका रही थी, उस समय उसके मुँह पर संतोष के चिह्न थे मुभी के मुख पर ईर्ष्या के माता के मुख पर विनोद के और दैवता के मुख पर शोक के।

इधर कतियथ लेखकों ने कुछ कहानियों की 'पैरोही स्वरूप' भी कई सुन्दर कहानियाँ लिखी हैं। यों तो इन प्रकार की कहानियाँ हास्यप्रधान कहानियों ही कहाँ जाती हैं और इनकी शैली भी प्रायः आत्मपरक या वर्णनात्मक ही होती है परन्तु 'पैरोही' का कुछ विचारक स्वतंत्र प्रणाली भी मानते हैं। किसी प्रसिद्ध लेखक

१. विरच की सबसे छोटी कहानी यह बड़ी आती है—

'शे यात्री साप नाप रेत के टिन्डे में बड़े यात्रा कर रहे थे। बाउबीत के सिक्किनड म एक ने कहा—'मैं मूर्तों पर विरवास नहीं करता। इसका मुक्त कर होना उठा—'अचभुच। और नायक हो गया।'

की कोई प्रसिद्ध कहानी लेकर उस शैली का अनुसरण करते हुए, उसके समानांतर रह कर, हास्य की अवतारणा की जाती है परन्तु यहाँ यह स्मरण रहना चाहिए कि मोनों की कथावस्तु का स्वरूप गति, शैली, वाक्य विन्यास एवं प्रकृति में समानता होते हुए भी दोनों की विषयवस्तु में विभिन्नता रहती है। हिंदी में कविताओं की पंरोही के अवरय कई महत्त्व प्रयोग देख पड़ते हैं और फहानियों की पंरोही प्रस्तुत करने की ओर ध्यान नहीं दिया गया। श्री शारदाप्रसाद वर्मा 'भुशुभि' की एक छोटी सी पुस्तक 'चिमिरिखी ने कहा था' अक्षय्य इस विधा में उल्लेखनीय है और हममें उन्होंने कुछ प्रसिद्ध कहानियों की पंरोही सफलता के माय भी हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि रूप विधान की दृष्टि से किसी भी फहानी को पंरोही का रूप प्रदान करना सहल नहीं है और जो भी कलाकार इस विधा में प्रयास करता है वह निविवाद रूप से धन्यवाद का पात्र है अतः हम भुशु बिजी के इस प्रयासों की प्रशंसा ही करेंगे। यदि हिंदी के अन्य कथानीकार भी इस विधा में प्रयास करें तो निश्चय ही कथा साहित्य की अमिष्टि होगी लेकिन दुःख है कि स्वयं भुशु बिजी इन दिनों इस विधा में उदासीन म हैं और 'चिमिरिखी ने कहा था' के परवान उनकी अन्य कोई उल्लेखनीय कृति प्रकारा में नहीं आह। स्मरण रहे 'चिमिरिखी ने कहा था' नामक कहानी गुलेरी जी की प्रसिद्ध कहानी 'उसने कहा था' की महत्त्व पंरोही है और हममें कोई संदेह नहीं कि हास्यस्यंग्य की इतनी सुन्दर कलापूर्व अवतारणा बहुत कम फहानियों में देख पड़ती है। डॉ० मोलानाथ शो अपनी 'धीसिस हिन्दी साहित्य (१६०६-१६४६ ई०) में 'उसने कहा था' और 'चिमिरिखी ने कहा था' के कुछ प्रसंगों की तुलना भी की है तथा भुशु बिजी के प्रयोग को पूर्ण महत्त्व माना है; देखिए—

'उसने कहा था'

वह-वह शहरों का इकट गाड़ी यामा की खान का काढ़ों में जिनकी पीठ टिप गई है और कान तक पक गये हैं उनसे हमारी प्रार्थना है कि अचानक के पर्युक्त पात्रों की यानी का मरदम मगावें।'

'चिमिरिखी ने कहा था'

'प्राइमरी मद्रमों के मुदरिमों की उधान के खेड़ों में जिनकी पीठ टिप गइ है और कान तक पक गये हैं, उनमें हमारी प्रार्थना है कि विद्यविद्यालय के प्रीतिपरों लड़कों तथा लड़कियों की यानी का मरदम मगावें।'

तेर गर कर्जो है ?'

'मगरे में, धीर ले ?'

'मांसे में — यदा कर्जो रहनी है ?'

आप यहाँ पढ़नी है ?'

'आह जी यहाँ पढ़नी है, ३१ ३१५

'युनिवर्सिटी है।' ३१५ ३१ ३१५

११५ है ?'

कहानी-कला की व्यापार शिलाएँ

'अवतर्निह के घैठक में ये मेरे मामा होते हैं।
ये भी मामा के यहाँ आया हैं,
उनका घर गुरुवामार में है।

'सिविल लाइन में बंफिल के साथ।
ये मुकरिम नगर में मामा के यहाँ
रहता हैं।'

कुछ दूर आकर लड़के ने मुस्करा कर
कर पूछा—'तेरी कुन्मार्ई हो गई ?'
'—'अन् फहकर लड़की दौड़ गई
भीर लडका मुँह देखता रह गया।

कुछ दूर चलकर लड़के ने पूछा—
'आप कविता भी करती हैं ?'
'आप से सवलय ?'—फहकर लड़की
आगे निकल गई और लडका मुँह ताकता
रह गया।

'कल'—देखते नहीं, यह रेशम से
क्या हुआ साह।

'हाँ, काली तो हैं, देखते नहीं। इस
मास की 'माधुरी में मेरी एक कविता
प्रकाशित हुई है।'

राम राम यह भी फोड़ लडाई है ?
गनीम कहीं विलता नहीं

राम राम यह भी कवि-सम्मेलन है।
मिठाई-नमकीन की तो कान कहे,
किसी ने एक घूँव पानी तरु की खबर
न ली।

न मालूम कैईमान मिट्टी में लेते
रहते हैं। या पास की पत्थियों में किये

वेइमान न जाने किस ईवग्राम
में कैसे हैं कि इधर आते अर नाम तर
नहीं लेते।

नहीं साहय, शिफार के ये मझे यहाँ
कहाँ ? याद है, पारसाल नकली लडाई
के पीछे हम आप अगावरी के जिले में
शिफार करने गये थे—हाँ, हाँ—कहीं अय
आप छोटे पर सवार थे और आपका
खानसामा अच्युन्ता राखते के एक मंदिर
में जज बनाने फरे रह गया था।'—आदि

आप तो यही जल्दी बोला घड कर
आ गये, मगर यह आनन्द यहाँ कहीं,
जो रायबरेली के कवि-सम्मेलन में था,
जिसके संयोजक स्वयं सुप्रनमेल जी थे।
कितनी सुन्दर रचनाएँ थीं दुपदुप जी की
बाद-बाह, आपने भी इन्हें खूब समझया
या कि सुप्राम की चौपाइयों में टिबर
गैस का अंतर ह केराब की कु बलियों
केम याम या फाम करती है, बिहारी
वीर रस के रसिक थे।'—आदि

सत्य के कुछ पहले सृष्टि बहुत साफ हो जाती है। जन्मभर की घटनाएँ एक एक कर के सामने आती हैं—

आधी रात धीत जाने के बाद नींद हल्की आती है। दिन भर की चिन्ताएँ एक एक करके उसके सामने स्वप्न में परिणत होती जाती हैं—

बड़ीरसिंह, पानी पिशा है।

मजीरा जी सिगरेट पिशाहये।

स्वप्न चल रहा है सूबेदारनी कह रही है—मैंने मेरे को आते ही पहचान लिया। एक काम कहती हूँ। मेरे तो भाग फूट गये पर सरकार ने हम तीमियों की एक पांचरिया पलटन क्यों न बना ली जा मैं भी सूबेदार जी के साथ बली जाती—एक दिन टागेबाले का पांडा दंडबाले की दूधन के पास बिगड़ गया था। सुमने उस दिन मेरे प्राण बचाये थे—ऐसे ही इन दोनों को बचाना। यह मेरी मिशा है। सुम्हारे आगे मैं आँसू पसारती हूँ।

स्वप्न चल रहा है। चिमिरिखी की कह रही है—मैंने आप को आते ही पहचान लिया। एक काम कहती हूँ। मेरे तो भाग फूट गये, पति एम० ए० बी० ए० (मैट्रिक अपियर, घट फेल्ड) मिले पर हम अत्रलाओं को पुलिस खंसा अधिकार क्यों न दिया, जिससे हम क्वि सम्मेलनों में हूटिंग करने वालों का बिना पारेंट वेल में टूस देती। मेरे फिर परिचित आपको याद है एक बार आपने इजरायल के पाउड्रे पर मुम्हारे गिरने से बचाया था। आस वैसे ही श्रीपति जी की लाज आपको बयानी है—मेरी यदी मिशा है। आपके आगे ऐनक उतारती हूँ।

कुत्र दिन पीछे लोगों ने अरुणपारों में पढ़ा—प्रंत और धेलात्रियम—६८ की सूची—मैदान में पावों से मठ—नं ७७ सिल उइच्छस जमादार सहन्नासिंह।

दूमरे दिन समाधार पत्रों में लोगों ने पढ़ा—

बेसीगारद बिगट क्वि सम्मेलन में गला पर हो जाने से अस्तकक्ष द्रुप प्रथम भेषी के महाकवि एंजन।

‘अव्यभिच के बैठक में ये मेरे मामा होते हैं।

ये जो मामा के यहाँ आया है, उनका घर गुरुवासा में है।’

कुछ दूर जाकर लड़के ने मुसकरा कर पूछा—‘तेरी कुड़माई हो गई ?’

‘‘‘‘‘घरू कइकर लड़की बीर गई और लड़का मुँह देखता रह गया।

‘कल—देखते नहीं, यह रेशम से क्या हुआ साह।’

‘राम राम यह भी कोई लड़ाई है ?’

‘गनीम कहीं दिखता नहीं।’

‘न मालूम कहींमान मिट्टी में छोटे हुए हैं या पास की पत्तियों में दिये रहते हैं।’

‘नहीं साहब, शिखर के ये मजे यहाँ कहीं ? याद है, पारसाज नकली कड़ाई के पीछे हम आप अगामरी के जिले में शिखर करने गये थे—हाँ, हाँ—वहीं जय आप खोले पर सवार थे और आपका खानसामा अम्बुल्ला रातों के एक मंदिर में जल बदने को रह गया था।’

‘सिविल लाइन में अकिश के साथ ?’
‘ये मुबारिम नगर में मामा के यहाँ रहता है।’

‘कुछ दूर चलकर लड़के ने पूछा—
‘आप कबिता भी करती हैं ?’

‘आप से मतलब ?’—कहकर लड़की आगे निकल गई और लड़का मुँह ताकता रह गया।

‘हाँ, कबिता तो हैं, देखते नहीं। इस मास की ‘भापुरी’ में मेरी एक कविता प्रकाशित हुई है।’

‘राम राम यह भी कवि-सम्मेलन है।’

‘भिताई-नमकीन की तो क्वीन कहे, किसी ने एक बूँद पानी तक की गंधार नहीं।’

‘कईमान, न जाने किस इतनाम में कैसे है कि इपर आने का नाम तक नहीं लेते।’

‘आप तो कहीं नकली बीसा गहर कर आ गये, अगर वह आनन्द यहाँ कहीं, जो रायभरेली के कवि-सम्मेलन में था, जिसके संयोजक स्वयं तुम्हारे जे थे। कितनी सुन्दर रचनाएँ थीं दुबदुब की की बाढ़ पाह, आपने भी उन्हें खूब समझया था कि सुरदास की पीपाओं में टिपर गैस का आसर है केराब की कुइरियाँ पैरम वाम का काम करती है, विश्वी

शुबु के कुट्ट परने स्तुति बहुत माक हो जाती है । उनमर की पटनाएँ एक एक कर के सामने आती हैं-----

बजौरासिंह, पानी पिला दे ।

बहानी रात घीव जाने के बाद नींद हल्की आती है । दिन भर की चिन्ताएँ एक एक करके उसके सानने स्वप्न में परिणत होनी आती हैं-----

मजीरा जी सिगरेट पिलाइये ।

स्वप्न, चल रहा है सूबेदारनी कह रही है—वैने तेरे को आते ही पहचान लिया । एक काम कहती हूँ । मेरे ली भाग फूट गये— पर सरकार ने हम वीमियों को एक पापरिया पकटन क्यों न बना दी जो मैं भी सूबेदार जी के साथ पसी जाती—एक दिन टागेवाले का पाड़ा इशेवाले को दूकान के पास बिगाड़ गया था । तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाये थे—ऐसे ही इन दोनों को बचाना । यह मेरी मिथा है । तुम्हारे भागे में औपस पसारती हूँ ।

स्वप्न चल रहा है । चिमिरिखी जी कह रही है—मैने आप को आते ही पहचान लिया । एक काम कहती हूँ । मेरे ली भाग फूट गये, पति पम० प० वी० एक० (मैट्रिक अपियरर्स, एट फेल्ड) मिले— पर हम अबलाओं को पुलिस सेसा अधिकार क्यों न दिया, जिससे हम कबि सम्मेलनों में हूटिंग करने पासों को बिना पारेंट जेल में टूस देती । मेरे गिर परिचित आपयो याव है एक पार प्पापै हजरतगंज के बीरादे पर मुझरो गिरौ से बचाया था । आज वैसे ही भीपति जी की सात्र आपको बचानी है—मेरी यदी मिथा है । आपके भागे पिनक डतारती हूँ ।

कुट्ट दिन पीछे लोगों ने अपराधों में पड़ा—प्रॉंस और थेकजियम—६८ की सूची—मैदान में पाबों से मर—नं ७७ सिप्र राइफल्स अमादार सहनासिंह ।

दूसरे दिन समाचार पत्री में लोगों ने पड़ा—

बैलीगारद बिगट कबि सम्मेलन में गला पर्ट हो जाने से असफज द्रुप प्रथम बेणी के महाकबि संजन ।

कहानी

का

उद्देश्य

७:

जैसा कि राय कृष्णदास का कथन है "भाष्यायिका चाहे किसी लक्ष्य को सामने रखकर लिखी गई हो या लक्ष्यबिहीन हो मनोरंजन के साथ-साथ अर्थपूर्ण किसी न किसी मूल्य का उद्घाटन करती है" अतएव साहित्य के अन्य अंग उपांगों की भाँति कहानी में भी एक निश्चित उद्देश्य या लक्ष्य अवश्य रहता है और कहानीकार जिसकी पूर्ति हेतु विविध प्रयोग अपनी कहानी में करते भी हैं लेकिन उसे हितोपदेश या ईसाय की कहानियों की भाँति व्यक्त नहीं किया जाता। वस्तुतः कहानीकार जीवन के जिस लक्ष्य की ओर संकेत करता है या जो आदर्श हमारे सामने प्रस्तुत करता है उसी को उद्देश्य भी कहते हैं और प्रत्येक मूल्य कहानी में जीवन की किसी न किसी मार्मिक अनुभूति की अभिव्यंजना अपेक्षित है क्योंकि एक मात्र मनोरंजन ही कहानी का उद्देश्य नहीं है। भी प्रमाणक मापके के शब्दों में "कथा वा साध्य मनोरंजन ही नहीं मनोरंजन भी है। मनोरंजन साधन मात्र है, लक्ष्य कुछ और है। ताँ फिर और कुछ क्या है? उपदेश। समाज सुधार। राष्ट्रीयता। प्रचार। प्रेम वा। या यह सब कुछ नहीं केवल मानव मन को अधिकाधिक अर्थपूर्ण की और सुखमाही अथवा संतुष्ट बनाना।" साथ ही कहानी का उद्देश्य रस परिष्कार भी है और भी शिवनंदनप्रसाद की दृष्टि में तो "रस कविता का प्रधान गुण है, लेकिन यद्यपि रसात्मक व्यंजना का अर्थ सूत्र कहानी में भी अवश्य वर्तमान होना चाहिए फिर भी कहानी का उद्देश्य रस व्यंजना नहीं है। उसका उद्घाटन द्वारा जीवन की विभिन्न परिस्थितियों और मानवमन के विविध रहस्यों के उद्घाटन द्वारा जीवन की उभारना करना है। इसलिए कहानी में प्रासंगिक रूप से शृंगार, धीर करुण हास्य आदि सभी प्रमुख रस आ सखे हैं, पर कथा-सूत्र के विषय के मूल में अद्भुत रस ही रहता है जिसके प्रभाव से पाठकों का कर्तृत्व प्राप्त होता है। भी श्रीनेत्रकुमार का विचार है कि 'मन लगाना ता नहीं पहचान है ही पर मन

१ कथनीय कहानियाँ—भी राय कृष्णदास और भी बाबुलाल पाठक (भाग्यल पृष्ठ १)

२ आधुनिक हिंदी साहित्य—(पृष्ठ ७२)

लगा रहे। चौथा मैना में मन लगता है पर लगा नहीं रहता। एक बार मन को पकड़कर जो धरावर जीवन में जिन्दा रहते आये, वह अच्छी कहानी है। जय जय आप अकूला जायें सब तप आप उसे पढ़ें और उसे जीवन में आप शाश्वत मानने लगे। मन लगे आर मिलने दीर्घकाल तक लगा रहे उतना ही अच्छा है। 'मैक्सिम गोर्की ने कहा है कि सर्वश्रेष्ठ कहानी वह है जो छाठी की मार की तरह हृदय पर पोट करे। श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र का मत है कि 'कहानी' का अर्थ घटनाक्रम होता है, उसमें आकर्षण का विगत आवश्यक होता है, फलतः कहानी में पाठकों की कुतूहल-वृत्ति जागरित की जाती है। इसी से अंगरेजी के समीक्षक कहानी का प्रथम तत्त्व 'कुतूहल' (एन्जिमेंट आन्ड सस्पेंस) को ही मानते हैं। यह ठीक भी है। किसी कहानी के पढ़ने से 'आगे क्या हुआ या होनेवाला है' की जिज्ञासा के रूप में कुतूहल धरावर बना रहता है। कविता को भौति किसी विशेष भाव में समाप्त रखना उसका प्रयोजन नहीं, किसी निर्वच की मति नूतन ज्ञानोपलब्धि इसका फल नहीं उसका मुख्य उद्देश्य होता है रंजन। इस रंजन के लिए वह कुतूहल का सहारा नहीं लेती है। वह अनुभवनात्मक चित्तवृत्ति की परितुष्टि करती है। कविता के द्वारा भी रंजन होता है, पर रंजन वमका गौण लक्ष्य होता है। 'रमण' के अनंतर रंजन उसमें भी होता है, किन्तु द्वितीय स्थानीय है कहानी में रंजन प्रथम स्थानीय है। विश्वरंजन को विशेषता कहानी में सबसे अधिक होती है।" साथ ही रोमन आ फाउलन Sean O Faolain ने I think it is safe to say that unless a story makes this suitable comment on human nature on the permanent relationship between people Their variety their expedience it is not a story in modern sense ' नामक कथन द्वारा मान्यता और मानव मूल्यों की व्याख्या न करनेवासी, तथा मनुष्य के शाश्वत भावों, अनुभूतियों और समस्याओं पर प्रकाश न डालने वाली कहानियों को किसी भी भौति आधुनिक कहना उचित नहीं समझा है लेकिन माय ही कलात्मक दृष्टि से कहानी में किसी भी उद्देश्य की अनुभूति अत्यंत परावृत्त में हानी चाहिए अन्यथा कहानी कहानी न रहकर प्रवचन और बातों बन जाएगी। साथ ही कहानी के उद्देश्य में जीवन-मीमांसा तो नहीं परन्तु ही जीवन के प्रति एक दृष्टिकोण की मूर्खी अथवा दृष्टिगोचर हावी है आर चरित्र-प्रधान कहानियों में ता स्पर्श चरित्र-चित्रण के रूप में ही या तो मानसिक विश्लेषण किया जाता है या फिर क्षणिक के जीवन सम्बन्धी अपने दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति की जाती है। इधर आधुनिक कहानियों में ता उद्देश्य के अंतर्गत मान्यमानिक अनुभूति ही प्रधान रूप से दृष्टिगोचर होती

१ द्विती का सामयिक साहित्य श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र (पृष्ठ १४८)

२ The Short Story by Sean O Faolain Page 151

कहानी

का

उद्देश्य

७:

वैसा कि राय कृष्णदास का कथन है "आख्यायिका चाहे किसी लक्ष्य को सामने रखकर लिखी गई हो या लक्ष्यबिहीन हो मनोरंजन के साथ-साथ अवश्य किसी न किसी सत्य का उद्घाटन करती है"। अतएव साहित्य के अन्य अंग अंगों की भाँति कहानी में भी एक निश्चित उद्देश्य या लक्ष्य अवश्य रहता है और कहानी फिर जिसकी पूर्ति हेतु विविध प्रयोग अपनी कहानी में करती भी है लेकिन उसे हित्वा पदेशा या ईसप की कहानियों की भाँति व्यक्त नहीं किया जाता। वस्तुतः कहानीकार जीवन के विमल लक्ष्य की ओर संकेत करता है या जो आदर्श हमारे सामने प्रस्तुत करता है उसी को उद्देश्य भी कहते हैं और प्रत्येक सफल कहानी में जीवन की किसी न किसी मार्मिक अनुभूति की अभिव्यञ्जना अपेक्षित है क्योंकि एक मात्र मनोरंजन ही कहानी का उद्देश्य नहीं है। भी प्रमाकर माचये के शब्दों में "क्या वा साध्य मनोरंजन ही नहीं मनोरंजन भी है। मनोरंजन साधन मात्र है, लक्ष्य बुद्ध और है। तो फिर और कुछ क्या है ? उपदेश ! ममता सुधार ! राष्ट्रीयता ! प्रचार ! कोइ वाद ! या यह सब कुछ नहीं केवल मानव मन की अधिकाधिक अतमु ली आर सुखमवाही अवाग संरक्षण बनाना ?" साय ही कहानी का उद्देश्य रस परिपाक भी नहीं है और भी शिवनन्दनप्रसाद की दृष्टि में तो "रस कविता का प्रधान गुण है, लेकिन यद्यपि रसात्मक व्यञ्जना का अंतः सूत्र कहानी में भी अवश्य यत्नमान होना चाहिए फिर भी कहानी का उद्देश्य रस व्यञ्जना नहीं है। उसका उद्देश्य मानव जीवन की विभिन्न परिस्थितियों और मानवमन के विविध रहस्यों के उद्घाटन द्वारा जीवन की व्याख्या करना है। इसलिये कहानी में प्रासंगिक रूप से शृंगार, और करुण हास्य आदि सभी प्रमुख रस आ सकते हैं, पर कथा-सूत्र के विफल के मूल में अद्भुत रस ही रहता है जिसके प्रभाव से पाठकों का जीवन ज्ञान प्राप्त होता है। भी जैनेन्द्रकुमार का विचार है कि 'मन लगना तो बड़ी पहचान है ही पर मन

१ इण्डियन कहानियाँ—पी राय कृष्णदास और भी बाबुलाल पाठक (भासुग पृष्ठ १)

२ भाबुलाल दिखी साहित्य—(पृष्ठ ७१)

लग रहे। तोता मैना में मन लगाता है पर लगा नहीं रहता। एक बार मन को पकड़कर जो बराबर जीवन में जिन्दा रहते आये, वह अन्धो कहानी है। जब जब आप झुंझा जायें तब तब आप उसे पढ़ें और उमे जीवन में आप शारद्वत मानने लगें। मन झगे और भित्तने दीर्घकाल तक लगा रहे चतना ही अच्छा है।' मैक्सिम गोर्की ने कहा है कि सर्वश्रेष्ठ कहानी वह है जो लाठी की मार की तरह हृदय पर पोट करे। श्री विरवनामप्रसाद मिश्र का मत है कि 'कहानी' का लक्ष्य घटनाचक्र होता है, उसमें आकर्षक का विधान आवश्यक होता है, फलतः कहानी में पाठकों की कतूहल-युक्ति जागरित की जाती है। इसी से अँगरेजी के समीक्षक कहानी का प्रधान तत्त्व 'कतूहल' (एन्जिमेंट भाव संस्पेंस) को ही मानते हैं। यह ठीक भी है। किसी कहानी के पढ़ने से 'आगे क्या हुआ या होनेवाला है' की जिज्ञासा के रूप में कतूहल पयापर जमा रहता है। कविता को मौति किसी विशेष भाव में रमाए रखना बसका प्रयोजन नहीं, किमी निर्वच की सति नूतन ज्ञानोपलब्धि उमका फल नहीं उसका मुख्य उद्देश्य होता है 'रञ्जन'। इस रञ्जन के लिए वह कतूहल का सहारा नहीं लेनी है। वह अनुभवनात्मक चित्रयुक्ति की परिसुष्टि करती है। कविता के द्वारा भी रञ्जन होता है, पर रञ्जन उसका गीण लक्ष्य होता है। 'रमण' के अनंतर रञ्जन उसमें भी होता है किन्तु द्वितीय स्थानीय है कहानी में रञ्जन प्रथम स्थानीय है। विद्वान् रञ्जन को विशेषता कहानी में सबसे अधिक हावी है।" साथ ही शोन ओ फाउल सेन Sean O' Faolain ने I think it is safe to say that unless a story makes this suitable comment on human nature on the permanent relationship between people Their variety their expediness, it is not a story in modren sense नामक कथन द्वारा मान्यता और मान्य मूल्यों की व्याख्या न करनेवाली, तथा मनुष्य के शाश्वत भावों, अनुभूतियों और समस्याओं पर प्रकाश न डालने वाली कहानियों को किसी भी मौति आधुनिक कहना उचित नहीं समझ है लेकिन साथ ही क्लासिक दृष्टि से कहानी में किसी भी उद्देश्य की अनुभूति अत्यंत परोक्षरूप में हानी चाहिए अन्यथा कहानी कहानी न रहकर प्रवचन और बातां वन जाएगी। साथ ही कहानी के उद्देश्य में जीवन-भीमांसा तो नहीं परन्तु ही जीवन के प्रति एक दृष्टिकोण की मौकी अवश्य दृष्टिगोचर हाती है और परित्र-प्रधान कहानियों में तो स्पष्ट परित्र-चित्रण के रूप में ही या तो मानसिक विश्लेषण किया जाता है या फिर दैखक के जीवन सम्बन्धी अपने दृष्टिकोण की अभिव्यंजना की जाती है। इपर आधुनिक कहानियों में तो उद्देश्य के अंतगत मनोपज्ञानिक अनुभूति ही प्रधान रूप से दृष्टिगोचर हाती

१ हिंदी का सामयिक साहित्य श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र (पृष्ठ १४६)

है अतः आधुनिक कहानियाँ मनोवैज्ञानिक धरातल पर ही पूर्णतः प्रतिष्ठित रहती हैं।

यहाँ यह भी स्मरण रहना चाहिए कि भेद्युक्त कृतियों में कभी भी किसी वाचन-विशेष का प्रचार उचित नहीं माना जाता है अतः कहानियों को आदर्शवाद और यथार्थवाद की संकीर्ण परिधि में बद्ध कर देना उपयुक्त नहीं है परन्तु बहुत से विचारकों ने साहित्य-सृजन के लक्ष्य पर विचार करते समय उक्त दो पाठों की चर्चा की है अतः संक्षेप में उन पर प्रकाश डालना अप्रासंगिक न होगा। जैसा कि डॉ० भगीरथ मिश्र ने लिखा है वह धारणा जिससे प्रेरित होकर साहित्यकार ऐसे चरित्र ब्रजवा येसी परिस्थितियों का चित्रण करता है जो मानव समाज के लिए अनुकरणीय है (यह आवश्यक नहीं कि वेसे चरित्र और परिस्थितियाँ सम्पूर्ण रूप में लोक में फैली और सुनी जायें), साहित्य में आदर्शवाद कहलाती है। अतः वह धारणा जिससे प्रेरित होकर साहित्यकार नित्यप्रति ऐसे सुने, मले घुरे चरित्रों का चित्रण करता है यह अनिवार्यतः यह ध्यान नहीं रखता कि ये चरित्र य परिस्थितियाँ मानव समाज की मलाई होंगी या घुराह, साहित्य में यथार्थवाद का प्रतिष्ठा करने का उद्देश्य रखा है * अतः आदर्शवादी कहानियाँ मानवीय जीवन की उच्च संभावनाओं पर ही आश्रित होती हैं। अतः इस प्रकार की कहानियों के रचयिता के सामने जीवन कैसा हो, यही उद्देश्य रखा है। परन्तु चूंकि 'यथार्थवाद का मूल सिद्धांत है अस्तु जो उसके यथावत रूप में चित्रित करना। न तां उन फलपना के द्वारा विचित्र रंगों से अनुरजित करना और न किसी धार्मिक या नैतिक आदर्श के विषे फल झूटकर उपस्थित करना' अतः यथावतानी कहानीकार का लक्ष्य या उद्देश्य जीवन का वास्तविक प्रतिबिम्ब चित्रित करना ही रहता है और उठों कि आदर्शवादी कहानियाँ हमें आर्मांकित कर सकती हैं या हमारे मानस में कर्मक उत्पन्न कर सकती हैं परन्तु हममें अपनापन नहीं भर सकती तथा न उनके पात्रों को ही हम अपने निकट अनुभव कर सकते हैं यहाँ यथार्थवादी कहानियाँ हमें जीवन की यथार्थता से परिचित कराने में पूर्ण सफल रहती हैं। स्मरण रहे कि अनेक की हम उक्त द्वारा कि साहित्य यही है जो यथार्थ का सत्त्वा अपस उठा कर हमें पेश करता है" कहानियों का यथावतानी होना उपयुक्त माना जा सकता है तथा इसमें

१ हिंदी काव्य धारणा का इतिहास—डॉ० मनीरम मिश्र (पृ० ४२०)

२ आधुनिक साहित्य—डी० नरसिंहनारे बाबुपेयी (पृ० १६१)

३ हिन्दी साहित्य—डॉ० इन्दारीप्रसाद द्विवेदी (पृ० ४२०)

४ साहित्य का प्रथम और प्रथम—डी० नैनसिंहनारे (पृ० १६)

कोई मरिह नहीं कि यथार्थवादी कहानियों में वास्तविकता ही विशेष रूप से रखती है और "यथार्थवाद के अंतर्गत भी एक आदर्शवाद ही है" तथा आदर्शवाद और यथार्थवाद दोनों ही यथासंभव चित्रण करते हैं। जिसे हम यथासंभव कहते हैं, वह जीवन की मापारणता का चित्रण हमारे सम्मुख उपस्थित करता है और जिसे हम आदर्शवादी साहित्य कहते हैं, वह जीवन के असाधारण व्यक्तिगत की मूर्ति परता है किन्तु है वह भी यथार्थ नामक विचारों द्वारा अतिरिक्त समीक्षणों ने यथासंभव की श्रेष्ठता ही प्रतिपादित की है किन्तु यथासंभव का विरोध करने वाले विचारकों का भी नितान्त अभाव नहीं है।

स्वर्गीया सरोजनी नायक ने एक स्थल पर कहा है कि "यथार्थवाद ही सत्य कुछ नहीं है। हमें उससे ऊपर उठना चाहिये।" चूंकि आधुनिक कहानीकारों ने विवाहित जीवन की व्यथता और स्त्री पुरुष के यौन सम्बन्ध की स्वच्छन्दता पर जोर देते हुए यथासंभव चित्रण के नाम पर वास्तविकता का अर्थ ही त्यों ही चित्रित करना प्रारंभ कर दिया। चूंकि स्वाभाविक ही इस प्रकार के चित्रों में वैयक्तिकता और विश्वासिता की प्रधानता भी देख पड़ने लगी अतः उनमें मानव की आत्मानन्ति वैयक्तिक सजगता और शारीरिक स्वास्थ्य की मजिल तक पहुँच पान की क्षमता का अभाव ही रहा, यहाँ यह भी स्मरणीय है कि अमेरी के प्रतिष्ठित कहानीकार जेम्स जोयस ने हमें किन्ही सिद्ध करने वाले व्यक्ति ने पूछा कि क्या वे अपनी कहानियों के पात्रों को कुछ उसी रूप में चित्रित करते हैं जिस रूप में वे जीवन में देख पाते हैं ? इस पर उन्होंने कहा कि हाँ इससे सर्वथा भिन्न है और काँट-ना साहित्यकार जैसा अपनी आँसों से देखता है कुछ वैसा ही साहित्य में प्रदर्शित नहीं करता बल्कि अपनी कल्पना और प्रतिभा का योग लेकर अपने विषय के अनुरूप किन्ही न किन्ही रूप में उनका संस्कार करके देता है। प्रेमचंद ने भी इस तथ्य का स्वीकार किया है और उनका कहना है कि "कला दीव्यता का यथासंभव पर यथार्थ हावी नहीं। हमें पूरी यकीन है कि यथासंभव न हाते हुए भी यथासंभव माहूम हो। उनका मापदंड भी जीवन के मापदंड से अलग है जो जीवन में बहुधा समाप्त अंत तक समय ही जाता है जब यह पालनीय नहीं होगा। जीवन किन्ही का दावी नहीं है, उनका मुग्य दुग्य, हानि-नाम, जीवन-मरण में कोई क्रम, कोई संघर्ष नहीं जाना जाना कम ही कम

१ साहित्य साधना और समाज—३ महीरव मिश्र (पृष्ठ १६६)

२ साहित्य साधना और समाज—१० महीरव मिश्र (पृष्ठ १६६ १६७)

३ When you build a story around a character do you use the character about as you find him in real life?

Practically never things and people as they are in real life wont do for short stories They are only starting points spring board

—A Manual of Short Story Art : A. M. Clean Clark pp. 118

मनुष्य के लिए वह अद्येय है। लेकिन क्या-साहित्य मनुष्य को रक्षा हुआ जगत् है और परिमित होने के कारण संपूर्णतः हमारे सामने आ जाता है और यहाँ पर हमारी मानवी न्याय बुद्धि का, अनुभूति का अधिक्रमण करता हुआ पाया जाता है, हम उसे दृष्ट करने के लिए तैयार हो जाते हैं। क्या मैं अगर किसी को सुख प्राप्त होता है तो इसका कारण बताना होगा, दुःख भी मिलता है तो उसका कारण बताना होगा। यहाँ कोई चरित्र मर नहीं सकता जब तक कि मानव न्यायबुद्धि उसकी मौत न मँगी। सुष्ण को जनता की अज्ञानता में अपनी हर एक कृति के लिए जबाब देना पड़ेगा। कला का रहस्य भाँति है, पर वह भाँति जिस पर यथार्थ का आवरण पड़ा हो।^१

इस फलितपथ विचारकों ने तो मध्यवर्ती मार्ग की प्रशंसा करना ही उपयुक्त समझा और इसीलिए प्रेमचंद ने यथार्थानुसृत आधारवाद का समर्थन करते हुए एमी कहानी को उत्तम माना है जिसमें यथार्थ और आधार दोनों का ही समन्वय रहता है। यों तो वैनैन्डर जैसे विचारक भी इस उक्ति द्वारा कि "साहित्य इस प्रकार आधार को यथार्थ से और यथार्थ को आधार से जोड़ता और जोड़ता रहता है"^२ तथा डॉ० मगीरय मिश्र जैसे निष्णात समीक्षक के इस मतानुसार कि "साहित्य आधार और यथार्थवाद दोनों ही को अपनाये। साहित्य का भवन यथार्थवाद की नींव पर खड़ा हो, पर उसके विकास, प्रसार और ऊँचाई के लिए आधारवाद का विस्तृत और अनुसृत आधार रहे"^३ यही भास होता है कि अधिकतर आलोचक यथार्थ-मुखी आधारवादी साहित्य को ही सर्वजन सुपम, सधमान्य तथा स्वहितकारी मानते हैं परन्तु यदि विचारपूर्वक देखा जाए तो इस प्रकार का यथार्थानुसृत आधारवादी दृष्टि कोण फलित ही किसी कहानी में दृष्टिगोचर होता ही और इसलिये हमारी दृष्टि में तो कहानियों को किसी भी धातु विक्षेप की संकीर्ण परिधि में घट्ट घेरना ही उचित नहीं है। Draw life to life and your moral will draw itself अथवा मनुष्य को मनुष्य के रूप में अंकित किये शिवा आप ही उद्घमन्त होगी नामक दृष्टिकोण ही कहानीकार का होना चाहिए और इस प्रकार जैसा कि स्वयं भी रबीन्द्र नाम ठाकुर ने कहानी का उद्देश्य पूँछे जाने पर कहा था 'कहानी लिखने का उद्देश्य कहानी लिखना है। मैं कहानी इसलिये लिखता हूँ कि कहानी लिखने की मेरी इच्छा होती है किसी विशेष अभिप्राय से कहानी नहीं लिखी जाती—साहित्य न तो विज्ञान ही है और न धर्मशास्त्र। यदि कुछ निर्विष्ट नियमों के अनुसृत ही पात्रों का चरित्र-चित्रण उममें किया गया तो वे चित्र प्राणहीन ही होंगे। ही मरणा है ये

१ बुद्ध विचार—वी प्रेमचंद (पृष्ठ ६५)

२ साहित्य का धर्म और प्रय—पी जेम्स इ कुमार (पृष्ठ २२)

३ हिन्दी नाम्य पाठ्य का इतिहास—डॉ० मगीरय मिश्र (पृष्ठ ६२० व ३)

आकर्षक हा लेकिन उनसे हम जीवित विद्व का आदर्श न देख पाएंगे।' डॉ राम रतन मटनागर का तो यह कहना है कि 'कहानी एक कला है। कला का सर्वोत्कृष्ट रूप यह है जहाँ वह प्रतिपादित वस्तु या लक्ष्य की ओर संकेत करती है।'¹ अतः भी विनयमोहन शर्मा के शब्दों में 'कहानी का उद्देश्य सांख्यिक आनन्द प्रदान करना है और यह आनन्द तभी प्राप्त किया सकता है, जब हम जीवन के सत्य के साथ 'शिव' तक भी पहुँच सकें।'² भी रामकुमार वर्मा ने भी कहानी के उद्देश्य पर विचार करते हुए लिखा है कि 'उद्देश्य से मेरा तात्पर्य जीवन की किसी विशेष दशा के चित्रण से है। कई समालोचकों का ध्यान है कि कहानी केवल कला के लिए ही लिखी जानी चाहिए। उनमें उद्देश्य अथवा उपदेश की आवश्यकता नहीं है। कला का विकास ही उसका विकास है, यह बात सर्वांग में सत्य नहीं है। कला का विकास करना भी तो कहानी का उद्देश्य होना चाहिए। ऐसी स्थिति में यदि कहानी कला के विकास का ध्यान सामने रखते हुए जीवन की विशेष घटनाओं का उल्लेख करे तो इसमें हानि नहीं घन लाभ ही होना चाहिए। अतएव जब कोई कहानी लिखी जाय तो लेखक को इस बात की चिन्ता न होनी चाहिए कि मैं इस कहानी को किसी उद्देश्य से लिखूँ। पर यह ध्यान होना चाहिए कि मैं इस कहानी को कला का रूप देता हुआ कहीं तक जीवन के अंगों में घटा सकता हूँ। यही कहानी का उद्देश्य होना चाहिए।'³ इनमें कोई स्पष्ट नहीं कि डॉ० रामकुमार वर्मा की विचार धारा टाकस्टाय के इस मत के अनुरूप ही है कि कला केवल आनन्द ही नहीं, मानवता की एकता के मापन के रूप में वह व्यक्ति तथा मानवता के कल्याण के लिए मानव-मात्र में एक ही प्रकार की भावनाओं की उत्पत्ति तथा विकास के लिए आवश्यक है।⁴

आधुनिक कहानी का स्वरूप बर्गीकरण और उमड़े विधायक तत्त्वों पर विचार करते समय इस बात पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए कि कहानी-कला निरन्तर विकसित होती रही है और समयानुसार उनमें परिवर्तन तथा परिवर्तन भी होते रहे हैं जिससे कि यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यापक रूप में वह अपने विकास पर ही है परन्तु महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह भी है कि क्या किसी भी कहानी को

१ प्रथम प्रश्निका—डा० रामरतन मटनागर (पृष्ठ ८१)

२ इच्छिबोध—डॉ० विनयमोहन शर्मा (पृष्ठ १२)

३ मासिक समाजोचना—डा० रामकुमार वर्मा (पृष्ठ ८६)

४ And above all it is not pleasure but it is mean of union among men, join us together in the same feelings and indispensable for the life and progress towards well-being of individuals and humanity."

सफलता असफलता इन्हीं आधार शिलाओं पर निर्भर है ? इसमें कोई संदेह नहीं कि लगभग सभी कहानियों में क्यावस्तु, पात्र और खरित्र चित्रण, कथोपकथन, बाता परण, शैली और उद्देश्य नामक तत्त्व आवश्यक पाए जाते हैं और ये कहानी के आकर्षण की निरिषत रूप से वृद्धि भी करते हैं लेकिन क्या कहानीकार के लिये इनमें ज्ञान होना आवश्यक है। डा० कन्हैयालाल 'सहल' के शब्दों में "कहानी के रचना तंत्र को पढ़कर कहानीकार नहीं बनते हैं—जीवन की अनुभूतियों से ही कहानीकार बनते हैं।" इस प्रकार विचारियों की सुविधा के लिए और कहानी-साहित्य का मर्म समझने के लिए ये तत्त्व उपयोगी अवश्य सिद्ध हो सकते हैं परंतु भी जैनेन्द्रकुमार की दृष्टि में "शरीर-बिज्ञान का शास्त्र जाने बिना भी लोग पिता बन जाते हैं—टेकनिक जाने बिना भी उसी तरह कहानी लिखी जा सकती है। वास्तव में जो टेकनिक जानता है वह कहानी नहीं लिख सकता। कहानीकार के पाम यदि टेकनिक है तो वह उसी की है।" वस्तुतः साधारण पाठक तो कहानी की टेकनिक या कला में अनभिज्ञ ही रहता है और वह तो केवल यही देखता है कि जिस वस्तु का अध्ययन कर रहा है उसके दृश्य पर क्या प्रभाव पड़ता है। पाठ्यात्म्य समीक्षक हेनरी डबसन ने तो—"Singleness of aim and singleness of effects are there fore the two great cannons by which we have to try the value of a short story as a piece of art. नामक उक्ति द्वारा सरल और भेद्युक्त कहानी में एकध्येयता तथा प्रभाव की एकता को ही आवश्यक माना है तथा यदि कोई कुराख कहानीकार इन दो बातों को ध्यान में रखकर अपनी कृति पर निर्माण करता है तो कोई आश्चर्य न होगा कि उपरिलिखित छ तत्त्व आपकी आप उसमें आ जाएंगे। इस प्रकार जैसा कि डा० लक्ष्मीनारायण लाल ने लिखा है— "जिस कहानीकार की अनुभूति, संवेदना, जितनी गहरी और महान होगी, उसकी कहानी उतनी शायदश ही और जिस कहानीकार का उद्देश्य, उसका व्यक्तित्व जितना महान होगा उसकी कहानी उतनी ही महान होगी।"

